देवादिदेवमहादेवप्रणीत-

धन्वन्तरितन्त्रशिक्षा

खेमराज
श्रीकृष्णदास
प्रकाशन
बम्बई

॥ श्रीहरिः ॥

देवादिदेवमहादेवजीप्रणीत-

धन्वन्तरितन्त्रशिक्षा

मुरादाबादनिवासी कन्हैयालालमिश्र कृत

हिन्दीटीकासहित

खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन
बम्बई

संस्करण : फरवरी २०१७ संवत् २०७३

मूल्य : १०० रुपये मात्र

मुद्रक एवं प्रकाशक:
खेमराज श्रीकृष्णदास,™
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
मुंबई - ४०० ००४.

Printers & Publishers :
Khemraj Shrikrishnadass Prop: Shri Venkateshwar Press, Khemraj Shrikrishnadass Marg, 7th Khetwadi, Mumbai - 400 004.

Web Site : http://www.Khe-shri.com
Email : khemraj@vsnl.com

Printed by Sanjay Bajaj For M/s.Khemraj Shrikrishnadass Proprietors Shri Venkateshwar Press, Mumbai-400 004, at their Shri Venkateshwar Press, 66 Hadapsar Industrial Estate, Pune 411 013

SRI MAHADEVA'S

DHANVANTRI TANTRA
SHIKSHA

TRANSLATED
BY

PANDIT KANHAIYALALL MISHRA
OF
MORADABAD

KHEMRAJ SHRIKRISHNADASS
PRAKASHAN
BOMBAY.

समर्पण

स्वर्गवासी ज्येष्ठ सहोदर बलदेवप्रसादजी मिश्र !

कई मास हुए कि तुम हम लोगोंका माया मोह छोडकर इस जन्म के लिये यहां से चले गये। तुम्हारा स्मरण आते ही हृदयमें शोकका वेग उत्पन्न हो जाता है। अन्त समय तुमने ईश्वरका नाम लेकर गंगाजल पान किया था, इससे निश्चय है कि तुम्हारा जड़ देह बंधन सदाके लिये टूट गया है। तुम पूर्ण शांति निकेतन के अधिकारी हो गये हो। शास्त्र में स्पष्ट ही कहा है कि, "यच्चित्तस्तन्मयो मर्त्यो गुह्यमेतत् सनातनम्" अथवा 'यं यं वापि स्मरन् भावं त्यजत्यंते कलेवरम्। तं तमेवतीति'। अतएव इस बात में कोई भी संदेह नहीं है। तुम्हारी अन्त कालीन अवस्था का विचार करके शरीर रोमाञ्चित और हृदय वैराग्यसे पूर्ण हो जाता है वमन होने के कुछ देर पीछे ही तुम अचेतन हो गये थे भइया ! वह दशा याद आकर हृदय को व्याकुल कर देती है। तुम्हारी मृत्यु से कुछ दिन पूर्व कोई कटु वचन तुमको कह दिया था, उस कटु वचनका अनुताप आज तक हृदय को छीले डालता है। कभी कभी उसी अनुतापरूपी धब्बे को धोनेके लिये नेत्रोंसे आंसू गिरा करते हैं। क्या कहें? वह पछतावा किसी प्रकार नहीं जाता। तुमने संसार को क्या देखा भाला, क्या छत्तीस वर्षमें ही सब कुछ देख लिया? इस नाशवान् संसार में अमर तो कोई भी नहीं है संसार की, गति ही ऐसी है। यह सब जान वा बूझकर भी मनमें शांति नहीं होती घर द्वार सब वही हैं, परंतु आज तुम्हारे विना सूनेसे ज्ञात होकर काट खानेको दौडते हैं. परमपूजनीय, श्रीमाताजी तुम्हारी याद के आनेसे विह्वल होकर शोक पारावार में गोते खाने लगती हैं, हम दोनों भ्राता भी दिन रात तुम्हारे वियोगजनित शोक संतापमें ग्रसित रहते हैं। सुभद्रा, रामदेवी तो प्रति-क्षण तुम्हारी याद कर करके जल धाराकी सदृश अश्रुधारा बहाती रहती हैं। प्रभा, तारा, चन्दा, सावित्री दिनरात "मण्डीमामा ! मण्डीमामा" कहकर तुमको स्मरण करती हैं। जगदीश का भी यही हाल है, तुम्हारे विना इन बालकोंकी अब अत्यन्त शोचनीय दशा होगई है। तुम्हारा गौर वर्ण, सुंदर व छटादार वदन, चौडा माथा, पद्मपलासलोचन, मधुर बोल दिनरात याद आया करते हैं। हम सब बडे ही अभागी हैं, जो तुमसे भ्रातृरत्नको पाकरके खो दिया।

तुम मायारहित व्यवहारके द्वारा इस जीवनके स्थूल बंधनको तोड़कर परम शांतिमें चले गये, अतएव पूजनीय हो। इसी कारणको मानकर यह "धन्वन्तरि-तंत्रशिक्षा" पुस्तकरूपी पुष्प भक्तिका उपहारस्वरूप तुमको समर्पण किया गया अवश्य इस पुष्पकी सुगंध से शतशत नारियोंके विकल हृदयमें शांतिका संचार होगा। भइया ! इस पुष्पको सदैव अपने पास रखकर मुझ सहोदरपर अनुग्रह करना। ईश्वरसे प्रार्थना है कि, यह प्रसून तुमको नंदन वनके समान आनंद देनेवाला हो।

फाल्गुन कृष्ण १३ बुधवार
संवत् १९६२
२१-२-६ ई.
(शिवरात्रि)

तुम्हारे दुःखसे दुःखी-
कन्हैयालाल मिश्र
मोहल्ला-दिनदारपुरा,
मुरादाबाद (सिटी)

लेहु अब अपनेको गोपाल।
तुमरोइ सुजस तुम्हारेहि अर्पन, काट देहु जग जाल॥ १॥
अंधकार दिखरात चहूँ दिशि, भय उपजावत भौन।
विन तुमरे मामा के जिय की, जरन मिटावै कौन॥ २॥
सूनो गेह देह सूनो सो, सोनो नेह सनेह।
व्याकुल करत रात दिन आंखै, बरस अश्रु जलमेह॥ ३॥
कब विधु वदन देखिहौं बहुरो, सुख सों कण्ठ लगाय।
कब निज जीवन सफल मानिहौं, गोद खिलाय खिलाय॥ ४॥
कहों कहा विनवत हों एही, मोहि न कौन की आश।
दास जान पद पदम आपने, दीजे वेग निवास॥ ५॥
यह उपहार दयानिधि प्यारे, ग्रहण करो सुख पाय।
दुखित आकुलित शोकित मामा, विनवत हाहा खाय॥ ६॥

विनीत निवेदक-
कन्हैयालाल मिश्र।

भूमिका

"यद्गृहे निवसेत्तन्त्रं तत्र लक्ष्मीः स्थिरायते ।
राजद्वारे श्मशाने च सभायां रणमध्यतः ।।
निर्जने च जले घोरे श्वापदैः परिभूषिते ।
माहात्म्यात्तस्य देवेशि चमत्कारी भवेत्प्रिये ।।"

उस सच्चिदानन्द करुणावरुणालय आनन्दकन्द व्रजचन्द के चारु चरणोंमें वारंवार नमस्कार है कि जिनकी कृपाकरनेसे मूक वाचाल और पंगुगण पर्वतों पर आरोहण कर जाते हैं। यह उसीकी महिमा का विकाश है कि, आजकल संपूर्ण भारतवर्ष में संस्कृत विद्याके प्रचार की ध्वनि प्रतिध्वनित होकर सनातन-धर्मावलंबियों को प्रमुदित कर रही है।

भगवान् भूतनाथ श्रीमहादेवजीने कलियुग के बीच संसारी जीवों को शक्तिहीन, विद्याहीन और धनहीन विचार कर तंत्रशास्त्र को प्रगट किया। तंत्र शास्त्रके पठन पाठन और मनन करनेसे सिद्धि अवश्य ही प्राप्त हो जाती है। जो कार्य सहस्रशः व्रत करने पर भी सिद्ध नही होता वही कार्य तंत्र-शास्त्र की केवल एक क्रिया से ही सरलतापूर्वक सिद्ध हो सकता है। परंतु प्रत्येक अनुष्ठान और प्रत्येक साधन में मनन और शब्दों का ठीक ठीक उच्चारण तथा विधि को भली-भांति से जानने की अत्यन्त ही आवश्यकता है। आजकल के दुराग्रही लोग किसी क्रिया को भी भली-भाँति से नहीं सीखते और अल्पकालमें ही सिद्ध बन जाना चाहते हैं। अब आप ही विचार कीजिये कि ऐसे महाशयोंको किस प्रकार सिद्धि प्राप्त हो सकती है

तांत्रिक विषयोंके सिद्ध न होने में दूसरा एक विघ्न यह भी है कि लोभी पापी संतापी और वर्णसंकर पुस्तकविक्रेता खाक धूरि को एकत्र करके उसको ही किसी बड़े तंत्र के नाम से प्रकाशित करते और तांत्रिक लोगों को धोखा देकर ठगते हैं. पाठकगण ऐसी पुस्तकों की विधि के अनुसार कार्य करते हैं और अंत में निराश होकर तंत्रशास्त्र को मिथ्या समझते हैं। पाठकगण ! आप लोग देखभालकर किसी विधि को किया करें और भलीभांति से स्मरण रखें कि तंत्रशास्त्र त्रिकालमें सत्य है, परंतु मिथ्यावादी विद्यादिग्गज परम चेष्टू भैंसासुर के भ्राता वह क्रूरकर्मकारी पापीलोग ही झूंठे हैं—जो अपने को बढाने के लिये वृथा डींग मारा करते और जाली पुस्तकों को प्रकाशित करके जगवंचक की पदवी पाते हैं। कलिकाल की कैसी कठिन कुचाल है ? कि आजकल मिथ्या वैद्य, मिथ्या-

शास्त्री मिथ्या ज्योतिषी मिथ्या ऐतिहासिक, मिथ्यापंडित, मिथ्याआचार्य बहुत से प्रगट हो गये हैं। पाठक महाशयोंसे निवेदन है कि इस प्रकार के जगवंचक मसीजीवियों के किसी यंत्र मंत्र तंत्र में कोई बात अशुद्ध लिखी हो तो वह दोष शास्त्र का न समझकर उपरोक्त कुलकलंकों का ही समझें।

तान्त्रिक धर्म को ग्रहण करने के पहिले योग्य गुरु के प्राप्त करने की आवश्यकता है विना गुरुके कोई कार्य सिद्ध नही होता। पुस्तक तो उपलक्ष-मात्र है इस कारण आप लोग गुरु की खोज कर दीक्षा ग्रहण करें तब अवश्य ही मनोकामना सिद्ध होगी।

प्रस्तुत पुस्तक में तांत्रिक लोगों के हितकी बहुत सी बातें हैं और गृहस्थी लोग भी पढ़कर लाभ, उठा सकते हैं, अतएव इसका प्रकाशित करना उचित समझकर कार्य का आरंभ किया और आज वह शुभ दिन उपस्थित है कि आप लोग हमारी प्रकाशित "धन्वन्तरितंत्रशिक्षा" को पढ़कर लाभ उठा रहे हैं।

जो महाशय तंत्रशास्त्र पर विशेष श्रद्धा रखनेवाले और देवीके परम भक्त है यदि उनको कोई अनुष्ठान कराना हो तो हम विधिपूर्वक पूर्ण कर सकते हैं और यदि योग्य गुरु की आवश्यकता हो तो उसको भी बता सकते हैं परंतु यह कार्य केवल तांत्रिक लोगों के लिये किया जा सकता है दूसरे सम्प्रदा-यवालोंके लिये नहीं।

उपसंहारमें निवेदन है कि इस ग्रंथको छापकर प्रकाशित करने और समूल्य वितरण के संपूर्ण अधिकार परमोदार गुणग्राहक विश्वविख्यात श्रीमान् सेठ खेमराज श्रीकृष्णदासजी को दिये गये हैं: उन्होंने अपनी अमोघ कृपा से इसको निज "श्रीवेंकटेश्वर" स्टीम्-यंत्रालय बम्बई में छापकर मुझे उपकृत किया है, अतएव मैं भी भगवान् श्रीमहादेवजीसे उक्त सेठजी की आयु, यश और लक्ष्मीकी वृद्धिके लिये प्रार्थना करता हूँ।

यदि पाठक गणोंको इसके द्वारा कुछ भी लाभ हुआ तो परिश्रम सफल समझा जायगा।

फाल्गुन कृष्ण १३ बुधवार
१९६२
२१-२-६
(शिवरात्रि)

सज्जनोंका अनुग्रहीत–
कन्हैयालाल मिश्र।
(मोहल्ला दीनदारपुरा)
मुरादाबाद

श्रीः ।

धन्वन्तरितन्त्रशिक्षाकी विषयानुक्रमणिका

इति विषयानुक्रमणिका समाप्त ।

।। श्रीः ।।

अथ

धन्वन्तरितंत्र शिक्षा

हिन्दीटीकासहित

मंगलाचरणम्

स्रष्टा पाता च संहर्ता यः साक्षात्परमव्ययः ।
तं वन्दे परमेशानं शिवं देवं जगद्गुरुम् ।।

जो संसारके सृष्टिकर्त्ता, पालनकर्त्ता और संहारकर्त्ता हैं, और साक्षात् परमपुरुष अविनाशी हैं, उन्हीं परमेश्वर जगद्गुरु कल्याणदायक शिवकी वन्दना करता हू ।।

पुराणेभ्यश्च तन्त्रेभ्यो नानाशास्त्रेभ्य एव च ।
संगृह्य बहुभिर्यत्नैस्तन्त्रशिक्षा प्रतन्यते ।।
तत्र दश महाविद्यामनून् वक्ष्ये समासतः ।।

नानाविध पुराण तंत्र और अन्यान्य शास्त्रोंसे परमयत्नपूर्वक संग्रह करके यह 'तन्त्रशिक्षा' नामक ग्रंथ रचा जाता है । इसमें सबसे पहिले दशमहाविद्याके मंत्रादि संक्षेपसे कथित होते हैं ।

दशमहाविद्या

कालीमंत्रः

क्रीं क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं हूं हूं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं हूं हूं स्वाहा ।

कालीध्यानम् ।

करालवदनां घोरां मुक्तकेशीं चतुर्भुजाम् ।
कालिकां दक्षिणां दिव्यां मुण्डमालाविभूषिताम् ।
सद्यश्छिन्नशिरःखड्गवामाधोर्द्ध्वकराम्बुजाम् ।
अभयं वरदञ्चैव दक्षिणाधोर्द्ध्वपाणिकाम् ।।
महामेघप्रभां श्यामां तथा चैव दिगम्बरीम् ।।
कण्ठावसक्तमुण्डालीगलद्रुधिरचर्च्चिताम् ।।
कर्णावतंसतानीतशवयुग्मभयानकाम् ।
घोरदंष्ट्राकरालास्यां पीनोन्नतपयोधराम् ।।
शवानां करसंघातैः कृतकाञ्चीं हसन्मुखीम् ।
सृक्कच्छटागलद्रक्तधाराविस्फूरिताननाम् ।
घोररावां महारौद्रीं श्मशानालयवासिनीम् ।
बालार्कमण्डलाकारलोचनत्रितयान्विताम् ।।
दन्तुरां दक्षिणव्यापिमुक्तालम्बिकचोच्चयाम् ।
शवरूपमहादेवहृदयोपरि संस्थिताम् । ।
शिवाभिर्घोररावाभिश्चतुर्दिक्षु समन्विताम् ।
महाकालेन च समं विपरीतरतातुराम् ।।
सुखप्रसन्नवदनां स्मेराननसरोरुहाम् ।
एवं संचिन्तयेत् कालीं सर्व्वकामसमृद्धिदाम् ।।

कालिकादेवी भयंकर मुखवाली, घोरा, छुँटे बालवाली, चतुर्भुज और मुण्डमालासे अलंकृत है। उनकी वाम ओरके दोनों हाथोंमें तत्काल छेदन किये हुए मृतकका शिर एवं खड्ग और दक्षिण ओरके दोनों हाथों में अभय और वरमुद्रा विद्यमान हैं। कण्ठमें स्थित मुण्डमालासे देवी गाढ़मेघके समान श्यामवर्ण, दिगम्बरी, कण्ठमें स्थित मुण्डमालासे टपकते हुए रुधिरद्वारा लिप्त शरीरवाली, घोरदंष्ट्रा, करालवदना और ऊंचे स्तनवाली हैं। उनके दोनों कान दो मृतक मुण्डभूषणरूपसे शोभा

पाते हैं, देवीकी कमरमें मृतकके हाथोंकी कोंधनी विद्यमान है, वह हास्यमुखी हैं। उनके दोनों होठोंसे रुधिरधारा क्षरित होनेके कारण वदन कम्पित होता है, देवी घोर शब्दवाली, महाभयंकरी और श्मशानवासिनी हैं, उनके तीनों नेत्र तरुण अरुणके समान हैं, वह बडे दाँत और लम्बायमान केशकलापसे युक्त हैं, वह शवरूपी महादेवके हृदयोपरि स्थित हैं, उनके चारों ओर घोररव गीदड़ी भ्रमण करती हैं। देवी महाकालके सहित विपरीत विहारमें आसक्त हैं, वह प्रसन्नमुखी सुहास्यवदन और सर्व्वकाम समृद्धिदायिनी हैं, इस प्रकार उनका ध्यान करे ॥

कालीपूजायंत्र ।

आदौ त्रिकोणमालिख्य त्रिकोणं तद्वहिर्लिखेत् ।
ततो वै विलिखेन्मंत्री त्रिकोणत्रयमुत्तमम् ॥
ततो वृत्तं समालिख्य लिखेदष्टदलं ततः ।
वृत्तं विलिख्य विधिवत् लिखेद्भूपूरमेककम् ।
मध्ये तु बैन्दवं चक्रं बीजमायाविभूषितम् ॥

प्रथम बिन्दु फिर निजबीज "क्रीं" अनन्तर भुवनेश्वरी बीज "ह्रीं" लिखकर इसके बाहर त्रिकोण और उसके बाहर चार त्रिकोण अंकित करके वृत्त अष्टदलपद्म और पुनर्वार वृत्त अंकित करें। उसके बाहर चतुर्द्वार अंकित करना चाहिये। यह कालीकी पूजाका यंत्र है॥ *

जप – होम

लक्षमेकं जपेद्विद्यां हविष्याशी दिवा शुचिः ।
ततस्तु तद्दशांशेन होमयेद्धविषा प्रिये ॥

---

* दशमहाविद्याके बीजमंत्र जिसके द्वारा पूजा करनी होती है और जिससे जप करना होता है, ध्यान मंत्र और स्तवादि लिखे गये। पूजामें अन्यान्य जो कुछ आवश्यकता है, वह पुस्तकमें लिखकर समझना असंभव है। वह सब विषय गुरुके मुखसे जानना चाहिये।

पूजाके अन्तमें मूलमंत्रका लक्ष जपकर जपका दशांश घृतहोम करना चाहिये ।।

कालीस्तव ।

कर्पूरं मध्यमान्त्यस्वरपररहितं सेन्दुवामाक्षियुक्तं
बीजन्ते मातरेतत्त्रिपुरहरवधु त्रिःकृतं ये जपन्ति ।।
तेषां गद्यानि च मुखकुहरादुल्लसन्त्येव वाचः
स्वच्छन्दं ध्वान्तधाराधररुचिरुचिरे सर्व्वसिद्धिं गतानाम् ।।

हे जननि ! हे सुन्दरी ! तुम्हारे देहकी कान्ति श्यामवर्ण मेघके समान मनोहर है । जो तुम्हारे एकाक्षरी बीजको तिगुना करके जप करते हैं, वह शिवकी अणिमादि अष्टसिद्धिको प्राप्त होते हैं, और उनके मुखसे गद्यपद्यमयी वाणी निकलती है ।

ईशानः सेन्दुवामश्रवणपरिगतं बीजमन्यन्महेशि
द्वन्द्वं ते मन्दचेता यदि जपति जनो वारमेकं कदाचित् ।
जित्वा वाचामधीशं धनदमपि चिरं मोहयन्नम्बुजाक्षीवृन्दं
चन्द्रार्द्धचूडे प्रभवति स महाघोरबाणावतंसे ।।

हे महेश्वरी ! तुम्हारी चूडामें अर्द्धचन्द्र शोभा पाता है, और दोनों कानोंमें दो महाभयंकर बाण अलंकारस्वरूपसे रहते हैं । विषयमत्त पुरुष भी तुम्हारे 'हूँ'' इस बीजको दूना करके पवित्र, अथवा अपवित्र कालमे एकवार जप करनेसे भी विद्या और धनद्वारा सुरगुरु और कुबेरके परास्त करनेमें समर्थ होता है । वह पुरुष सौन्दर्य्यसे सुन्दरी स्त्रियोंको भी मोहित कर सकता है, इसमें सन्देह नहीं ।

ईशो वैश्वानरस्थः शशधरविलसद्वामनेत्रेण युक्तो
बीजं ते द्वन्द्वमन्यद्विगलितचिकुरे कालिके ये जपन्ति द्वेष्टारं
घ्नन्ति ते च त्रिभुवनमपि ते वश्यभावं नयन्ति सृक्कद्वन्द्वास्त्र-
धाराद्वयधरवदने दक्षिणे कालिकेति ।।

हे मुक्तकेशी ! तुम विश्वसंहर्त्ता कालके संग विहार करती हो, इस कारण तुम्हारा नाम 'कालिका' है। तुम वामा होकर दक्षिणादिक स्थित महादेवको पराजय करती हुई स्वयं निर्वाण दान करती हो, इस कारण 'दक्षिणा' नामसे प्रसिद्ध हुई हो, तुमने प्रणवरूपी शिवको अपने माहात्म्यमें तिरस्कार किया है। तुम्हारे दोनों होठोंसे रुधिर-धारा क्षरित होनेके कारण तुम्हारा वदनमण्डल परम शोभा पाता है। जो तुम्हारे "ह्रीं ह्रीं" इन दोनों बीजोंको जप करते हैं, वह शत्रुओंको पराजितकर त्रिभुवनको वशीभूत कर सकते हैं। अथवा जो इस मन्त्रको जपते हैं, वह शत्रु कुलको वशीभूतकर त्रिभुवनमें विचरण करते हैं।

ऊर्ध्वं वामे कृपाणं करतलकमले छिन्नमुण्डं तथाधः सव्ये चाभी-र्वरञ्च त्रिजगदघहरे दक्षिणे कालिकेति।
जप्त्वैतन्नामवर्णं तव मनुविभवं भावयन्त्येतदम्ब तेषामष्टौ करस्थाःप्रकटितवदने सिद्धयस्त्र्यम्बकस्य ॥

हे जगन्मातः ! तुम त्रिलोकीके पातकियोंका पाप हरती हो। तुम्हारे दांतोंकी पंक्ति महाभयंकर है, तुमने ऊपरके वामहाथमें खड्ग नीचेके वामहस्तमें छिन्नमुण्ड ऊपरके दक्षिणहाथमें अभय और नीचेके दक्षिण हाथमें वर धारण किया है। जो तुम्हारे पत्रके विभवस्वरूप-"दक्षिणकालिके" यह मंत्र जपते हैं, तुम्हारे स्वरूपकी चिन्ता करते हैं, अणिमादि अष्ट सिद्धि उनके पास प्राप्त होती हैं।

वर्गाद्यं वह्निसंस्थं विधुरति ललितं तत्त्रयं कूर्च्चयुग्मं लज्जाद्वन्द्वञ्च पश्चात्स्मितमुखि तदधष्टद्वयं योजयित्वा मातर्ये जपन्ति स्मरहर महिले भावयन्ते स्वरूपं ते लक्ष्मीलास्यलीलाकमलदलदृशः कामरूपा भवन्ति ॥

हे स्मरहरकी महिले ! तुम्हारा मुखमण्डल मृदु–मधुर हास्यसे विराजित है, जो मनुष्य तुम्हारे स्वरूपकी भावना करते हुए तुम्हारा

नवाक्षरमंत्र (क्रीं क्रींक्रींहूँहूँह्रींह्रीं स्वाहा जप करते हैं, वह कामदेवकी समान मनोहर सौन्दर्य्यको प्राप्त होते हैं, उनके नेत्र कमलकी लीला पद्म दलके सदृश लम्बी और रमणीय होती हैं।

प्रत्येकं वा त्रयं वा द्वयमपि च परं बीजमत्यन्तगुह्यं त्वन्नाम्ना योजयित्वा सकलमपि सदा भावयन्तो जपन्ति। तेषां नेत्रारविन्दे विहरति कमला वक्त्रशुभ्रांशुबिम्बे वाग्देवी दिव्यमुण्डस्रगतिशयलसत्कंण्ठपीनस्तनाढ्ये॥

हे जगन्मातः! तुम्हारे उपदेशानुसार यह त्रिभुवन अपने अपने कार्य्यमें नियुक्त होता है, इसी कारण तुम 'देवी' नामसे कथित हो। तुम्हारा कण्ठ मुण्डमाला धारणसे परमशोभा पाता है, तुम्हारा वक्षःस्थल पुष्ट ऊंचे स्तनमण्डलसे विराजित है। हे महेश्वरी! जो पुरुष तुम्हारा ध्यान करते हुए "दक्षिणेकालिके" इस नामके पहले और अन्तमें पूर्वकथित अतिगुह्य एकाक्षर मंत्र, अथवा यह त्रिगुणित तीन अक्षर मंत्र, वा "ईशो वैश्वानरस्थं" इत्यादि श्लोककथित द्वयक्षर मंत्र, या "वर्गाद्य." इत्यादि श्लोकमें कहे नवाक्षरमंत्र, अथवा गुह्य बाइसाक्षर मंत्र मिलाकर जप करते हैं, कमला उनके नेत्रपद्म और वाग्देवी मुखचन्द्रमें विलास करती है॥

गतासूनां बाहु प्रकरकृतकञ्चीपरिलस-
न्नितम्बां दिग्वस्त्रां त्रिभुवनविधात्रीं त्रिनयनाम्॥
श्मशानस्थे तल्पे शवहृदि महाकालसुरत-
प्रसक्तां त्वां ध्यायञ्जननि जडचेता अपि कविः॥

हे जननि! तुम त्रिलोककी सृष्टिकर्त्री त्रिलोचना और दिगम्बरी हो, तुम्हारा नितंब देश बाहुनिर्म्मित काञ्चीसे अलंकृत है। तुम श्मशान में स्थित शवरूपी महादेवकी हृदय शय्यापर महाकालके संग क्रीडामें रत हो। विषयमत्त मूर्ख व्यक्ति भी तुम्हारा इस प्रकार ध्यान करनेसे अलौकिक कवित्वशक्ति पाता है॥

शिवाभिर्घोराभिः शवनिवसमुण्डास्थिनिकरैः
परं संकीर्णायां प्रकटितचितायां हरवधूम् ॥
प्रविष्टां सन्तुष्टामुपरि सुरतेनातियुवतीं
सदा त्वां ध्यायन्ति क्वचिदपि न तेषां परिभवः ॥

हे देवि ! कालिके ! तुम महादेवकी प्रियतमा हो, विपरीत विहार में सन्तुष्ट और नवयुवती हो, जिस स्थानमें भयंकर शिवा गण भ्रमण करती हैं। तुम उसी मृतक मुंडोंकी अस्थियोंसे आच्छादित श्मशान में नृत्य करती हो, तुम्हारी इस प्रकार चिंता करनेसे पराभवको प्राप्त नहीं होना पड़ता है।

वदामस्ते किं वा जननि वयमुच्चैर्जडधियो
न धाता नापीशो हरिरपि न ते वेत्ति परमम् ॥
तथापि त्वद्भक्तिर्मुखरयति चास्माकमसिते
तदेतत्क्षन्तव्यं न खलु शिशुरोषः समुचितः ॥

हे जननि ! जब महादेव, ब्रह्मा और नारायण भी तुम्हारा परम-तत्त्व नहीं जानते, तब मूढ़मति हम तुम्हारा तत्त्व किस प्रकारसे वर्णन करें ? तब जो इस विषयमें प्रवृत्त हुए हैं, तुम्हारे प्रति भजनविषयमें हमारे मनकी उत्सुकताही उसका कारण है, अनधिकार विषयमें उद्यम करता देखकर तुमको क्रोध उत्पन्न हो सक्ता है किन्तु मूर्ख सन्तान जानकर उसको क्षमा करो ॥

समन्तादापीनस्तनजघनधृग्यौवनवती
रतासक्तो नक्तं यदि जपति भक्तस्तवमनुम् ॥
विवासास्त्वां ध्यायन् गलितचिकुरस्तस्य वशगाः
समस्ताः सिद्धोघा भुवि चिरतरं जीवति कविः ॥

हे हरमहिले ! जो पुरुष नग्न और मुक्तकेश होकर पुष्ट ऊंचे स्तनवाली युवती नारीके सहित क्रीडासुख अनुभवपूर्व्वक रात्रिमें

तुम्हारी चिन्ता करते हुए तुम्हारे मंत्रका जप करते हैं, वह कवित्वकी शक्तियुक्त होकर बहुत कालपर्य्यंन्त पृथिवीमें रहते हैं और सम्पूर्ण अभीष्ट उनके समीप होता है ।।

सखः सुस्थीभूतो जपति विपरीतो यदि सदा
विचिन्त्य त्वां ध्यायन्नतिशयमहाकालसुरताम् ।।
तदा तस्य क्षोणीतलविहरमाणस्य विदुषः
कराम्भोजे वश्याःस्मरहरवधु सिद्धिनिवहाः ।।

हे हरवल्लभे ! तुम महाकालके संग विहारसुख अनुभव करती हो, विपरीतरतासक्त होकर स्थिरमनसे तुम्हारा ध्यान करनेपर सर्व-शास्त्र में पारदर्शी हो जाता है और सिद्धिसमूह हस्तगत होती हैं।

प्रसूते संसारं जननि जगतीं पालयति च
समस्तं क्षित्यादि प्रलयसमये संहरति च ।।
अतस्त्वां धातापि त्रिभुवनपतिः श्रीपतिरपि
महेशोऽपि प्रायः सकलमपि किं स्तौमि भवतीम् ।।

हे जगन्मातः ! तुमसेही जगतके सम्पूर्ण पदार्थ उत्पन्न हुए हैं, अतएव तुम्हीं सृष्टिकर्त्ता ब्रह्मा हो; तुम्हीं सम्पूर्ण जगत्को पालती हो, सुतरां तुम्हीं नारायण हो, महाप्रलयकालके समय यह जगत् संसार तुमसेही लय होता है इससे तुम्हीं महेश्वरी हो; किन्तु स्पष्ट समझा जाता है कि, तुम्हारे पति होनेके कारणही महेश्वर प्रलयकालमें लयको प्राप्त नहीं होते ।।

अनेके सेवन्ते भवदधिकगीर्व्वाणनिवहान्
विमूढास्ते मातः किमपि न हि जानन्ति परमम् ।
समाराध्यामाद्यां हरिहरविरिञ्चादिविबुधैः
प्रसक्तोऽस्मि स्वैरं रतिरस महानन्दनिरताम् ।।

हे जगदम्बे ! तुम निरन्तर विहारके आनन्दमें निमग्न रहती हो,

तुम्हीं सबकी आदिस्वरूपिणी हो, अनेक मूढबुद्धि मनुष्य अन्यान्य देवताओंकी आराधना करते हैं किन्तु वे अवश्य ही तुम्हारे उस अनिर्वचनीय परमतत्त्वका विषय कुछ नहीं जानते, उनके उपास्य ब्रह्मा, विष्णु, शिव इत्यादि देवतालोग भी सदा तुम्हारी उपासनामें निरत रहते हैं ।।

धरित्री कीलालं शुचिरपि समीरोऽपि गगनं
त्वमेका कल्याणी गिरिशरमणी कालि सकलम् ।।
स्तुतिः का ते मातस्तवकरुणया मामगतिकं
प्रसन्ना त्वं भूया भवमनु न भूयान्मम जनुः ।।

हे जननि! क्षिति, जल, तेज, वायु और आकाश यह पंचभूत भी तुम्हारेही स्वरूप हैं, तुम्हीं भगवान महेश्वरकी हृदयरञ्जिनी हो, तुम्हीं इस त्रिभुवनका मंगलविधान करती हो, हे जननि! इस अवस्थामें तुम्हारी फिर क्या स्तुति करूं? क्योंकि किसी विलक्षण गुणका आरोप न करके वर्णन करनेको स्तुति कहते हैं। तुममें कौन गुण नहीं है, जो उसका आरोप करके तुम्हारा स्तव करूं? तुम स्वयं जगन्मयी हो, सुतरां तुम्हारे संबंधमें जो वर्णन हो, वह सब तुहारे स्वरूपवर्णन पर है, हे कृपामयि! तुम अपनी दया प्रकाश करके इस निराश्रय सेवकके प्रति संतुष्ट होओ, तो फिर इस सेवकको संसारभूमिमें जन्म लेना नहीं पड़ेगा ।

श्मशानस्थस्स्वस्थो गलितचिकुरो दिक्पटधरः
सहस्रन्त्वर्काणां निजगलितवीर्य्येण कुसुमम् ।।
जपंस्त्वत्प्रत्येकममुमपि तव ध्याननिरतो
महाकालि स्वैरं स भवति धरित्रीपरिवृढः ।।

हे महाकालिके! जो मनुष्य श्मशान भूमिमें वस्त्रहीन और बाल खोलकर यथाविहित आसनपर बैठकर स्थिर मनसे तुम्हारे स्वरूपका ध्यान करते करते तुम्हारे मंत्रको जपता है, और अपने निकले

वीर्यसंयुक्त सहस्र आकके फूल एक एक करके तुम्हारे उद्देशसे अर्पण करता है, वह सम्पूर्ण धरणीका अधीश्वर होता है।

गृहे सम्मार्ज्जन्या परिगलितवीर्य्यं हि चिकुरं
समूलं मध्याह्ने वितरति चितायां कुजदिने ॥
समुच्चार्य्य प्रेम्णा जपमनु सकृत कालि सततं
गजारूढो याति क्षितिपरिवृढः सत्कविवरः ॥

हे देवी ! जो मंगलवारके दिन मध्याह्नकालके समय कंघी द्वारा शृंगार किये गृहणीके समूल केश लेकर पूर्व्व कथित तुम्हारे जिस किसी एक मंत्रका जप करता हुआ तुम्हें भक्तिसहित चिताग्निमें अर्पण करता है, वह धराका अधीश्वर होकर निरन्तर हाथीपर चढ़कर विचरण करनेमें समर्थ होता है और व्यासादिक कविकुलकी प्रधानताको प्राप्त होता है।

सुपुष्पैराकीर्णं कुसुमधनुषो मंदिरमहो
पुरो ध्यायन् ध्यायन् यदि जपति भक्तस्तवमनुम् ॥
स गन्धर्व्वश्रेणीपतिरिव कवित्वामृतनदी
नदीनः पर्य्यन्ते परमपदलीनः प्रभवति ॥

हे जगन्मातः ! साधक यदि स्वयं फलोंसे रंजित कामगृहको अभिमुख करके मंत्रार्थके सहित तुम्हारा ध्यान करता करता पूर्व्वकथित किसी एक मंत्रका जप करे, तो वह कवित्वरूपी नदीके सम्बन्धमें समुद्रस्वरूप होता है, और महेन्द्रकी समानता प्राप्त करता है। वह देहान्तके समय तुम्हारे चरणकमलमें लीन होकर जो स्वरूप मुक्ति प्राप्त करता है, यह विचित्र नहीं है ॥

त्रिपञ्चारे पीठे शवशिवहृदि स्मेरवदनां
महाकालेनोच्चैर्मदनरसलावण्यनिरताम् ॥
महासक्तो नक्तं स्वयमपि रतानन्दनिरतो
जनो यो ध्यायेत्त्वामयि जननि स स्यात्स्मरहरः ॥

हे जगन्मात ! तुम्हारा मुखमण्डल मृदुहास्यसे विराजित है, तुम सदा शिवके संग विहार सुख अनुभव करती हो, जो साधक रात्रिमें अपना विहार सुख अनुभव करता हुआ शव हृदयरूप आसनपर पांच दशकोण युक्त तुम्हारे यंत्रमें तुम्हारी पूर्वोक्त प्रकारसे चिन्ता करता है, वह शीघ्र शिवत्व लाभ करता है।

सलोमास्थि स्वैरं पललमपि मार्ज्जारमसिते
परञ्चौष्ट्रं मैषं नरमहिषयोश्छागमपि वा ।।
बलिन्ते पूजायामपि वितरतां मर्त्यवसतां
सतां सिद्धिः सर्व्वा प्रतिपदमपूर्व्वा प्रभवति ।।

हे जननि ! पृथ्वीवासी साधकगण यदि तुम्हारी पूजामें बिल्लीका मांस ऊँटका मॉस, नरमॉस, महिषमॉस, अथवा छाग मॉस रोमयुक्त और अस्थियोंके सहित अर्पण करें, तो उनके चरणकमलमें आश्चर्य आश्चर्य विषय सिद्ध होते हैं ।।

वशी लक्षं मन्त्रं प्रजपति हविष्याशनरतो
दिवा मातर्युष्मच्चरणयुगलध्याननिपुणः ।।
परं नक्तं नग्नो निधुवनविनोदेन च मनुं
जनो लक्षं स स्यात्स्मरहरसमानः क्षितितले ।।

हे जगन्मातः ! जो इन्द्रियोंको अपने वशीभूत रखकर हविष्यभोजनपूर्व्वक प्रातःकालसे दिनके दूसरे पहरतक तुम्हारे दोनों चरणोंमें चित्त लगाकर जप करते हैं, और पशुभावानुसार एक लक्ष जपरूप पुरश्चरण करते हैं, अथवा जो साधक रात्रिकालमें नग्न और विहारपरायण होकर वीरसाधनानुसार एकलक्ष जपरूप पुरश्चरण करते हैं, यह दोनों प्रकारके साधक पृथ्वीतलमें स्मरहर शिवके समान होते हैं ।।

इदं स्तोत्रं मातस्तवमनुसमुद्धारणजपः
स्वरूपाख्यं पादाम्बुजयुगलपूजाविधियुतम् ।।
निशार्द्धं वा पूजासमयमधि वा यस्तु पठति
प्रलापे तस्यापि प्रसरति कवित्वामृतरसः ।।

हे जननि ! मेरे किये इस स्तवमें तुम्हारे मंत्रका उद्धार और तुम्हारे स्वरूपका वर्णन हुआ है, तुम्हारे चरणकमलकी पूजाविधिका भी इसमें उल्लेख किया है । जो साधक निशाद्विपहरकालमें, अथवा पूजाकालमें इस स्तवको पढ़ता है, उसकी अनर्थक वाणी भी प्रबन्धरूप में परिणत होकर कवित्वरूप सुधारस प्रवाहित करती है।

कुरंगाक्षीवृन्दं तमनुसरति प्रेमतरलं
वशस्तस्य क्षोणी पतिरपि कुबेरप्रतिनिधिः ।।
रिपुः कारागारं कलयति च तत्केलिकलया
चिरं जीवन्मुक्तः स भवति च भक्तः प्रतिजनुः ।।

मृगकी समान नेत्रोंवाली स्त्रियें उस स्तवपढनेवाले साधकको प्रियतम जानकर उसकी अनुगामिनी होती हैं। कुबेरके समान राजा भी उसके वशमें रहते हैं और उस साधकके शत्रुगण कारागारमें बन्द होते हैं। वह साधक जन्मजन्ममें जगदम्बिकाका भक्त होता है। और सर्वकाल महाआनन्दसे विहार करके देहके अंतमें मोक्ष प्राप्त करता है।

इति श्रीमहाकालविरचितं पंडितकन्हैयालालकृतहिन्दीटीका-
सहितं श्रीमद्दक्षिणकालिकायाःस्वरूपाख्यस्तोत्रम् ।

अथ कालीकवचम्

भैरव्युवाच

कालीपूजा श्रुता नाथ भावाश्च विविधः प्रभो ।
इदानीं श्रोतुमिच्छामि कवचं पूर्वसूचितम् ।।
त्वमेव शरणं नाथ त्राहि मां दुःखसङ्कटात् ।
त्वमेव स्रष्टा पाता च संहर्ता च त्वमेव हि ।।

भैरवीने कहा हे नाथ ! हे प्रभो ! मैंने कालीपूजा और उसके विविधभाव सुने, अब पूर्वसूचित कवच सुननेकी इच्छा हुई है, उसको वर्णन करके मेरी दुःख संकटसे रक्षा कीजिये आपही रचना करते रक्षा करते और संहार करते हो, हे नाथ ! तुम्हीं मेरे आश्रय हो ।

भैरव उवाच

रहस्यं शृणु वक्ष्यामि भैरवि प्राणवल्लभे ।
श्रीजगन्मंगलं नाम कवचं मंत्रविग्रहम् ।
पठित्वा धरयित्वा च त्रैलोक्यं मोहयेत् क्षणात् ।।

भैरवने कहा हे प्राणवल्लभे ! 'श्रीजगन्मंगलनामक' कवच कहता हूं, सुनो, इसका पाठ अथवा धारण करनेसे शीघ्र त्रिलोकी को मोहित कर सक्ता है ।

नारायणोऽपि यद्धत्वा नारी भूत्वा महेश्वरम् ।
योगेशं क्षोभमनयद्यद्धृत्वा च रघूद्वहः ।
वरदृप्तान् जघानैव रावणादिनिशाचरान् ।।

नारायणने इसको धारणकरके नारीरूपसे योगेश्वर शिवको मोहित किया था । श्रीरामने इसको धारण करके वरदृप्त रावणादि राक्षसोंका संहार किया ।

यस्य प्रसादादीशोऽहं त्रैलोक्यविजयी प्रभुः ।
धनाधिपः कुबेरोऽपि सुरेशोऽभूच्छचीपतिः ।

एवं हि सकला देवाःसर्व्वसिद्धीश्वराः प्रिये ।।

हे प्रिये ! इसकेही प्रसादसे मैं त्रैलोक्यजयी हुआ हूं, कुबेर इसके प्रसादसे धनाधिप, शचीपति सुरेश्वर और सम्पूर्ण देवतागण सर्वसिद्धीश्वर हुए हैं।

श्रीजगन्मङ्गलस्यास्य कवचस्य ऋषिश्शिवः ।
छन्दोऽनुष्टुब्देवता च कालिका दक्षिणेरिता ।।
जगतां मोहने दुष्टानिग्रहे भुक्तिमुक्तिषु ।
योषिदाकर्षणे चैव विनियोगः प्रकीर्त्तितः ।।

इस कवचके ऋषि शिव, छन्द अनुष्टुप्, देवता दक्षिणकालिका और मोहन दुष्टनिग्रह भुक्तिमुक्ति और योषिदाकर्षणमें विनियोग है।

शिरो मे कालिका पातु क्रीङ्कारैकाक्षरी परा ।
क्रीं क्रीं क्रीं मे ललाटञ्च कालिका खड्ग धारिणी ।।
हुं हुं पातु नेत्रयुग्मं ह्रीं ह्रीं पातु श्रुती मम ।
दक्षिणा कालिका पातु घ्राणयुग्मं महेश्वरी ।।
क्रीं क्रीं क्रीं रसनां पातु हुं हुं पातु कपोलकम् ।
वदनं सकलं पातु ह्रीं ह्रीं स्वाहा स्वरूपिणी ।।

कालिका और क्रींकारा मेरे मस्तक, क्रीं क्रीं क्रीं और खड्गधारिणी कालिका ललाट, हुं हुं दोनों नेत्र, ह्रीं ह्रीं कर्ण, दक्षिणा कालिका दोनों घ्राण, क्रीं क्रीं क्रीं रसना हुं हुं कपोलदेश और ह्रीं ह्रीं स्वाहा स्वरूपिणी संपूर्णवदनकी रक्षा करें ।।

द्वाविंशत्यक्षरी स्कन्धौ महाविद्या सुखप्रदा ।
खड्गमुण्डधरा काली सर्व्वाङ्गमभितोऽवतु ।।
क्रीं हुं ह्रीं त्र्यक्षरी पातु चामुण्डा हृदयं मम ।
ऐं हुं ओं ऐं स्तनद्वन्द्वं ह्रीं फट् स्वाहा ककुत्स्थलम् ।।
अष्टाक्षरी महाविद्या भुजौ पातु सकर्त्तृका ।
क्रीं क्रीं हुं हुं ह्रीं ह्रीं करौ पातु षडक्षरी मम ।।

वाईस अक्षरकी विद्यारूप सुखदायिनी महाविद्या दोनों स्कन्ध, खड्गमुण्डधरा काली सर्व्वाङ्ग, क्रीं हुं ह्लीं चामुण्डा हृदय, ऐं हुं ओं ऐं दोनों स्तन, ह्रीं फट् स्वाहा कन्धोंकी; अष्टाक्षरी महाविद्या दोनो भुजा और क्रीं इत्यादि षडक्षरीविद्या दोनों हाथोंकी रक्षा करे ।।

क्रीं नाभिं मध्यदेशञ्च दक्षिणा कालिकाऽवतु ।
क्रीं स्वाहा पातु पृष्ठन्तु कालिका सा दशाक्षरी ।।
ह्लीं क्रीं दक्षिणे कालिके हूँ ह्लीं पातु कटीद्वयम् ।
काली दशाक्षरी विद्या स्वाहा पातूरुयुग्मकम् ।
ॐ ह्लां क्रीं मे स्वाहा पातु कालिका जानुनी मम ।।
कालीहृन्नामविद्येयं चतुर्वर्गफलप्रदा ।

क्रीं नाभिदेश, दक्षिणा कालिका मध्यदेश, क्रीं स्वाहा और दशाक्षर मन्त्र पीठ, ह्लीं क्रीं दक्षिणे कालिके ह्लँ ह्लीं कटि, दशाक्षरीविद्या ऊरु और ॐ ह्लीं क्रीं स्वाहा जानुदेशकी रक्षा करें। यह विद्या चतुर्वर्गफल-दायिनी है ।।

क्रीं ह्लीं ह्लीं पातु गुल्फं दक्षिणे कालिकेऽवतु ।
क्रीं ह्लूँ ह्लीं स्वाहा पदं पातु चतुर्द्दशाक्षरी मम ।।

क्रीं ह्लीं ह्लीं गुल्फ, एवं क्रीं ह्लूँ ह्लीं स्वाहा और चतुर्द्दशाक्षरीविद्या मेरी रक्षा करैं ।।

खड्गमुण्डधरा काली वरदा भयवारिणी।
विद्याभिःसकलाभिः सा सर्व्वाङ्गमभितोऽवतु ।।

खड्ग मुण्डधरा वरदा भयहारिणी काली सब विद्याओंके सहित मेरे सर्वांगकी रक्षा करैं ।।

काली कपालिनी कुल्वा कुरुकुल्ला विरोधिनी ।
विप्रचित्ता तथोग्रोग्रप्रभा दीप्ता घनत्विषः ।।
नीला घना बालिका च माता मुद्रामिता च माम् ।
एताः सर्व्वाः खड्गधरा मुण्डमालाविभूषिताः ।।

रक्षन्तु मां दिक्षु देवी ब्राह्मी नारायणी तथा
माहेश्वरी च चामुण्डा कौमारी चापराजिता ।।
वाराही नारसिंही च सर्व्वाश्चामितभूषणाः ।
रक्षन्तु स्वायुधैर्दिक्षु मां विदिक्षु यथा तथा ।।

काली कपालिनी इत्यादि मूललिखितसे सब मेरे दिक् विदिक् को सर्वत्र रक्षा करैं ।।

इत्येवं कथितं दिव्यं कवचं परमाद्भुतम् ।
श्रीजगन्मंगलं नाम महामंन्त्रौघविग्रहम् ।।
त्रैलोक्याकर्षणं ब्रह्मकवचं मन्मुखोदितम् ।
गुरुपूजां विधायाथ गृह्लीयात् कवचं ततः ।
कवचं त्रिःसकृद्वापि यावज्जीवञ्च वा पुनः ।।

यह 'जगन्मंगलनामक' महामंत्रस्वरूप परम अद्भुत दिव्य कवच कहा गया । इसके द्वारा त्रिभुवन आकर्षित होता है । गुरुकी पूजा करके फिर कवचको ग्रहण करना चाहिये । इसका एक बार वा तीन बार अथवा यावज्जीवन पाठ करै ।।

एतच्छतार्द्धमावृत्य त्रैलोक्यविजयी भवेत् ।।
त्रैलोक्यं क्षोभयत्येव कवचस्य प्रसादतः ।।
महाकविर्भवेन्मासात्सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ।।

इसकी पचास आवृत्ति करनेसे त्रैलोक्य विजयी हो सक्ता है, इस कवचके प्रसादसे त्रिभुवन क्षोभित होता है, इस कवचके प्रसादसे एक मासमें सर्व्वसिद्धीश्वर हो सकता है ।।

पुष्पाञ्जलीन् कालिकायै मूलेनैव पठेत् सकृत् ।
शतवर्षसहस्राणां पूजायाः फलमाप्नुयात् ।।

मूलमंत्रद्वारा कालिकाको पुष्पाञ्जलि देकर एकवार मात्र इस कवचका पाठ करनेसे शतसहस्रवार्षिकी पूजाका फल प्राप्त हो जाता है ।

भूर्ज्जे विलिखितञ्चैव स्वर्णस्थं धारयेद्यदि ।
शिखायां दक्षिणे बाहौ कण्ठे वा धारयेद्यदि ।।
त्रैलोक्यं मोहयेत् क्रोधात् त्रैलोक्यं चूर्णयेत्क्षणात् ।
बह्वपत्या जीवत्सा भवत्येव न संशयः ।।

भोजपत्र अथवा स्वर्णपत्रपर यह कवच लिखकर शिर वा दक्षिण हस्त वा कण्ठमें धारण करनेसे रोषवश त्रिभुवन मोहित वा चूर्णकृत करनेमें समर्थ होता है । और नारीजाति बहुत सन्तानवाली और जीववत्सा होती है, इसमें सन्देह नहीं ।।

न देयं परशिष्येभ्यो ह्यभक्तेभ्यो विशेषतः ।
शिष्येभ्यो भक्तियुक्तेभ्यश्चान्यथा मृत्युमाप्नुयात् ।।
स्पर्द्धामुद्धूय कमला वाग्देवी मंदिरे मुखे ।
पौत्रान्तस्थैर्य्यमास्थाय निवसत्येव निश्चितम् ।।

अभक्त अथवा परशिष्यको यह कवच प्रदान न करे, भक्ति युक्त अपने शिष्यको दे । इसके अन्यथा करनेसे मृत्युके मुखमें गिरना होता है । इस कवचके प्रसादसे कमला (लक्ष्मी) निश्चल होकर साधकके घरमें और वाग्देवी मुखमें वास करती है ।

इदं कवचमज्ञात्वा यो जपेत्कालिदक्षिणाम् ।
शतलक्षं प्रजप्यापि तस्य विद्या न सिध्यति ।
स शस्त्रघातमाप्नोति सोऽचिरान्मृत्युमाप्नुयात् ।।

इस कवचको न जानकर जो पुरुष कालीमंत्र जप करता है, सौ लाख जपनेसेभी उसकी सिद्धि प्राप्त नहीं होती, और वह पुरुष शीघ्रही शस्त्राघातसे प्राणत्याग करता है ।।

तारामंत्र

(१) ह्रीं स्त्रीं हूँ फट् (२) ओम् ह्रीं स्त्रीं हूँ फट्
(३) श्रीं ह्रीं स्त्रीं हूँ फट् ।।

तीन प्रकारका मंत्र कहा गया है, इनमें चाहे जिस किसी मंत्रसे उपासना कर सकता है ।।

ताराध्यान

प्रत्यालीढपदां घोरां मुण्डमालाविभूषिताम् ।
खर्व्वां लम्बोदरीं भीमां व्याघ्रचर्म्मावृत्तां कटौ ।।
नवयौवनसम्पन्नां पञ्चमुद्राविभूषिताम् ।
चतुर्भुजां लोलजिह्वां महाभीमां वरप्रदाम् ।।
खड्गकर्तृसमायुक्तसव्येतरभुजद्वयाम् ।
कपोलोत्पलसंयुक्तसव्यपाणियुगान्विताम् ।
पिङ्गाग्रैकजटां ध्यायेन्मौलावक्षोभ्यभूषिताम् ।
बालार्कमण्डलाकारलोचनत्रय भूषिताम् ।
ज्वलच्चितामध्यगतां घोरदंष्ट्राकरालिनीम् ।
स्वावेशस्मेरवदनां ह्यलंकारविभूषिताम् ।
विश्वव्यापकतोयान्तः श्वेतपद्मोपरि स्थिताम् ।।

तारा देवी एकपद आगे किये वीरपदसे विराजित हैं, घोररूपिणी, मुण्डमालासे विभूषित, सर्वा, लम्बोदरी, भीमा, व्याघ्रचर्म्म पहिरने-वाली, नवयुवती, पञ्चमुद्राविभूषित, चतुर्भुज चलायमान जिह्वा, महाभीमा और वरदायिनी है । इनके दक्षिण दोनों हाथमें खड्ग और कैंची वाम दोनों हस्तमें कपाल और उत्पल विद्यमान है । इनकी जटा पिंगलवर्ण, मस्तकमें क्षोभरहित शोभित और तीनों नेत्र तरुण अरुणकी समान रक्तवर्ण हैं । यह जलती हुई चितामें स्थित, घोरदंष्ट्रा, कराला, स्वीय आवेशमें हास्यमुखी, सब प्रकारके अलंकारोंसे अलंकृत और विश्व व्यापिनी जलके भीतर श्वेतपद्मपर स्थिर हैं ।।

तारायन्त्र

सुवर्णादिपीठे गोरोचनाकुंकुमादिलिप्ते "ओं आः सुरेखे वज्ररेखे

ओं फट् स्वाहा" इति मंत्रेणाधो मुखत्रिकोणगर्भाष्टदलपद्मं वृत्तं चतुरस्रं चतुर्द्वारयुक्तयंत्रमुद्धरेत् ॥

स्वर्णादिपीढोंपर गोरोचना वा कुंकुमादिसे लेपनकरके "ॐ आः सुरेखे" इत्यादि मंत्रसे अधोमुख त्रिकोणमें अष्टदलपद्म, उसके बाहर गोलाकार चौकोन और चतुर्द्वारसमन्वित यंत्र खेंचे। यह मंत्र है, "ॐ ऐं ह्रीं क्रीं हुँ फट्" ॥

तारामंत्रका जपहोम

लक्षद्वयं जपेद्विद्यां हविष्याशी जितेन्द्रियः।
पलाशकुसुमैर्देवीं जुहुयात्तद्दशांशतः ॥

हविष्याशी और जितेन्द्रिय होकर यह मंत्र दो लक्ष जपकर पलाशपुष्पद्वारा उसका दशांश होम करे ॥

तारा-स्तोत्र

तारा च तारिणी देवी नागमुण्डविभूषिता ॥
ललज्जिह्वा नीलवर्णा ब्रह्मरूपधरा तथा ॥
नामाष्टकेमिदं स्तोत्रं यः पठेत् शृणुयादपि।
तस्य सर्व्वार्थसिद्धिः स्यात् सत्यं सत्यं महेश्वरि ॥

तारा, तारिणी, नागमुण्डोंसे विभूषित, चलायमानजिह्वा, नील वर्णवाली, ब्रह्मरूपधारिणी, नागोंसे अंचित कटी और नीलाम्बरधरा यह अष्टनामात्मक ताराष्टकस्तोत्रका पाठ अथवा श्रवण करनेसे सर्व्वार्थसिद्धि होती हैं ॥

तारा-कवच

भैरव उवाच

दिव्यं हि कवचं देवि तारायाः सर्व्वकामदम्।
शृणुष्व परमं तत्तु तव स्नेहात् प्रकाशितम् ॥

भैरवने कहा हे देवि! तारादेवीका दिव्यकवच सर्वकामप्रद और परमश्रेष्ठ है। तुम्हारे प्रति स्नेहके कारणही उसको कहता हूं ॥

अक्षोभ्य ऋषिरित्यस्य छन्दस्त्रिष्टुबुदाहृतम् ।
तारा भगवती देवी मंत्रसिद्धौ प्रकीर्त्तितम् ।।

इस कवचके ऋषि अक्षोभ्य, छंद, त्रिष्टुप्, देवता भगवती तारा और मंत्रसिद्धिमें इसका विनियोग है ।।

ओंकारो मे शिरः पातु ब्रह्मरूपा महेश्वरी ।
ह्रीङ्कारः पातु ललाटे बीजरूपा महेश्वरी ।।
स्त्रीङ्कारः पातु वदने लज्जारूपा महेश्वरी ।
हुङ्कार पातु हृदये तारिणी शक्तिरूपधृक् ।।

ॐ ब्रह्मरूपा महेश्वरी मेरे मस्तक की, ह्रीं बीजरूपा महेश्वरी ललाटकी, स्त्रीं लज्जारूपा महेश्वरी मुखकी, और हुँ शक्तिरूपधारिणी तारिणी मेरे हृदयकी रक्षा करै ।।

फट्कारः पातु सर्व्वांगे सर्वसिद्धि फलप्रदा ।
खर्वा मां पातु देवेशी गण्डयुग्मे भयापहा ।।
लम्बोदरी सदा स्कन्धयुग्मे पातु महेश्वरी ।
व्याघ्र चर्म्मावृता कटिं पातु देवी शिवप्रिया ।।

फट् सर्वसिद्धि फलप्रदा सर्वांगस्वरूपिणी भयनाशिनी खर्वादेवी दोनों कपोलकी, महेश्वरी लम्बोदरी देवी दोनों कंधे, और व्याघ्रचर्म्मावृता शिवप्रिया मेरी कटि (कमर) की रक्षा करे ।।

पीनोन्नतस्तनी पातु पार्श्वयुग्मे महेश्वरी ।
रक्तवर्त्तुलनेत्रा च कटिदेशे सदावतु ।।
ललज्जिह्वा सदा पातु नाभौ मां भुवनेश्वरी ।
करालास्या सदा पातु लिङ्गे देवी हरप्रिया ।।

पीनोन्नतस्तनी महेश्वरी दोनों पार्श्वकी, रक्तगोलनेत्रवाली कटिकी, ललजिह्वा भुवनेश्वरी नाभि, और करालवदना हरप्रिया मेरे लिंगस्थानकी सदा रक्षा करै ।

विवादे कलहे चैव अग्नौ च रणमध्यतः ।
सर्व्वदा पातु मां देवी झिण्टीरूपा वृकोदरी ।।

झिन्टीरूपा वृकोदरी देवी विवादमें कलहमें अग्निमध्यमें और रणमध्यमें सदा मेरी रक्षा करे।

सर्व्वदा पातु मां देवी स्वर्गे मर्त्ये रसातले ।
सर्व्वास्त्रभूषिता देवी सर्व्वदेवप्रपूजिता ।।
क्रीं क्रीं हुं हुं फट् २ पाहि पाहि समन्ततः ।।

सब देवताओंकरके पूजित सर्वास्त्रसे विभूषित देवी मेरी स्वर्ग मर्त्य और रसातलमें रक्षा करैं। "क्रीं क्रीं हुं हुं फट् फट्" यह क्रीं बीज मेरी सब ओरसे रक्षा करैं।

कराला घोरदशना भीमनेत्रा वृकोदरी ।
अट्टहासा महाभागा विघूर्णितत्रिलोचना ।।
लम्बोदरी जगद्धात्री डाकिनी योगिनीयुता ।
लज्जारूपा योनिरूपा विकटा देवपूजिता ।।
पातु मां चण्डी मातंगी ह्युग्रचण्डा महेश्वरी ।।

महाकराल घोरदांतोंवाली भयंकर नेत्र और भेड़ियेके समान उदरवाली, जोरसे हँसनेवाली महाभागवाली, घूर्णित नेत्रवाली, लम्बायमान उदरवाली, जगत्की माता, डाकिनी योगिनियोंसे युक्त, लज्जारूप, योनिरूप, विकट तथा देवताओंसे पूजित, उग्रचण्डा, महेश्वरी मातंगी मेरी रक्षा करैं।।

जले स्थले चान्तरिक्षे तथा च शत्रुमध्यतः ।
सर्व्वतः पातु मां देवी खड्गहस्ता जयप्रदा ।।

खड्ग हाथमें लिये जय देनेवाली देवी मेरी जलमें, स्थलमें, शून्यमें; शत्रुमध्यमें और अन्यान्य सब स्थानोंमें रक्षा करैं ।।

कवचं प्रपठेद्यस्तु धारयेच्छृणुयादपि ।
न विद्यते भयं तस्य त्रिषु लोकेषु पार्व्वति ।

जो पुरुष इस कवचको पढ़ते हैं धारण करते हैं, या सुनते हैं, हे पार्वती ! तीनों लोकोंमें कहीं भी उनको भय नहीं रहता ।।

इति श्रीभाषाटीकासहितं ताराकवचं संपूर्णम् ।

महाविद्या-मंत्र

हूँ श्रीं ह्लीं वज्रवैरोचनीये हुँ हुँ फट् स्वाहा ऐं ।

इस मंत्रसे पूजा इत्यादि सब कार्य करै। भुवनेश्वरी-यंत्रमेंही पूजा होती है। जप और होमका नियम भी इसी प्रकार है ।।

महाविद्या-ध्यान

चतुर्भुजां महादेवीं नागयज्ञोपवीतिनीम् ।
महाभीमां करालास्यां सिद्धविद्याधरैर्युताम् ।।
मुण्डमालावलीकीर्णां मुक्तकेशीं स्मितानानाम् ।
एवं ध्यायेन्महादेवीं सर्वकामार्थ सिद्धये ।।

देवी चतुर्भुजा, सर्पका यज्ञोपवीत धारण करनेवाली, महाभीमा करालवदना, सिद्ध और विद्याधरोंसे वेष्टित, मुण्डमालासे अलंकृत, केश खोले हुए और हास्यमुखी हैं। सर्वकामार्थ सिद्धिके लिये देवीका इस प्रकार ध्यान करना चाहिये ।।

महाविद्या-स्तोत्र

श्रीशिव उवाच

दुर्ल्लभं तारिणीमार्गं दुर्ल्लभं तारिणीपदम् ।
मन्त्रार्थं मंत्रचैतन्यं दुर्ल्लभं शवसाधनम् ।।
श्मशानसाधनं योनिसाधनं ब्रह्मसाधनम् ।
क्रियासाधनकं भक्तिसाधनं मुक्तिसाधनम् ।।
तव प्रसादाद्देवेशि सर्व्वाःसिध्यन्ति सिद्धयः ।।

श्रीशिवने कहा—तारिणीका उपासनामार्ग अत्यन्त दुर्लभ है उनके पदकी प्राप्ति भी। एवं मंत्रार्थ ज्ञान, मंत्रचैतन्य, शव साधन, श्मशानसाधन, योनिसाधन, ब्रह्मसाधन, क्रियासाधन, भक्तिसाधन और मुक्तिसाधन; यह सब भी दुर्लभ हैं। किन्तु हे देवेशि! तुम जिसके ऊपर प्रसन्न होती हो, उसको सब विषयमें सिद्धि प्राप्त होती है॥

नमस्ते चण्डिके चण्डि चण्डमुण्डविनाशिनि।
नमस्ते कालिके कालमहाभयविनाशिनि॥

हे चण्डिके! तुम प्रचण्डस्वरूपिणी हो। तुमनेही चण्डमुण्डका वध किया है। तुम्हीं कालका भयनाश करनेवाली हो। तुमको नमस्कार है।

शिवे रक्ष जगद्धात्रि प्रसीद हरवल्लभे
प्रणमामि जगद्धात्रीं जगत्पालनकारिणीम्॥
जगत्क्षोभकरीं विद्यां जगत्सृष्टिविधायिनीम्।
करालां विकटां घोरां मुण्डमालाविभूषिताम्॥
हरार्च्चितां हराराध्यां नमामि हरवल्लभाम्।
गौरीं गुरुप्रियां गौरवर्णालंकार भूषिताम्॥
हरिप्रियां महामायां नमामि ब्रह्मपूजिताम्॥

हे शिवे जगद्धात्रि हरवल्लभे! मेरी संसारभयसे रक्षा करो तुम्हीं जगत्की माता और तुम्हीं अनन्त जगत्की रक्षा करती हो। तुम्हीं जगत्को संहार करनेवाली और तुम्हीं उत्पन्न करनेवाली हो। तुम्हारी मूर्ति महाभयंकर है, तुम मुण्डमाला, से अलंकृत हो, सुतरां विकटाकार हो। तुम्हीं हरसे सेवित, हरसे पूजित और हरप्रिया हो। तुम्हारा वर्ण गौर है, तुम्हीं गुरुप्रिया और श्वेत विभूषणोंसे अलंकृत हो, तुम्हीं विष्णु प्रिया और महामाया हो, ब्रह्माजी तुम्हारी पूजा करते हैं। तुमको नमस्कार है।

सिद्धां सिद्धेश्वरीं सिद्धविद्याधरगणैर्युताम् ।
मंत्रासिद्धिप्रदां योनिर्सिद्धिदां लिंग शोभिताम् ।।
प्रणमामि महामायां दुर्गां दुर्गतिनाशिनीम् ।

तुम्हीं सिद्धा और सिद्धेश्वरी हो। तुम्हीं सिद्ध तथा विद्याधरोंसे वेष्टित, मंत्रसिद्धि—दायिनी, योनिसिद्धि देनेवाली, लिंग शोभिता महामाया, दुर्गा और दुर्गति नाशिनी हो। तुमको नमस्कार है।।

उग्रामुग्रमयीमुग्रतारामुग्रगणैर्युताम् ।
नीलां नीलघनश्यामां नमामि नीलसुंदरीम् ।।

तुम्हीं उग्रमूर्ति, उग्रगणोंसे युक्त, उग्रतारा, नीलमूर्ति, नीले-मेघके समान श्यामवर्ण, और नीलसुन्दरी हो। तुमको नमस्कार है।

श्यामांगीं श्यामघटितांश्यामवर्णविभूषिताम् ।
प्रणमामि जगद्धात्रीं गौरीं सर्व्वार्थसाधिनीम् ।।

तुम्हीं श्यामलांगी, श्यामवर्णसे विराजित, जगद्धात्री, सब कार्यकी साधन करनेवाली और गौरी हो। तुमको नमस्कार है।

विश्वेश्वरीं महाघोरां विकटां घोरनादिनीम् ।
आद्यामाद्यगुरोराद्यामाद्यनाथप्रपूजिताम् ।।
श्रीदुर्गां धनदामन्नपूर्णां पद्मां सुरेश्वरीम् ।
प्रणमामि जगद्धात्रीं चन्द्रशेखरवल्लभाम् ।।

तुम्हीं विश्वेश्वरी, महाभीमाकार, विकटमूर्ति हो, तुम्हारा शब्द महाभयंकर है, तुम्हीं सबकी आद्या, आदि गुरु महेश्वर की भी आदि मा हो, आद्यनाथ महादेव सदा तुम्हारी पूजा करते हैं, तुम्हीं धन देनेवाली अन्नपूर्णा और पद्मास्वरूपिणी हो, तुम्हीं देवताओंकी ईश्वरी, जगत्की माता, हरवल्लभा हो। तुमको नमस्कार है।

त्रिपुरासुंदरीं बालामबलागणभूषिताम् ।
शिवदूतीं शिवाराध्यां शिवध्येयां सनातनीम् ।।
सुंदरीं तारिणीं सर्व्वशिवागणविभूषिताम् ।
नारायणीं विष्णुपूज्यां ब्रह्मविष्णुहरप्रियाम् ।।

हे देवि! तुम्हीं त्रिपुरसुंदरी, बाला, अबलागणोंसे मंडित, शिवदूती, शिवआराध्य, शिवसे ध्यान की हुई, सनातनी, सुंदरी तारिणी, शिवागणोंसे अलंकृत, नारायणी, विष्णुसे पूजनीय और ब्रह्मा विष्णु तथा हरकी प्रिया हो।।

सर्वसिद्धिप्रदां नित्यामनित्यगुणवर्जिताम्।
सगुणां निर्गुणां ध्येयामर्च्चितां सर्व्वसिद्धिदाम्।।
दिव्यां सिद्धिप्रदां विद्यां महाविद्यां महेश्वरीम्।
महेशभक्तां माहेशीं महाकालप्रपूजिताम्।।
प्रणमामि जगद्धात्रीं शुम्भासुरविमर्द्दिनीम्।।

तुम्हीं सब सिद्धियोंकी दाता, नित्या, अनित्यगुणोंसे रहित, सगुणा, निर्गुणा, ध्यानके योग्य, अर्चिता (पूजिता), सर्व सिद्धि देनेवाली, दिव्या, सिद्धिदाता, विद्या, महाविद्या, महेश्वरी, महेशकी भक्तिवाली, माहेशी, महाकालसे पूजित जगद्धात्री और शुंभासुरकी नाशिनी हो। तुमको नमस्कार है।।

रक्तप्रियां रक्तवर्णां रक्तबीजविमर्द्दिनीम्।
भैरवीं भुवनां देवीं लोलजिह्वां सुरेश्वरीम्।।
चतुर्भुजां दशभुजामष्टादशभुजां शुभाम्।
त्रिपुरेशीं विश्वनाथप्रियां विश्वेश्वरीं शिवाम्।।
अट्टहासामट्टहासप्रियां धूम्रविनाशिनीम्।
कमलां छिन्नभालाञ्च मातंगीं सुरसुंदरीम्।।
षोडशीं विजयां भीमां धूम्राञ्च बगलामुखीम्।
सर्व्वसिद्धिप्रदां सर्व्वविद्यामंत्रविशोधिनीम्।
प्रणमामि जगत्तारां साराञ्च मंत्रसिद्धये।।

तुम्हीं रक्तसे प्रेम करनेवाली; रक्तवर्ण, रक्तबीजका विनाश करनेवाली, भैरवी, भुवना देवी, चलायमान जीभवाली, सुरेश्वरी, चतुर्भुजा, कभी दशभुजा कभी अठारह भुजा, त्रिपुरेशी, विश्वनाथ-

की प्रिया, ब्रह्मांडकी ईश्वरी, कल्याणमयी, अट्टहाससे युक्त, ॐ हास्यसे प्रीतिकरनेवाली, धूम्रासुरकी नाशिनी,कमला, छिन्नमस्ता मातंगी सुरसुंदरी, षोडशी, विजया, भीमा, धूम्रा, बगलामुखी सर्वसिद्धिदायिनी, सर्वविद्या और सब मंत्रोंकी विशुद्धिकरनेवाली हो सारभूत और जगत्तारिणी हो, मैं मंत्रसिद्धिके लिये तुमको नमस्कार करता हूं।

इत्येवञ्च वरारोहे स्तोत्रं सिद्धिकरं परम्।
पठित्वा मोक्षमाप्नोति सत्यं वै गिरिनन्दिनि ।।

हे वरारोहे! यह स्तव परमसिद्धि देनेवाला है, इसका पाठ करनेसे सत्यही मोक्ष होता है।।

कुजवारे चतुर्द्दश्याममायां जीववासरे।
शुक्रे निशिगते स्तोत्रं पठित्वा मोक्षमाप्नुयात्।
त्रिपक्षे मंत्रसिद्धिः स्यात्स्तोत्रपाठाद्धि शंकरि ।।

मङ्गलवार चतुर्दशी तिथिमें, बृहस्पतिवार अमावस्या तिथिमें और शुक्रवार निशाकालमें यह स्तुति पढ़नेसे मोक्ष प्राप्त होता है। हे शंकरि! तीन पक्षतक इस स्तवके पढ़नेसे मंत्रसिद्धि होती है, इसमें संदेह नहीं।।

चतुर्द्दश्यां निशाभागे शनिभौमदिने तथा।
निशामुखे पठेत्स्तोत्रं मन्त्रसिद्धिमवाप्नुयात् ।।

चौदशकी रातमें तथा शनि और मंगलवारमें संध्याके समय इस स्तवका पाठ करनेसे मंत्रसिद्धि होती है ।।

केवलं स्तोत्रपाठाद्धि मंत्रसिद्धिरनुत्तमा।
जागर्ति सततं चण्डी स्तोत्रपाठाद्भुजंगिनी ।।

जो पुरुष केवल इस स्तोत्रमात्रको पढ़ता है, वह अनुत्तमा सिद्धि प्राप्त करता है। इस स्तवपाठके फलसे चण्डिका कुलकुण्डलिनी नाड़ी जागरित होती है ।।

इति श्रीमुण्डमालातंत्रे कन्हैयालालमिश्रकृत हिन्दीटीकासहितं
महाविद्यास्तोत्रं संपूर्णम्।

महाविद्या-कवच

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि कवचं सर्वसिद्धिदम् ।
आद्याया महाविद्यायाः सर्व्वाभीष्टफलप्रदम् ।।

हे देवि ! महाविद्याका कवच कहता हूं-सुनो, यह सब अभीष्ट फलका देनेवाला है ।।

कवचस्य ऋषिर्देवि सदाशिव इतीरितः ।
छन्दोऽनुष्टुब् देवता च महाविद्या प्रकीर्तिता ।।
धर्म्मार्थकाममोक्षाणां विनियोगश्च साधने ।।

इस कवचके ऋषि सदाशिव, छंद अनुष्टुप्, देवता महाविद्या और धर्म, अर्थ, काम मोक्षरूप फलके साधनमें इसका विनियोग है ।।

ऐंकारः पातु शीर्षे मां कामबीजं तथा हृदि ।
रम्भाबीजं सदा पातु नाभौ गुह्ये च पादयोः ।।

ऐं बीज मेरे मस्तक, क्लीं बीज हृदय, एवं श्रीं बीज मेरी नाभि, गुह्य और चरणकी रक्षा करै ।

ललाटे सुंदरी पातु उग्रा मां कण्ठदेशतः ।
भगमाला सर्व्वगात्रे लिंगे चैतन्यरूपिणी ।।

सुदरी मेरे मस्तककी, उग्रा कंठकी, भगमाला सब शरीरकी और चैतन्यरूपिणी देवी लिंगस्थानकी रक्षा करै ।

पूर्वे मां पातु वाराही ब्रह्माणी दक्षिणे तथा ।
उत्तरे वैष्णवी पातु चेन्द्राणी पश्चिमेऽवतु ।।
माहेश्वरी च आग्नेय्यां नैर्ऋते कमला तथा ।
वायव्यां पातु कौमारी चामुण्डा ह्यीशकेऽवतु ।।

वाराही पूर्वदिशामें, ब्रह्माणी दक्षिणमें, वैष्णवी उत्तरमें, इन्द्राणी पश्चिममें, माहेश्वरी अग्निकोणमें, कमला नैर्ऋतमें कौमारी वायु-कोणमें और चामुण्डा ईशान दिशामें रक्षा करै ।

इदं कवचमज्ञात्वा महाविद्याञ्च यो जपेत्।
न फलं जायते तस्य कल्पकोटिशतैरपि ।।

इस कवचको विना जाने जो मनुष्य महाविद्याका मंत्र जपता है, सो करोड़कल्पमें भी उसको फल प्राप्त नहीं होता ।।

इति श्रीरुद्रयामले महाविद्याकवचम्।

भुवनेश्वरी–मंत्र

१ ह्रीं (२) ऐं ह्रीं (३) ऐं ह्रीं ऐं।

तीन प्रकारका मंत्र कहा गया। इनमें जिस किस एक मंत्रसे भुवनेश्वरीकी आराधना कर सकता है ।।

भुवनेश्वरीका ध्यान

उद्यदहर्द्युतिमिन्दुकिरीटां
तुंगकुचां नयनत्रययुक्ताम्।
स्मेरमुखीं वरदांकुशपाशा-
भीतिकरां प्रभजेद् भुवनेशीम् ।।

देवीके देहकी कान्ति उदय हुए सूर्यके समान है। ललाटमें अर्द्धचन्द्र, मस्तकमें मुकुट, दोनों स्तन ऊंचे, तीन नेत्र और वदनमें सदा हास्य तथा चार हाथमें वर मुद्रा अंकुश पास और अभयमुद्रा विद्यमान है ।।

भुवनेश्वरीका पूजायंत्र

पद्ममष्टदलं बाह्ये वृत्तं षोडशभिर्दलैः।
विलिखेत्कर्णिकामध्ये षट्कोणमतिसुंदरम्।
चतुरस्रं चतुर्द्वारमेवं मण्डलमालिखेत् ।।

पहिले तो षट्कोण अंकित करके उसके बाहर गोल और अष्टदल पद्म लिखे। उसके बाहर षोडशदल पद्म लिखकर उसके बाहर चतुर्द्वार और चतुरस्र अंकित करके यंत्र निर्माण करे ।।

उक्तमंत्रका जप होम

प्रजपेन्मन्त्रविन्मंत्रं द्वात्रिंशल्लक्षमानतः ।
त्रिस्वादुयुक्तैर्जुहुयादष्टद्रव्यैर्दशांशतः ।।

बत्तीस लाख जपसे इस मंत्रका पुरश्चरण होता है । और तीन लाख बत्तीस हजार होम करे । पीपल, गूलर, पिलखन, बड़ इनकी समिधा और तिल, सफेद सरसों, और खीर इन आठ द्रव्योंमें घृत मधु और शर्करा मिलाकर होम करना चाहिये ।।

भुवनेश्वरीका स्तव

अथानन्दमयीं साक्षाच्छब्दब्रह्मस्वरूपिणीम् ।
ईडे सकलसम्पत्त्यै जगत्कारणमम्बिकाम् ।।

जो साक्षात् शब्द ब्रह्मस्वरूपिणी जगत्कारण, जगन्माता है, सब संपत्ति लाभ होनेके निमित्त उन्हीं आनंदमयी भुवनेश्वरी की स्तुति करता हूं ।।

आद्यामशेषजननीमरबिन्दयोने-
र्विष्णोः शिवस्य च वपुः प्रतिपादयित्रीम् ।।
सृष्टिस्थितिक्षयकरीं जगतां त्रयाणां
स्तुत्वा गिरं विमलयाम्यहमम्बिके त्वाम् ।।

हे मातः ! तुम जगत्की आद्या, ब्रह्माण्डको उत्पन्न करनेवाली, ब्रह्मा, विष्णु, शिवको उत्पन्न करनेवाली और तीनों जगत्की सृष्टि, स्थिति, तथा लय करनेवाली हो, तुम्हारी स्तुति करके मैं अपनी वाणीको पवित्र करता हूं ।।

पृथ्व्या जलेन शिखिना मरुताम्बरेण
होत्रेन्दुना दिनकरेण च मूर्तिभाजः ।
देवस्य मन्मथरिपोरपि शक्तिमत्ता
हेतुस्त्वमेव खलु पर्वतराजपुत्रि ।।

हे पर्वतराजपुत्री ! जो पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश, यजमान, सोम और सूर्य मूर्तिमें विराजमान हैं, जिन्होंने काम देवका देहध्वंस किया था, उन महादेवकी भी त्रैलोक्य संहारशक्ति तुम्हारे ही द्वारा सम्पन्न हुई है ॥

त्रिस्रोतसः सकललोकसमर्च्चितताया
वैशिष्ट्यकारणमवैमि तदेव मातः ।
त्वत्पादपंकजपरागपवित्रितासु
शम्भोर्जटासु नियतं परिवर्त्तनं यत् ॥

हे मातः ! तुम्हारे चरण कमलोंकी रेणुसे पवित्र हुई शिवके शिरकी जटाजूटमें तीन स्रोतवाली भागीरथी सदा शोभा पाती हैं इस कारण ही उनकी सब पूजा करते हैं, और इसी कारण वह सुंदरी प्रधानताको प्राप्त हुई हैं ।

आनन्दयेत्कुमुदिनीमधिपः कलानां
नान्यामिनः कमलिनीमथ नेतरां वा ।
एकस्य मोदनविधौ परमेकमीष्टे
त्वन्तु प्रपञ्चमभिनन्दयसि स्वदृष्टया ॥

हे जननि ! जिस प्रकार कलानाथ चन्द्रमा एकमात्र कुमुदिनीको ही आनन्दित करते हैं, और को नहीं, सूर्य भी एकमात्र कमलका आनंद बढ़ाते हैं, और को नहीं, इससे जाना जाता है, कि जिस प्रकार एक एक द्रव्यके आनंद करनेको एक एक द्रव्य ही निर्दिष्ट हुआ है, इसी प्रकार इस सब जगत्को, एकमात्र तुम्हीं अपनी दृष्टि डालकर आनंद देती हो ॥

आद्याप्यशेषजगतां नवयौवनासि
शैलाधिराजतनयाप्यतिकोमलासि ।
त्रय्याः प्रसूरपि तया न समीक्षितासि
ध्येयापि गौरि मनसो न पथि स्थितासि ॥

हे जननि ! सब जगत्की आदिभूत होकर भी तुम निरंतर नव-युवती हो, और तुम पर्वतराजपुत्री होकर भी अतिकोमला हो। तुम्हीं वेद प्रगट करनेवाली हो, और वेद तुम्हारा तत्त्वनिरूपण करनेमें असमर्थ हैं। हे गौरी ! यद्यपि तुम ध्यान गम्य हो, किन्तु इस प्रकार होकर भी मनमें स्थित नहीं होती हो ॥

आसाद्य जन्म मनुजेषु चिराद्दुरापं
तत्रापि पाटवमवाप्य निजेन्द्रियाणाम् ।
नाभ्यर्च्चयन्ति जगतां जनयित्रि ये त्वां
निःश्रेणिकाग्रमधिरुह्य पुनः पतन्ति ॥

हे जगन्मातः ! जो दुर्लभ नरजन्म धारणपूर्वक इंद्रियोंकी सामर्थ्य को पाकर भी तुम्हारी पूजा नहीं करते, वह मुक्तिकी सीढ़ीपर चढ़कर भी फिर गिरते हैं ॥

कर्पूरचूर्णहिमवारिविलोडितेन
ये चन्दनेन कुसुमैश्च सुजातगन्धैः ।
आराधयन्ति हि भवानि समुत्सुकास्त्वां
ते खल्वशेषभुवनाधिभुवं प्रथन्ते ॥

हे भवानि ! जो कपूरके चूर्णसंयुक्त शीतल जलसे घिसे हुए चन्दन और सुगंधित पुष्पोंके द्वारा उत्कंठित मनसे, तुम्हारी उपासना करते हैं, वह सब भुवनोंके अधिपति होते हैं ॥

आविश्य मध्यपदवीं प्रथमे सरोजे
सुप्ताहिराजसदृशी विरचय्य विश्वम् ।
विद्युल्लतावलयविभ्रममुद्वहन्ती
पद्मानि पञ्च विदलय्य समश्नुवाना ॥

हे जननि ! तुम मूलाधार पद्ममें सोते हुए सर्पराजके समान विराजमान होकर विश्वकी रचना करती हो, और वहांसे बिजलीकी रेखाके समूहकी समान क्रमानुसार ऊर्ध्वमें स्थित पंच पद्मको भेदकर

सहस्रदल पद्मकी कर्णिकाके मध्यमें स्थित परमशिवके सहित संगत होती हो! यह विद्युल्लता योगसे जागती है।।

तन्निर्गतामृतरसैरभिषिच्य गात्रं
मार्गेण तेन विलयं पुनरप्यवाप्ता।।
येषां हृदि स्फुरति जातु न ते भवेयु-
र्मातर्महेश्वरकुटुंबिनि गर्भभाजः।।

हे जननि हरगृहिणी! तुम सहस्रदल कमलसे निर्गत हुए सुधारस से शरीरको अभिषिक्त करती हुई सुषुम्ना नाडीके मार्गमें फिर प्राप्त होकर लय हो जाती हो, तुम जिसके; हृदय कमलमें उदित नहीं होती, वह बार बार गर्भ-वासका दुःख पाता है।।

आलम्बिकुन्तलभराभभिरामवक्त्रा-
मापीवरस्तनतटीं तनुवृत्तमध्याम्।
चिन्ताक्षसूत्रकलशालिखिताढ्यहस्तां,
मातर्नमामि मनसा तव गौरि मूर्तिम्।।।

हे जननि! तुम्हारे केशपाश लम्बायमान हो रहे हैं, तुम्हारा मुख अत्यन्त मनोहर है, तुम ऊंचे स्तनवाली हो, तुम्हारी कमर पतली, और तुम्हारी चार भुजामें, ज्ञानमुद्रा, जपमाला, कलश और पुस्तक विद्यमान है। हे गौरी! तुम्हारी ऐसी मूर्तिको नमस्कार है।।

आस्थाय योगमवजित्य च वैरिषट्क-
मावध्य चेन्द्रियगणं मनसि प्रसन्ने।
पाशांकुशाभयवराढ्यकरां सुवक्त्रा-
मालोकयन्ति भुवनेश्वरि योगिनस्त्वाम्।।

हे भुवनेश्वरि! योगिजन योगावलम्बनपूर्वक कामक्रोधादि शत्रुओंको जीत इन्द्रियोंको रोक प्रफुल्लित चित्तसे पाशांकुशाभय, वरयुक्त, हाथवाली, सुशोभनमुखी तुम्हारा दर्शन करते हैं।।

उत्तप्तहाटकनिभा करिभिश्चतुर्भि-
रार्वर्तितामृतघटैरभिषिच्यमाना ।
हस्तद्वयेन नलिने रुचिरे वहन्ती
पद्मापि साभयकरा भवसि त्वमेव ।।

हे जननि! जो तपे हुए कांचनकी समान वर्णवाली हैं, चार हाथी जलपूरित घटसे जिनको अभिषिक्त करते हैं, जो एक दोनों हाथोंमें पद्म और अन्य दोनों हाथोंमें अभय तथा वर धारण करती हैं वह लक्ष्मी देविस्वरूपिणी तुम्हीं हो ।।

अष्टाभिरुग्रविविधायुधवाहिनीभि-
र्दोर्वल्लरीभिरधिरुह्य मृगाधिराजम् ।
दूर्व्वादलद्युतिरमर्त्यविपक्षपक्षान्
न्यक्कुर्व्वती त्वमसि देवि भवानि दुर्गे ।

हे देवि भवानि! जो सिंहके ऊपर चढ़कर नानारूप अस्त्रधारी आठ हाथोंसे विराजमान होती हैं, जो दूर्वादलके समान कान्तिवाली हैं, जिन्होंने देवताओंको परास्तकरके नीचे किया है, वह दुर्गास्वरूपिणी तुम्हीं हो ।।

आविर्निदाघजलशीकरशोभिवक्त्रां
गुञ्जाफलेन परिकल्पितहारयष्टिम् ।
रत्नांशुकामसितकान्तिमलंकृतान्त्वा-
माद्यां पुलिन्दतरुणीमसकृत स्मरामि ।।

पसीनेकी निकली हुई बूंदोंसे जिनका मुखमण्डल शोभा पाता है, जिन्होंने चौंटलीकी बनी हारयष्टि धारण की है, पत्रावली जिनके वसन हैं, उन्हीं कृष्णकान्तिवाली अनंगके वशमें वर्त्तनेवाली वा अनंगको वशमें करनेवाली आद्या पुलिन्दरमणीको बारम्बार स्मरणकरता हूं ।।

हंसैर्गतिक्वणितनूपुरदूरकृष्टै-
र्मूर्तैरिवाप्तवचनैरनुगम्यमानौ ।

पद्मावविवोर्ध्वमुखरूढसुजातनालौ
श्रीकण्ठपत्नि शिरसैव दधे तवांघ्री ।।

हे नीलकंठ पत्नी ! हंस जिस प्रकार नूपुरके शब्द द्वारा दूरसे खिच जाते हैं, इसी प्रकार–वेद तुम्हारे चरणकमलोंका अनुगमन करते हैं, किन्तु तुम्हारे चरणकमल श्रेष्ठ नीलकमलके समान विराजमान हैं, मैं तुम्हारे वही दोनों पद मस्तक पर धारण करता हूं ।।

द्वाभ्यां समीक्षितुमतृप्तिमितेन दृग्भ्या-
मुत्पाद्यता त्रिनयनं वृषकेतनेन ।
सान्द्रानुरागभवनेन निरीक्ष्यमाणे
जंघे उभे अपि भवानि तवानतोऽस्मि ।।

हे भवानि ! वृषध्वज श्रीमहादेवजीने दोनों नेत्रोंसे तुम्हारे रूपका दर्शन करके तृप्त न होनेसेही मानों तीसरे नेत्रको उत्पन्न कर अत्यन्त-गाढ अनुरागसहित तुम्हारे जंघादेशका दर्शन किया है, अतएव मैं तुम्हारी उन दोनों जंघाओंको नमस्कार करता हूं ।।

ऊरू स्मरामि जितहस्तिकरावलेपौ
स्थौल्येन मार्द्दवतया परिभूतरम्भौ ।
श्रोणी भवस्य सहनौ परिकल्प्य दत्तौ
स्तम्भाविवांगवयसा तव मध्यमेन ।।

हे जननि ! तुम्हारी ऊरु हाथियोंकी सूंडका गर्व खर्व करती हैं; स्थूलता और कोमलतासे केलेके वृक्षको परास्त किया है और तुम्हारा नितम्ब देखनेसे वोध होता है, मानों मध्यदेशनेही स्तम्भस्वरूपमें उसकी कल्पना करी है ।।

श्रोण्यौ स्तनौ च युगपत्प्रथयिष्यतोच्चै-
र्बाल्यात्परेण वयसा परिकृष्टसारः ।
रोमावलीविलसितेन विभाव्य मूर्त्ति-
र्मध्यन्तव स्फुरति मे हृदयस्य मध्ये ।।

हे देवि ! तुम्हारा मध्यदेश देखनेमें अनुमान होता है कि, मानो तुम्हारे नितम्ब और स्तनमण्डल दोनोंने उच्चता विस्तारके कारण यौवन द्वारा मध्यदेशका सार खेंचा है। इसी कारण तुम्हारा मध्यदेश अत्यन्त क्षीण हो गया है। हे जननि ! तुम्हारा यह मध्यदेश मेरे हृदयमें स्फुरित हो ॥

सद्यः स्मरस्य हरनेत्रहुताशभीरो-
र्लावण्यवारिभरितं नवयौवनेन ।
आपाद्य दत्तमिव पल्वलमप्रधृष्यं
नाभिं कदापि तव देवि न विस्मरेयम् ।

हे जननि ! नवयुवती शिवकीनेत्राग्निसे डरी हुई रतिका लावण्य जलपूर्ण करके अल्पसरोवरके समान तुम्हारी नाभि बनाई गई है, तुम्हारी इस नाभिको मैं कभी नहीं भूलूं ॥

ईशोपगूहपिशुनं भसितं दधाने
काश्मीरकर्द्दममनु स्तनपंकजे ते ।
स्नानोत्थितस्य करिणः क्षणलक्षफेनौ
सिन्दूरितौ स्मरयतः समदस्य कुम्भौ ॥

हे जननि ! तुम्हारे दोनों कुचकमलोंने भस्म धारण की है, उसके द्वारा हरका आलिंगन सूचित होता है। और यह कुचयुगल पद्ममूलसे अनुलिप्त होनेके कारण स्नानसे उठे मदयुक्त हाथीके क्षणमात्रको फेनसे लक्षित गण्डस्थलको स्मरण कराते हैं ॥

कण्ठातिरिक्तगलदुज्ज्वलकान्तिधारा
शोभौ भुजौ निजरिपोर्मकरध्वजेन ।
कण्ठग्रहाय रचितौ किल दीर्घपाशौ
मातर्म्मम स्मृतिपथं न विलंघयेताम् ॥

तुम्हारे दोनों हस्त देखनेसे अनुमान होता है, मानों कामदेवने

अपने शत्रु हरका कंठग्रहण करने के लिये दीर्घ पाश बनाया है। हे मातः! तुम्हारे यह दोनों हाथ मैं कभी न भूलूं ।।

नात्यायतं रचितकम्बुविलास चौर्य्यं
भूषाभरेण विविधेन विराजमानम् ।
कण्ठं मनोहरगुणं गिरिराजकन्ये
सञ्चिन्त्य तृप्तिमुपयामि कदापि नाहम् ।

हे गिरिराजपुत्रि! न बहुत दीर्घ अनेक प्रकारके अलंकृत मनोहर गुण तुम्हारे कंबुकंठकी मैं भावना करता हुआ कभी तृप्त न हूं ।।

अत्यायताक्षमभिजातललाटपट्टं,
मन्दस्मितेन दरफुल्लकपोलरेखम् ।
बिम्बाधरं वदनमुन्नतदीर्घनासं
यस्ते स्मरत्यसकृदम्ब स एव जातः ।।

तुम्हारे मुखमण्डलमें बहुत चौड़े नयन विराजमान हैं, भाल परम मनोहर दिखाई देता है, मृदुहास्यद्वारा गाल प्रफुल्लित हुए हैं, अधर विम्बाफलके समान शोभा पाते हैं, और उन्नत दीर्घ नासिका विराजमान रहती है, जो पुरुष तुम्हारे ऐसे वदनमण्डलका स्मरण करते हैं, उनका ही जन्म सफल है ।।

आविस्तुषारकरलेखमनल्पगन्ध-
पुष्पोपरि भ्रमदलिव्रजनिर्व्विशेषम् ।
यश्चेतसा कलयते तव केशपाशं
तस्य स्वयं गलति देवि पुराणपाशः ।।

हे देवि! तुम्हारे केशपाश भालचन्द्रमाकी चांदनीसे प्रकाशित होते हैं; वह स्वल्प गंधयुक्त फलके ऊपर भ्रमण करनेवाले भौंरेकी समानताको प्राप्त हुए हैं, जो पुरुष तुम्हारे ऐसे केशपाशकी भावना करते हैं; उसका सनातन संसारपाश कट जाता है।

श्रुतिसुरचितपाकं धीमतां स्तोत्रमेतत्
पठति य इह मर्त्यो नित्यमार्द्रान्तरात्मा ।
स भवति पदमुच्चैः सम्पदां पादनम्रः
क्षितिपमुकुटलक्ष्मीलक्षणानां चिराय ।।

जो पुरुष बुद्धिमानोंके श्रुति सुख दायक इस स्तोत्रको आर्द्र चित्तसे प्रतिदिन पढ़ते हैं, वह संपूर्ण सम्पदाओंके आधार होते हैं, और राजालोग सदा उनके चरण कमलोंमें झुकते हैं ।

पं० कन्हैयालालमिश्रमुरादाबादनिवासिकृतहिन्दीटीका-
सहितं भुवनेश्वरीस्तोत्रं संम्पूर्णम् ।

भुवनेश्वरी-कवच

शिव उवाच

पातकं दहनं नाम कवचं सर्व्वकामदम् ।
शृणु पार्व्वति वक्ष्यामि तव स्नेहात्प्रकाशितम् ।।

श्रीशिवजी बोले–हे पार्वती ! 'पातकदहननामक' भुवनेश्वरी का कवच कहता हूं, सुनो । इसके द्वारा सब कामना पूर्ण होती हैं । तुम्हारे प्रति स्नेहके कारण इसको प्रकाशित करता हूं ।।

पातकं दहनस्यास्य सदाशिव ऋषिःस्मृत : ।
छन्दोऽनुष्टुब् देवता च भुवनेशी प्रकीर्त्तिता ।
धर्मार्थकाममोक्षेषु विनियोगः प्रकीर्त्तितः ।।

इस कवचके ऋषि सदाशिव, छंद अनुष्टुप्, देवता भुवनेश्वरी और धर्मार्थकाममोक्षमें इसका विनियोग है ।।

ऐं बीजं मे शिरः पातु ह्रीं बीजं वदनं मम ।
श्रीं बीजं कटिदेशन्तु सर्वाङ्गं भुवनेश्वरी ।।
दिक्षु चैव विदिक्ष्वीयं भुवनेशी सदावतु ।।

ऐं बीज मेरे मस्तककी, ह्रीं मुखकी, श्रीं कमरकी और भुवनेश्वरी सर्वांगकी रक्षा करे। क्या दिशा क्या विदिशा सर्वत्र भुवनेशी रक्षा करे ।।

अस्यापि पठनात्सद्यः कुबेरोऽपि धनेश्वरः ।।

तस्मात्सदा प्रयत्नेन पठेयुर्म्मानवा भुवि ।।

इस कवचके पढनेके प्रसादमें कुबेरजी तत्काल धनाधिम हुए हैं, अतएव मनुष्यको यत्नसहित इसका सदा पाठ करना चाहिये ।।

भैरवी–मंत्र :

हसरैं हसकलरीं हसरौः।

हसरैं हसकलरीं हसरोः।

इस मंत्रसे पूजा और जपादि करना चाहिये।

भैरवी–ध्यान

उद्यद्भानुसहस्रकान्तिमरुणक्षौमां शिरोमालिकां
रक्तालिप्तपयोधरां जपवटीं विद्यामभीतिं वरम् ।
हस्ताब्जैदधतीं त्रिनेत्रविलसद्रक्तारविन्दश्रियं
देवीं बद्धहिमांशुरक्तमुकुटां वन्दे समन्दस्मिताम् ।।

देवीके देह की कान्ति उदय हुए सहस्र सूर्यकी समान, रक्त वर्ण-क्षौम वस्त्र पहिरे, गलेमें मुण्डमाला और दोनों स्तन रक्तसे लिप्त हैं। इनके चारों हाथोंमें जपमाला, पुस्तक, अभय मुद्रा, तथा वरमुद्रा और ललाटमें चन्द्रकला विद्यमान है, इनके तीनों नेत्र लालकमल के समान हैं, मस्तकमें रत्न मुकुट और मुखमें मृदु हास्य विराजित है ।।

भैरवी–पूजायंत्र

पद्ममष्टदलोपेतं नवयोन्याढ्यकर्णिकम्।
चतुर्द्वारसमायुक्तं भूगृहं विलिखेत्ततः ।।

नवयोनिमय कर्णिका अंकित करके उसके बाहर अष्टदल पद्म- एवं उसके बाहर चतुर्द्वार और भूगृह अंकित करनेसे यंत्र बनता है ॥

उक्तपूजाका जप होम

दीक्षां प्राप्य जपेन्मंत्रं तत्त्वलक्षं जितेन्द्रियः ।
पुष्पैर्भानुसहस्राणि जुहुयाद्ब्रह्मवृक्षजैः ॥

दशलाख जपसे इसका पुरश्चरण होता है और ढाकके फूलोंसे बारह हजार होम करना चाहिये ॥

भैरवी–स्तव

स्तुत्याऽनया त्वां त्रिपुरे स्तोष्येऽभीष्टफलाप्तये ।
यया व्रजन्ति तां लक्ष्मीं मनुजाः सुरपूजिताम् ॥

हे त्रिपुरे ! मैं वांच्छित फल प्राप्त होनेकी आशासे तुम्हारी स्तुति करता हूं । इस स्तुतिके द्वारा मनुष्यगण देवताओंसे पूजित कमलाको प्राप्त होते हैं ॥

ब्रह्मादयः स्तुतिशतैरपि सूक्ष्मरूपां
जानन्ति नैव जगदादिमनादिमूर्त्तिम् ।
तस्माद्वयं कुचनतां नवकुंकुमाभां
स्थूलां स्तुमः सकलवाङ्मयमातृभूताम् ॥

हे जननि ! तुम जगत्की आद्या हो, तुम्हारी आदि नहीं है, इसी कारण ब्रह्मादि देवतागण भी सैंकड़ों स्तुति करके सूक्ष्मरूपिणी तुमको जाननेमें समर्थ नहीं हैं । अर्थात् उनकी ऐसी वाक्सम्पत्ति नहीं है, जो तुम्हारी स्तुति करनेमें समर्थ हों । इस कारण हम नवकुंकुमकी समान कांतिवाली वाक्यरचनासे जननी स्वरूपिणी पुष्ट कुचवाली तुम्हारी स्तुति करते हैं ॥

सद्यः समुद्यतसहस्रदिवाकराभां
विद्याक्षसूत्रवरदाभयचिह्नहस्ताम् ।

नेत्रोत्पलैस्त्रिभिरलंकृतवक्त्रपद्मां
त्वां हारभाररुचिरां त्रिपुरे भजामः ।।

हे त्रिपुरे ! तुम्हारे देहकी कांति नये उदित हजार सूर्य के समान समुज्ज्वल है, तुम चारों हाथोंमें विद्या, अक्षसूत्र वर और अभय धारण करती हो । तुम्हारे तीनों नेत्रकमलों से मुखकमल अलंकृत हुआ है, तुम्हारा गला तारहारसे विराजमान है, ऐसी तुम्हारी मैं आराधना करता हूं ।

सिन्दूरपूररुचिरं कुचभारनम्रं
जन्मान्तरेषु कृतपुण्यफलैकगम्यम् ।
अन्योन्यभेदकलहाकुलमानसास्ते
जानन्ति किं जडधियस्तव रूप मम्ब ।।

हे जननि ! तुम्हारा रूप सिन्दूरकी समान लालवर्ण है, तुम्हारा देहांश कुचभारसे झुक रहा है, जिन्होंने जन्मान्तरमें बहुत पुण्य संचय किया है, वही उस पुण्यके प्रभावसे तुम्हारा ऐसा रूप देखनेमें समर्थ होते हैं, और जो पुरुष निरंतर परस्पर कलहसे कुंठित मन हैं, वह जड़मती पुरुष तुम्हारा ऐसा रूप किस प्रकार जान सकते हैं ? ।।

स्थूलां वदन्ति मुनयः श्रुतयो गृणन्ति
सूक्ष्मां वदन्ति वचसामधिवासमन्ये ।
त्वां मूलमाहुरपरे जगतां भवानि
मन्यामहे वयमपारकृपाम्बुराशिम् ।।

हे भवानी ! मुनिगण तुमको स्थूल कहकर वर्णन करते हैं, श्रुतियें तुमको स्थूल कहकर स्तुति करती हैं, कोई जन तुमको वाक्यकी अधिष्ठात्री देवता कहते हैं और अपरापर अनेक विद्वान पुरुष जगत्का मूल कारण कहते हैं, किन्तु मैं तुम्हें केवलमात्र दयासागरी जानता हूं ।।

चन्द्रावतंसकलितां शरदिन्दुशुभ्रां
पञ्चाशदक्षरमयीं हृदि भावयन्ति ।

त्वां पुस्तकं जपवटीममृताढ्यकुम्भं
व्याख्याञ्च हस्तकमलैर्दधतीं त्रिनेत्राम् ॥

हे जननि ! तुम चंद्रभूषणसे अलंकृत हो, तुम्हारे देहकी कान्ति शरद्के चंद्रमाकी समान शुभ है, तुम्हीं पचास वर्णवाली वर्णमाला हो, तुम्हारे चार हाथमें पुस्तक, जपमाला, सुधापूर्ण कलश और व्याख्यानमुद्रा विद्यमान है, तुम्हीं त्रिनेत्रा हो, साधकगण इस प्रकारसे तुमको हृदयकमलमें ध्यान करते हैं ॥

शम्भुस्त्वमद्रितनया कलितार्द्धभागो
विष्णुस्त्वमन्यकमलापरिबद्धदेहः ।
पद्मोद्भवस्त्वमसि वागधिवासभूमिः
येषां क्रियाश्च जगति त्रिपुरे त्वमेव ॥

हे जननि ! तुम्हीं अर्द्धनारीश्वर शंभुरूपसे शोभायमान हो, तुम्हीं कमलाश्लिष्टा विष्णु रूपिणी, तुम्हीं कमलयोनि ब्रह्मस्वरूपिणी हो, तुम्हीं वागधिष्ठात्री-देवी, और ब्रह्मादिककी सृष्टिक्रियाशक्ति भी तुम्हीं हो ॥

आकुञ्च्य वायुमवजित्य च वैरिषट्क-
मालोक्य निश्चलधियो निजनासिकाग्रम् ।
ध्यायन्ति मूर्ध्नि कलितेन्दुकलावतंसं
तद्रूपमम्ब कृति तस्तरुणार्कमित्रम् ॥

हे अम्ब ! विद्वान् पुरुष वायु निरोधपूर्वक काम क्रोधादि छै शत्रुओंको जीतकर अपनी नासिकाका अग्रभाग देखते हुए चन्द्रभूषण नये उदय हुए सूर्यरूप, तुम्हारे रूपका सहस्र कमलमें ध्यान करते हैं ॥

त्वं प्राप्य मन्मथरिपोर्वपुरर्द्धभागं
सृष्टिं करोषि जगतामिति वेदवादः ।
सत्यं तदद्रितनये जगदेकमात-
र्नोचेदशेषजगतः स्थितिरेव न स्यात् ॥

हे पर्वतराजपुत्रि ! तुमने मदनदमनकारी महादेवके शरीरका अर्द्धांश अवलम्बन करके जगत्को उत्पन्न किया है, वेदमें जो इस प्रकार वर्णन है, वह सत्य ही जान पड़ता है। हे विश्वजननि ! यदि ऐसा न होता, तो कभी जगत्की स्थिति संभव नहीं होती ।।

पूजां विधाय कुसुमैः सुरपादपानां
पीठे तवाम्ब कनकाचलगह्वरेषु ।
गायन्ति सिद्धवनिताः सह किन्नरीभि-
रास्वादितामृतरसारुणपद्मनेत्राः ।।

हे जननि ! जो कि सिद्धोंकी स्त्रियोंने किन्नरीगणोंके सहित एकत्र मिलकर आसव रस पान किया, इस कारण उनके नेत्रकमलोंने लोहित कांति धारण की है। वह पारिजातादि सुरतरुके फूलोंसे तुम्हारी पूजा करती हुई कैलास पर्वतकी कन्दराओंमें तुम्हारे नामको गान करती हैं ।।

विद्युद्विलासवपुषं श्रियमुद्वहन्तीं
यान्तीं स्ववासभवनाच्छिवराजधानीम् ।
सौन्दर्यराशिकमलानि विकाशयन्तीं
देवीं भजे हृदि परामृतसिक्तगात्राम् ।।

हे देवी ! जिन्होंने बिजलीकी रेखाके समान दीप्तमान् देह धारण किया है, जो अतिशय शोभा युक्त है, जो अपने वासस्थान मूलाधार पद्मसे सहस्रवार कमलमें जानेके समय सुषुम्णामें स्थित पद्मसमूहको विकासित करती है, जिनका शरीर परम अमृतसे अभिषिक्त है, वह देवी तुम्हीं हो। मैं तुम्हारी आराधना करता हूं ।।

आनन्दजन्मभवनं भवनं श्रुतीनां
चैतन्यमात्रतनुमम्ब तवाश्रयामि ।
ब्रह्मेशविष्णुभिरुपासितपादपद्मां
सौभाग्यजन्मवसतीं त्रिपुरे यथावत् ।।

हे त्रिपुरे ! तुम्हारा देह आनंद भवन है, तुम्हारे शरीरसे ही

श्रुतियें उत्पन्न हुई हैं, यह देह चैतन्यमय है, ब्रह्मा, विष्णु और महादेव तुम्हारे चरणकमलोंकी आराधना करते हैं, सौभाग्य तुम्हारे शरीरका आश्रय करके शोभा पाता है, अतएव मैं तुम्हारे ऐसे शरीरका आश्रय करता हूं ॥

सर्व्वार्थभावि भुवनं सृजतीन्दुरूपा
या तद्बिभर्त्ति पुनरर्कतनुः स्वशक्त्या ।
ब्रह्मात्मिका हरति तत् सकलं युगान्ते
तां शारदां मनसि जातु न विस्मरामि ॥

हे जननि ! जो चन्द्ररूपसे भवनोंकी सृष्टि, सूर्यरूपसे पालन और प्रलय कालमें अग्नि रूपसे उस सबको ध्वंस करती हैं, उन शारदा देवीको मैं कभी न भूलूं ॥

नारायणीति नरकार्णवतारिणीति
गौरीति खेदशमनीति सरस्वतीति ।
ज्ञानप्रदेति नयनत्रयभूषितेति
त्वामद्रिराजतनये विबुधा वदन्ति ॥

हे पर्वतराजकन्ये ! साधकगण तुम्हारी नारायणी, नरकार्णवतारिणी (नरकरूप सागरसे तारनेवाली), गौरी, खेदशमनी (दुःखनाशिनी), सरस्वती, ज्ञानदाता, और तीन नेत्रोंसे भूषिता इत्यादि रूपमें आराधना करते हैं ॥

ये स्तुवन्ति जगन्मातः श्लोकैर्द्वादशभिः क्रमात् ।
त्वामनुप्राप्य वाक्सिद्धि प्राप्नुयुस्ते परां गतिम् ॥

हे जगन्मातः ! जो पुरुष इन बारह श्लोकोंसे तुम्हारी स्तुति करते हैं, वह तुमको प्राप्त करके वाक्सिद्ध होते हैं, और देहके अंतमें परमगतिको प्राप्त होते हैं ॥

इति श्रीभैरवीतंत्रे भैरवभैरवीसंवादे कन्हैयालालकृत
हिन्दीटीकासहितं श्रीभैरवीस्तोत्रं संपूर्णम् ।

भैरवी–कवच ।

भैरवी कवचस्यास्य सदाशिव ऋषिः स्मृतः ।
छन्दोऽनुष्टुब् देवता च भैरवी भयनाशिनी ।
धर्म्मार्थकाममोक्षेषु विनियोगः प्रकीर्त्तितः ।।

भैरवी कवचके ऋषि सदाशिव, छंद अनुष्टुप्, देवता भयनाशिनी भैरवी और धर्मार्थ काममोक्षकी प्राप्ति के लिये इसका विनियोग कहा गया है ।।

हसरैं मे शिरः पातु भैरवी भयनाशिनी ।
हसकलरीं नेत्रञ्च हसरौश्च ललाटकम् ।
कुमारी सर्व्वगात्रे च वाराही उत्तरे तथा ।।
पूर्व्वे च वैष्णवी देवी इन्द्राणी मम दक्षिणे ।
दिग्विदिक्षु सर्व्वत्रैव भैरवी सर्व्वदावतु ।।
इदं कवचमज्ञात्वा यो जपेद्देविभैरवीम् ।।
कल्पकोटिशतेनापि सिद्धिस्तस्य न जायते ।।

हसरैं मेरे मस्तककी, हसकलरीं नेत्रकी, हसरौः ललाटकी, और कुमारी सर्व गात्रकी रक्षा करैं । बाराही उत्तर दिशामें, वैष्णवी पूर्व दिशामे, इन्द्राणी दक्षिण दिशामें, और भैरवी दिशा विदिशा सर्वत्र सदा रक्षा करैं । इस कवचको विना जाने जो कोई भैरवी मंत्रका जप करता है, सौ करोड़ कल्पमे भी उसको सिद्धि प्राप्त नहीं होती ।।

छिन्नमस्ता–मंत्र

श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं वज्रवैरोचनीये हुं हुं फट् स्वाहा ।

छिन्नमस्ता–ध्यान

प्रत्यालीढपदां सदैव दधतीं छिन्नं शिरःकर्त्तृकां
दिग्वस्त्रां स्वकबन्धशोणितसुधाधारां पिबन्तीं मुदा ।
नगाबद्धशिरोमणिं, त्रियनयनां हृद्युत्पलालंकृतां
रत्यांसक्तमनोभवोपरि दृढां ध्यायेज्जपासन्निभाम् ।।

दक्षे चातिसिताविमुक्तचिकुरा कर्तृस्तथा खर्परं
हस्ताभ्यां दधती रजोगुणभवो नाम्नापिसा वर्णिनी ।
यां दधती रजोगुणभवो नाम्नापिसा वर्णिनी ।
देव्याश्छिन्नकबन्धतः पतदसृग्धारां पिबन्तीं मुदा
नागाबद्धशिरोमणिर्म्मनुविदा ध्येय सदा सा सुरैः ।।
वामे कृष्णतनूस्तथैव दधती खड्गं तथा खर्परं
प्रत्यालीढपदाकबन्धविगलद्रक्त पिबन्ती मुदा ।
सैषा या प्रलये समस्तभुवनं भोक्तु क्षमा तामसी
शक्तिः सापि परात् परा भगवती नाम्ना परा डाकिनी ।

देवी प्रत्यालीढपदा हैं, अर्थात् युद्धके लिये सन्नद्ध चरण किये एक आगे एक पीछे वीरवेषसे खड़ी हैं। इन्होंने छिन्नशिर और खड्ग धारण किया है। देवीनग्न और अपने छिन्नगलेसेनिकली हुई शोणित-धारा पान करतीं हैं। मस्तकमें सर्पावद्ध मणि, तीन नेत्र, और वक्षः-स्थल कमलोंकी माला से अलंकृत है, यह रतिमे आसक्त काम पर दंडायमान है, इनके देहकी कांति जपापुष्पके समान रक्तवर्ण है। देवीके दहिने भागमें श्वेत वर्णवाली, खुले केश, कैंची और खर्पर धारिणी एक देवी है, उनका नाम "वर्णिनी" है। यह वर्णिनी देवीके छिन्न गलेसे गिरती हुई रक्तधारा पान करती है। इनके मस्तकमें नागाबद्ध मणि हैं। वाम भागमें खड्ग खर्पर धारिणी कृष्णवर्णा दूसरी देवी है, यह देवीके छिन्नगलेसे निकली हुई रुधिरधारा पान करती है। इनका दाहिना पाद आगे और वाम पाद पीछे के भागमें स्थित है। यह प्रलयकालके समय संपूर्ण जगत्को भक्षण करनेमें समर्थ हैं इनका नाम 'डाकिनी' हैं ।।

उक्तमंत्रका जप होम

लक्ष जपनेसे छिन्नमस्तामन्त्रका पुरश्चरण होता है और उसका दशांश होम करना चाहिये ।।

छिन्नमस्ता–स्तोत्र

नाभौ शुद्धसरोजरक्तविलसद्बन्धूकपुष्पारुणं
भास्वद्भास्करमण्डलं तदुदरे तद्योनिचक्रम्महत् ।
तन्मध्ये विपरीत मैथुन रतप्रद्युम्नतत्कामिनी
पृष्ठस्थां तरुणार्ककोटिविलसत्तेजः स्वरूपां शिवाम् ।।

अपनी नाभिमें शुद्ध खिला हुआ कमल है, उसके मध्यमें बंधूकपुष्पकी समान लालवर्ण प्रदीप्त सूर्यमण्डल है, उस रवि मण्डलके मध्यमें बड़ा योनिचक्र है, उसके मध्यमें विपरीत मैथुनक्रीडामें आसक्त कामदेव और रति विराजमान हैं, इन कामदेव और रतिकी पीठमें प्रचण्ड चण्डिका (छिन्नमस्ता) स्थित हैं, यह करोड़ तरुण सूर्यके समान तेजशालिनी और मंगलमयी हैं ।।

वामे छिन्नशिरोधरां तदितरे पाणौ महत्कर्तृकां
प्रत्यालीढपदां दिगन्तवसनामुन्मुक्तकेशव्रजाम् ।
छिन्नात्मीयशिरः समुल्लसदसृग्धारां पिबन्तीं परां
बालादित्यसमप्रकाशविलसन्नेत्रत्रयोद्भासिनीम् ।।

इनके बायें हाथमें छिन्न मुण्ड है, और दहिने हाथमें भीषण कृपाण शोभित हो रहा है। देवीजी एक चरण आगे एक पीछे किये वीरवेषसे स्थित हैं, दिशारूप वस्त्रोंको धारण किये हुए हैं, केश उनके खुले हुए हैं, यह अपने शिरको काटकर उसकी रुधिरधाराको पान कर रही हैं, इनके तीनों नेत्र बाल आदित्य की समान प्रकाशमान हैं।

वामादन्यत्र नालं बहु बहुलगलद्रक्तधाराभिरुच्चैः
पायन्तीमस्थिभूषां करकमललसत्कर्तृकामुग्ररूपाम् ।
रक्तामारक्तकेशीमपगतवसनां वर्णिनीमात्मशक्ति
प्रत्यालीढोरुपादामरुणितनयनां योगिनीं योगनिद्राम् ।।

इन देवीजीके दक्षिण और वाम भागमें निज शक्तिरूपा दो योगिनी विराजमान हैं। इनके दक्षिणभाग स्थित योगिनीके हाथमें बड़ी कैंची

है, तथा योगिनीकी उग्र मूर्ति है, रक्तवर्ण और रक्त केश हैं, नग्नवेष और प्रत्यालीढपदसे स्थित हैं, इसके नेत्र लाल २ हैं, इसको छिन्न मस्ता देवी अपनी देहसे निकालती हुई रुधिरधारा पान करा रही है ।।

दिग्वस्त्रां मुक्तकेशीं प्रलयघनघटाघोररूपां प्रचण्डां
दंष्ट्रादुष्प्रेक्ष्यवक्त्रोदरविवरलसल्लोलजिह्वाग्रभागाम् ।
विद्युल्लोलाक्षियुग्मां हृदयतटलसद्भोगिभीमां सुमूर्ति
सद्यश्छिन्नात्मकण्ठप्रगलितरुधिरैर्डाकिनीं वर्द्धयन्तीम् ।।

जो योगिनी वाम भागमें स्थित है, वह नग्न और खुले केश है, उसकी मूर्ति प्रलयकालके मेघके समान भयंकर है। प्रचंड स्वरूपा है, इसका मुखमण्डल दांतोंसे दुर्निरीक्ष हो रहा है, ऐसे मुखमण्डलके मध्यमें चलायमान जीभ शोभित हो रही है, इसके तीनों नेत्रबिजलीकी तरह चंचल हैं, हृदयमें सर्प विराजमान है, इसकी अत्यन्त भयानक मूर्ति है; छिन्नमस्ता देवी ऐसी डाकिनीको अपने कंठके रुधिरसे वर्द्धित कर रहीं हैं।

ब्रह्मेशानाच्युताद्यैःशिरसि विनिहितामंदपादारविंदामात्मज्ञैर्योगिमुख्यैः सुनिपुणमनिशं चिन्तिताचिंत्यरूपाम् संसारे सार-
भूतां त्रिभुवनजननीं छिन्नमस्तां प्रशस्तामिष्टां तामिष्टदात्रीं
कलिकलुषहरां चेतसा चिन्तयामि ।।

ब्रह्मा, शिव और विष्णु आदि आत्मज्ञ योगीन्द्रगण इन छिन्नमस्ता देवीके पादारविन्दको मस्तकमें धारण करते हैं; तथा प्रतिदिन सदा इनके अचिन्त्यरूपका चिन्तवन करते रहते हैं, यह संसारमें सारभूत वस्तु हैं। तीनों लोकोंको उत्पन्न करनेवाली हैं, तथा मनोरथोंको सिद्ध करनेवाली हैं, इस कारण, कलिके पापोंको हरनेवाली इन देवीजीका मैं मनमें ध्यान करता हूं ।।

उत्पत्तिस्थितिसंहृतीर्घटयितुं धत्ते त्रिरूपां तनुं
त्रैगुण्याज्जगतो मदीयविकृतिर्ब्रह्माच्युतः शूलभृत् ।

तामाद्यां प्रकृतिं स्मरामि मनसा सर्व्वार्थसंसिद्धये
यस्याः स्मेरपदारविन्दयुगले लाभं भजन्तेऽमराः ॥

यह संसारकी उत्पत्ति, स्थिति और विनाश करने के निमित्त ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र इन तीन मूर्तियोंको धारण करती हैं। देवता इनके खिले कमलके समान दोनों चरणोंका सदा भजन करते रहते हैं, संपूर्ण अर्थोंकी सिद्धिके निमित्त इन आद्या प्रकृति छिन्नमस्तादेवीका मनमें चिन्तवन करता हूं ॥

अपि पिशित–परस्त्री–योगपूजापरोऽहं
बहुविधजडभावारम्भसम्भावितोऽहम् ।
पशुजनविरतोऽहं भैरवीसंस्थितोऽहं
गुरुचरणपरोऽहं भैरवोऽहं शिवोऽहम् ॥

मैं सदा मद्यमांस, पर –स्त्रीमें आसक्त तथा योगपरायण हूं मैं जगदम्बाके चरणकमलमें संलिप्त हो बाह्य जगत्‌में रहकर जड-भावापन्न हूं। मैं पशुभावापन्न साधकके अंगसे अलग हूं। मैं सदा भैरवीगणोंके मध्यमें स्थित रहता हूं, तथा गुरुके चरणकमलोंका ध्यान करता रहता हूं। मैं भैरवस्वरूप और मैं ही शिवस्वरूप हूं ॥

इदं स्तोत्रं महापुण्यं ब्रह्मणा भाषितं पुरा
सर्व्वसिद्धिप्रदं साक्षान्महापातकनाशनम् ॥

यह महापुण्यका देनेवाला स्तोत्र पहिले ब्रह्माजीने कहा है। यह स्तोत्र सम्पूर्ण सिद्धियोंका देनेवाला है, तथा बड़े बड़े पातक और उपपातकों का नाश करनेवाला है।

यः पठेत प्रातरुत्थाय देव्याः सन्निहितोऽपि वा ।
तस्य सिद्धिर्भवेद्देवि वाञ्छितार्थप्रदायिनी ॥

जो मनुष्य प्रातःकालके समय शय्यासे उठकर वा छिन्नमस्ता देवीके पूजाकालमें इस स्तोत्रका पाठ करता है, हे देवि ! उनके मनोरथोंकी सिद्धि शीघ्र ही होती है ॥

धनं धान्यं सुतां जायां हयं हस्तिनमेव च ।
वसुन्धरां महाविद्यामष्टसिद्धिर्भवेद्ध्रुवम् ।।

इस स्तोत्रके पाठकरनेवाले मनुष्यके धन, धान्य, पुत्र, कलत्र, अश्व, हस्ती और पृथ्वी प्राप्त होती है, तथा अष्टसिद्धि और नव सिद्धियोंको निश्चयही पाता है।

वैयाघ्राजिनरञ्जितस्वजघने रम्ये प्रलम्बोदरे ।
खर्व्वेऽनिर्वचनीयपर्व्वसुभगे मुण्डावलीमण्डिते ।
कर्त्रीं कुन्दरुचिं विचित्ररचनां ज्ञानं दधाने पदे ।
मातर्भक्तजनानुकम्पितमहामायेऽस्तु तुभ्यं नमः ।।

हे मातः! तुमने व्याघ्रचर्मद्वारा अपनी जंघाओंको रंजित किया है। तुम अत्यन्त मनोहर आकृतिवाली हो। तुम्हारा उदर अधिक लम्बायमान है। तुम छोटी आकृतिवाली हो। तुम्हारा देह अनिर्वचनीय त्रिवलीसे शोभित है। तुम मुक्तावलीसे विभूपित हो। तुमने हाथमें कुन्दवत् श्वेतवर्ण विचित्र कर्त्री (कतरनी शस्त्र) धारण करी है तुम भक्तोंके ऊपर सदा दया करती हो। हे महामाये! तुमको मैं बारम्बार नमस्कार करता हूं ।

इति श्रीपण्डितकन्हैयालाल मिश्रकृतं हिन्दीटीका सहितं छिन्नमस्तास्तोत्रं संपूर्णम् ।

छिन्न मस्ता-कवच

हुं बीजात्मिका देवी मुण्डकर्तृधरापरा ।
हृदयं पातु सा देवी वर्णिनी डाकिनीयुता ।।

वर्णिनी डाकिनीसे युक्त मुण्डकर्तृको धारण करनेवाली, हूँ बीजयुक्त महादेवी मेरे हृदयकी रक्षा करे ।।

श्रीं ह्लीं हुं ऐं चैव देवी पूर्व्वस्यां पातु सर्वदा ।
सर्व्वाङ्गं मे सदा पातु छिन्नमस्ता महाबला ।।

श्रीं ह्रीं हुं ऐं बीजात्मिका देवी मेरी पूर्व दिशा और महाबला छिन्नमस्ता सदा मेरे सर्वांगकी रक्षा करे ।।

वज्रवैरोचनीये हुं फट् बीजसमन्विता ।
उत्तरस्यां तथाग्नौ च वारुणे नैर्ऋतेऽवतु ।।

'वज्रवैरोचनीये हुं फट्' इस बीजयुक्त देवी उत्तर, अग्नि, वारुण और नैऋत्य दिशामें रक्षा करे ।।

इन्द्राक्षी भैरवी चैवासितांगी च संहारिणी ।
सर्व्वदा पातु मां देवी चान्यान्यासु हि दिक्षु वै ।।

इन्द्राक्षी, भैरवी, असितांगी और संहारिणी देवी सर्वदा मेरी अन्यान्य सब दिशाओंमें रक्षा करे ।।

इदं कवचमज्ञात्वा यो जपेच्छिन्नमस्तकाम् ।
न तस्य फलसिद्धिः स्यात्कल्पकोटिशतैरपि ।।

इस कवचको बिना जाने जो पुरुष छिन्नमस्ताका मंत्र जपता है सो करोड़ कल्पमें भी उसको फल प्राप्त नहीं होता ।।

इति छिन्नमस्ताकवचम् ।

धूमावती–मंत्र

घूँ धूँ धूमावती स्वाहा ।

इस मंत्रसे धूमावतीकी आराधना करे ।

विवर्णा चञ्चला रुष्टा दीर्घा च मलिनाम्बरा ।
विवर्णकुन्तला रूक्षा विधवा विरलद्विजा ।।
काकध्वजरथारूढा विलम्बितपयोधरा ।
सूर्यहस्तातिरूक्षाक्षी धृतहस्ता वरान्विता ।।
प्रवृद्धघोणा तु भृशं कुटिला कुटिलेक्षणा ।
क्षुत्पिपासार्द्दिता नित्यं भयदा कलहप्रिया ।।

धूमावती देवी विवर्णा, चंचला, रुष्टा और दीर्घांगी हैं, इनके पहिरनेके वस्त्र मलिन, केश विवर्ण और रूक्ष हैं, संपूर्ण दांत छीदे और दोनों स्तन लम्बे हैं, यह विधवारूपधारिणी और काकध्वजावाले रथमें विराजमान हैं। देवीके दोनों नेत्र रूक्ष हैं। इनके एक हाथमें सूर्य और दूसरे हाथमें वरमुद्रा है। नासिका बड़ी और देह तथा नेत्र कुटिल हैं। यह भूंख प्याससे कातर हैं। इसके अतिरिक्त यह भयंकर मुखवाली और कलहमें तत्पर है ॥

धूमावती मंत्रका जप होम

एक लक्ष मंत्र जपनेसे इसका पुरश्चरण होता है और गिलोयकी समिधाओंसे उसका दशांश होम करे।

धूमावती–स्तव

भद्रकाली महाकाली डमरूवाद्यकारिणी।
स्फारितनयना चैव टक्कटंकितहासिनी ॥
धूमावती जगत्कर्त्री शूर्पहस्ता तथैव च।
अष्टनामात्मकं स्तोत्रं यः पठेद्भक्तिसंयुक्तः ॥
तस्य सर्व्वार्थसिद्धिः स्यात्सत्यं सत्यं हि पार्वति ॥

भद्रकाली, महाकाली, डमरू वाजा बजानेवाली, खोले हुए नेत्रवाली, टकटकति हासिनी, धूमावती जगत्कर्त्री, छाज हाथमें लिये धूमावतीका यह अष्टनामात्मकस्तोत्र पढ़नेसे सर्वार्थकी सिद्धि होती है॥

धूमावती–कवच

धूमावती मुखं पातु धूं धूं स्वाहास्वरूपिणी।
ललाटे विजया पातु मालिनी नित्यसुंदरी।

धूंधूंस्वाहास्वरूपिणी धूमावती मेरे मुख, और नित्य सुंदरी मालिनी और विजया मेरे ललाटकी रक्षा करें॥

कल्याणी हृदयं पातु हसरीं नाभिदेशके।
सर्व्वांगं, पातु देवेसी निष्कला भगमालिनी ॥

कल्याणी हृदयकी, हसरीं नाभिकी और निष्कला भगमालिनी देवी सर्वांगकी रक्षा करैं ।।

सुपुण्यं कवचं दिव्यं यः पठेद्भक्तिसंयुक्तः ।।
सौभाग्यमतुलं प्राप्त चांते देवीपुरं यथौ ।।

इस पवित्र दिव्य कवचको भक्तिपूर्वक पाठ करनेसे इस लोकमें अतुल सुखसंभोग कर अन्तसमय देवी–पुरमें जाता है ।।

बगला–मंत्र

ॐ ह्लीं बगलामुखि सर्व्वदुष्टानां
वाचं मुखं स्तम्भय जिह्वां कीलय
कीलय बुद्धि नाशय ह्लीं ॐ स्वाहा ।।

इस षट्त्रिंशदक्षर मंत्रसे बगलामुखीकी आराधना करे ।।

बगलामुखी–ध्यान

मध्ये सुधाब्धिमणिमण्डपरत्नवेदी-
सिंहासनोपरिगतां परिपीतवर्णाम् ।
पीताम्बराभरणमाल्यविभूषिताङ्गीं
देवीं स्मरामि धृतमुद्गरवैरिजिह्वाम् ।।
जिह्वाग्रमादाय करेण देवीं वामेन शत्रून् परिपीडयतीम् ।
गदाभिघातेन च दक्षिणेन पीताम्बराढ्यां द्विभुजां नमामि ।।

सुधासागरमें मणिमय मण्डप है, उसमें रत्ननिर्मित वेदीके ऊपर सिंहासन है, बगलामुखी देवी उसी सिंहासनपर विराजमान हैं । यह पीतवर्ण और पीले वस्त्र पहिरे हुई हैं, पीतवर्णके ही गहने और पीतवर्णकी ही मालासे विभूषित हैं, इनके एक हाथमें मुद्गर और दूसरे हाथमें वैरीकी जीभ है, यह बायें हाथमें शत्रुकी जीभका अग्रभाग धारण करके दहिने हाथके गदाघातसे शत्रुको पीड़ित कर रही हैं । बगलामुखी देवी पीतवस्त्रसे आवृत और दो भुजावाली हैं ।।

बगलामुखी—यन्त्र

त्र्यस्त्रं षडस्त्रं वृत्तमष्टदलपद्मभूपुरान्वितम् ।

प्रथम त्रिकोण और उसके बाहर षट्कोण अंकित करके वृत्तं और अष्टदल पद्म अंकित करै । उसके बहिर्भागमें भूपुर अंकित करके यंत्र प्रस्तुत करे ।।

बगलामुखी मन्त्रका जप होम ।

पीले वस्त्र पहिरे, हल्दीकी ग्रन्थिसे निर्मित अर्थात् हल्दीकी गांठें लगी मालासे नित्य एक लाख जप करै । और पीलेवर्णके पुष्पोंसे उसका दशांश होम करै ।।

बगला—स्तोत्र

बगला सिद्धविद्या च दुष्टनिग्रहकारिणी ।
स्तम्भिन्याकर्षिणी चैव तथोच्चाटनकारिणी ।।
भैरवी भीमनयना महेशगृहिणी शुभा ।
दशानामात्मकं स्तोत्रं पठेद्वा पाठयेद्यदि ।।
स भवेत् मंत्रसिद्धश्च देवीपुत्र इव क्षितौ ।।

बगला, सिद्धविद्या, दुष्टोंका निग्रह करनेवाली, स्तम्भिनी, आकर्षिणी, उच्चाटन करनेवाली, भैरवी, भयंकर नेत्रोंवाली, महेशकी गृहिणी, शुभा यह दशनामात्मक देवी स्तोत्र जो पुरुष पाठ करता है, अथवा दूसरेसे पाठ कराता हैं, वह मन्त्रसिद्ध होकर पार्वतीके पुत्रकी समान पृथ्वीमें विचरण करता है ।।

बगला—कवच

ॐ ह्लीं मे हृदयं पातु पादौ श्रीबगलामुखी ।
ललाटे सततं पातु दुष्टनिग्रहकारिणी ।।

'ॐ ह्लीं' यह बीज मेरे हृदय, श्रीबगलामुखी दोनों पैर और दुष्टनिग्रहकारिणी सदा मेरे ललाटकी रक्षा करै ।।

रसनां पातु कौमारी भैरवी चक्षुषोर्म्मम ।
कटौ पृष्टे महेशानी कर्णौ शङ्करभामिनी ।।

कौमारी मेरी जीभकी, भैरवी नेत्रोंकी महेशानी कमर तथा पीठ और महेशभामिनी कानोंकी रक्षा करै ।।

वर्ज्जितानि तु स्थानानि यानि च कवचेन हि ।
तानि सर्व्वाणि में देवी सततं पातु स्तम्भिनी ।।

जो जो स्थान कवचमें नहीं कहे गये, स्तम्भिनी देवी मेरे उन उन सब स्थानोंकी सदा रक्षा करै ।।

अज्ञात्वा कवचं देवि यो भजेद्बगलामुखीम् ।
शस्त्राघातमवाप्नोति सत्यं सत्यं न संशयः ।।

हे देवि ! इस वकचको बिना जाने जो पुरुष बगलामुखीकी उपासना करता है, उसकी शस्त्राघातसे मृत्यु होती है । इसमें संशय नहीं ।।

मातंगी—मंत्र

ॐ ह्रीं क्लीं हूं मातङ्ग्यै फट् स्वाहा ।

इस मंत्रसे मातंगी देवीकी उपासनादि करे ।।

मातंगी—ध्यान

श्यामाङ्गीं शशिशेखरां त्रिनयनां रत्नसिंहासनस्थिताम्
वेदैःबाहुदण्डैरसिखेटकपाशांकुशधराम् ।।

मातंगी देवी श्यामवर्ण, अर्द्धचन्द्रधारिणी और त्रिनयन हैं, यह चार हाथमें खड्ग, खेटक पाश और अंकुश यह चारों अस्त्र धारण करके रत्ननिर्मित सिंहासन पर विराजमान हैं ।।

जप—होम

छै हजार जपसे इस मंत्रका पुरश्चरण होता है, और जपका दशांश घृत, शर्करा और मधुमिश्रित ब्रह्मवृक्षकी समिधासे होम करै ।।

मातंगी–यंत्र

षट्कोणाष्टदलं पद्मं लिखेद्यन्त्रं मनोहरम् ।।

षट्कोण अंकित करके उसके बाहर अष्टदलपद्म अंकित करें फिर इस षट्कोणमें देवीका मूल मंत्र लिखकर यंत्र प्रस्तुत करें ।।

मातंगी–स्तव

ईश्व –उवाच

आराध्य मातश्चरणाम्बुजे ते ब्रह्मादयो विश्रुतकीर्त्तिमापुः ।
अन्ये परं वा विभवंमुनीन्द्राःपरां श्रियं भक्तिभरेण चान्ये ।।

हे मातः ! ब्रह्मादि देवताओंने तुम्हारे चरणकमलोंकी आराधना करके विश्रुत कीर्तिलाभ की है। दूसरे मुनीन्द्र भी परम विभवको प्राप्त हुए हैं। और अपर अनेकोंने भक्तिभाव से तुम्हारे चरणकमलोंकी आराधना करके अत्यन्त श्री लाभ की है ।।

नमामि देवीं नवचन्द्रमौलिं मातङ्गिनीं चन्द्रकलावतंसाम् ।
आम्नायकृत्यप्रतिपादितार्थं प्रबोधयन्तीं हृदिसादरेण ।।

जिनके माथेमें चन्द्रमाकी कला शोभा पाती है, जो वेद प्रतिपादित अर्थको सर्वदा आदरसे हृदयमें प्रबोधित करती हैं । उन्हीं मातंगिनी देवीको नमस्कार है ।।

विनम्रदेवासुरमौलिरत्नैर्विराजितं ते चरणारविन्दम् ।
अकृत्रिमाणां वचसां विगुल्फं पादात्पदं सिञ्जितनूपुराभ्याम् ।
कृतार्थयन्तीं पदवीं पदाभ्यामास्फालयन्तीं कुचवल्लकीं ताम् ।
मातङ्गिनीं मद्धृदयेधिनोमि लीलंकृतां शुद्ध नितम्बबिम्बाम् ।।

हे देवी ! तुम्हारे चरणकमल शिर झुकाये देवासुरोंके शिरोंके रत्नद्वारा विराजित हैं। तुम अकृतिम वाक्यके अनुकूल हो, तुम्हीं शब्दायमान नुपूरयुक्त अपने दोनों चरणोंसे इस पृथ्वीमण्डलको कृतार्थ करती हो, तुम्हीं सदा बीणा बजाती हो, तुहारे नितम्बबिम्ब अत्यन्त शुद्ध हैं, मैं तुम्हारी हृदयमें चिन्ता करता हूं ।।

तालीदलेनापितकर्णभूषां माध्वीमदाघूर्णितनेत्रपद्माम् ।
घनस्तनीं शम्भुवधूं नमामि तडिल्लताकान्तवलक्षभूषाम् ।।

तुमने तालीदल (ताल) का करोंमें विभूषण धारण किया है, माध्वीक मद्यपानसे तुम्हारे नेत्रकमल विघूर्णित होते हैं, तुम्हारे स्तन अत्यन्त कठिन हैं, तुम महादेवजीकी वधू हो, तुम्हारी कान्ति विद्युल्लताकी समान मनोहर है, तुमको नमस्कार है ।।

चिरेण लक्षं प्रददातु राज्यं स्मरामि भक्त्या जगतामधीशे ।
वलित्रयाङ्गं तव मध्यमम्ब नीलोत्पलं सुश्रियमावहन्तीम् ।।

हे मातः! मैं भक्तिसहित तुमको स्मरण करता हूं, तुम चिरनष्ट अर्थात् बहुतकालका नष्ट हुआ राज्य प्रदान करती हो, तुम्हारे देह का मध्यभाग तीन वलियोंसे अंकित है, तुमने नीलोत्पलकी समान श्री धारण की है ।।

कान्त्या कटाक्षैर्जगतां त्रयाणां विमोहयतीं सकलान् सुरेशि ।
कदम्बमालाञ्चितकेशपाशं मातङ्गकन्यां हृदि भावयामि ।।

हे सुरेश्वरी ! तुम कांति और कटाक्षद्वारा त्रिजगत्वासी मनुष्यों को मोहित करती हो, तुम्हारे केशपाश कदम्बमालासे बंधे हुए हैं। तुम्हीं मातंगकन्या हो, मैं तुम्हारी हृदयमें भावना करता हूं ।

ध्यायेयमारक्तकपोलबिम्बं बिम्बाधरन्यस्तललाम वश्यम् ।
अलोललीलाकमलायताक्षं मन्दस्मितं ते वदनं महेशि ।।

हे देवि ! तुम्हारे जिस मुखकपोलतटपर रक्तवर्ण बिम्बाधर परम सुन्दरतासे पूर्ण है, जिसमें चञ्चल अलकावली विराजमान है, नेत्र बड़े और जिस मुखमें मंद मंद हास्य शोभा पाता है, उसी मुखकमलका ध्यान करता हूं ।।

स्तुत्याऽनया शंकरधर्मपत्नी मातंगिनीं वागधिदेवतां ताम ।
स्तुवन्ति ये भक्तियुता मनुष्याःपरां श्रियं नित्यमुपाश्रयन्ति ।।

जो पुरुष भक्तिमान् होकर शंकरकी धर्म्मपत्नी वाणीकी अधिष्ठात्री मातंगिनीकी इस स्तवद्वारा स्तुति करता है, वह सर्वदा परम श्रीको प्राप्त करता है ।।

मातंगिनी–कवच ।

शिरोमातंगिनी पातु भुवनेशी तु चक्षुषी ।
तोतला कर्णयुगलं त्रिपुरा वदनं मम ।।

मातंगिनी मेरे मस्तककी, भुवनेशी चक्षुकी, तोतला कर्ण और त्रिपुरा मेरे मुखकी रक्षा करै ।।

पातु कण्ठे महामाया हृदि माहेश्वरी तथा ।
त्रिपुरा पार्श्वयोः पातु गुह्ये कामेश्वरी मम ।।

महामाया कण्ठकी, माहेश्वरी हृदयकी, त्रिपुरा पार्श्व और कामेश्वरी गुह्यकी रक्षा करै ।।

ऊरुद्वये तथा चण्डी जङ्घायाञ्च रतिप्रिया ।
महामाया पदे पायात्सर्वाङ्गेषु कुलेश्वरी ।।

चण्डी दोनों ऊरुकी, रतिप्रिया जंघाकी, महामाया पद और कुलेश्वरी सर्व्वांगकी रक्षा करै ।।

य इदं धारयेन्नित्यं जायते सर्वदानवित् ।
परमैश्वर्य्यमतुलं प्राप्नोति नात्र संशयः ।।

जो पुरुष इस कवचको धारण करते हैं, वह सर्वदानज्ञ (सदा दानी) होते हैं, और अतुल ऐश्वर्य्यको प्राप्त होते हैं, इसमें सन्देह नहीं ।।

कमला–मंत्र ।

'श्रीं' इस एकाक्षर मंत्रसे ही कमला (लक्ष्मी) की उपासना करै ।।

कमला–ध्यान ।

कान्त्या काञ्चनसन्निभां हिमगिरिप्रख्यैश्चतुर्भिर्गजै-
र्हस्तोत्क्षिप्तहिरण्मयामृतघटैरासिच्यमानां श्रियम् ।

बिभ्राणां वरमब्जयुग्ममभयं हस्तैः किरीटोज्ज्वलां
क्षौमाबद्धनितम्बबिम्बललितां वन्देऽरविन्दस्थिताम् ।।

देवी स्वर्णकी समान कान्तिमान् हैं, इनको हिमगिरिकी समान बड़े आकारवाले चार हाथी सूड उठाकर सुधासे पूर्ण सुवर्ण घड़ोंसे अभिषेक करते हैं, इनके चार हाथमें वर और अभयमुद्रा तथा दो कमल हैं। मस्तकमें रत्नमुकुट पट्टवस्त्र धारे हैं और यह पद्म (कमल) पर स्थित हैं ।।

जप–होम

बारह लक्ष जपनेंसे इस मन्त्रका पुरश्चरण होता है और घृत मधु तथा शर्करायुक्त बारह हजार पद्म वा तिलद्वारा होम करना चाहिये ।।

कमला–स्तोत्र

श्रीलक्ष्म्यै नमः

श्रीशंकर उवाच

अथातः संप्रवक्ष्यामि लक्ष्मीस्तोत्रमनुत्तमम् ।
पठनात् श्रवणाद्यस्य नरो मोक्षमवाप्नुयात् ।।

श्रीमहादेवजी बोले, हे पार्व्वति ! अब अति उत्तम लक्ष्मीस्तोत्र कहता हूं, इसको पढ़ने वा सुननेसे मनुष्योंको मुक्ति प्राप्त होती है ।।

गुह्याद् गुह्यतरं पुण्यं सर्वदेवनमस्कृतम् ।
सर्वमंत्रमयं साक्षाच्छृणु पर्वतनन्दिनि ।।

हे पर्वतनन्दिनि ! यह गुह्यसे गुह्यतर सर्वदेवोंसे नमस्कृत और सर्वमन्त्रमय है, सुनो ।।

अनन्तरूपिणी लक्ष्मीरपारगुणसागरी ।
अणिमादिसिद्धिदात्री शिरसा प्रणमाम्यहम् ।।

हे देवि लक्ष्मि ! तुम अनन्तरूपिणी और गुणोंकी सागरस्वरूप हो। तुम्हीं प्रसन्न होकर अणिमादि सिद्धि देती हो, तुमको मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूं ।।

आपदुद्धारिणी त्वं हि आद्या शक्तिः शुभा परा ।

आद्या आनन्ददात्री च शिरसा प्रणमाम्यहम् ।।

हे देवि ! तुम्हीं प्रसन्न होकर नम्र हुए भक्तोंको विपदसे उद्धार करती हो, तुम्हीं कल्याणी और आद्या शक्ति हो, तुम्हीं सबकी आदि और तुम्हीं आनन्ददायिनी हो, तुमको मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूं ।।

इन्दुमुखी इष्टदात्री इष्टमंत्रस्वरूपिणी ।

इच्छामयी जगन्मातः शिरसा प्रणमाम्यहम् ।।

हे देवि जगन्माता लक्ष्मी ! तुम्हीं अभीष्ट प्रदान करती हो, तुम्हारा मुख पूर्णचन्द्रमाकी समान प्रकाशमान है, तुम्हीं इष्टमन्त्र-स्वरूपिणी और इच्छामयी हो, तुमको मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूं ।।

उमा उमापतेस्त्वन्तु ह्युत्कण्ठाकुलनाशिनी ।

उर्व्वीश्वरी जगन्मातर्लक्ष्मि देवि नमोऽस्तु ते ।।

हे देवि लक्ष्मि ! तुम्हीं उमापतिकी उमा हो, तुम्हीं उत्कण्ठित मनुष्योंकी उत्कण्ठाका नाश करती हो, तुम्हीं पृथ्वीकी ईश्वरी हो तुमको नमस्कार है ।।

ऐरावतपतिपूज्या ऐश्वर्य्याणां प्रदायिनी ।

औदार्य्यगुणसम्पन्ना लक्ष्मि देवि नमोऽस्तु ते ।।

हे देवि ! तुम्हीं ऐरावतपति देवराज इन्द्रकी वन्दनीय हो, तुम्हीं, प्रसन्न होनेपर सम्पूर्ण ऐश्वर्य्य प्रदान कर सकती हो, तुम्हीं उदार गुणोंसे विभूषित हो, तुमको नमस्कार है ।।

कृष्णवक्षःस्थिता देवि कलिकल्मषनाशिनी ।

कृष्णचित्तहरा कर्त्री शिरसा प्रणमाम्यहम् ।।

हे कमले ! तुम सदा श्रीकृष्णके वक्षःस्थलमें विराजमान रहती हो, तुम्हारे बिना और कोई भी कलिकल्मषध्वंस करनेमें समर्थ नहीं

है, तुमनेही श्रीकृष्णका चित्त हरण किया है, अतएव तुम्हीं सर्व्वकर्त्री हो, तुमको मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूं ॥

कन्दर्पदमना देवि कल्याणी कमलानना ।
करुणार्णवसम्पूर्णा शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥

हे देवि ! तुमने ही कामका दर्प हरण किया है, तुम्हीं कल्याणमयी हो, तुम्हारा मुख कमलकी समान मनोहर है, और तुम्हीं दयाकी एक मात्र सागरस्वरूप हो, मैं तुमको मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूं ।

खञ्जनाक्षी खंजनासा देवि खेदविनाशिनी ।
खंजरीटगतिश्चैव शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥

हे देवि ! तुम खञ्जनाक्षी अर्थात् खञ्जनके नेत्रकी समान सुनयना हो, तुम्हारी नासिका गरुड़की नासिकाके समान मनोहर है, तुम आश्रित जनोंका खेद विनाश करती हो, और तुम्हारी गति खञ्चरीटके समान है, मैं तुमको मस्तक झुकाकर नमस्कार करता हूं ॥

गोविन्दवल्लभा देवी गन्धर्व्वकुलपावनी ।
गोलोकवासिनी मातः शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥

हे जननि ! तुम्हीं वैकुण्ठपति गोविन्दकी प्रियतमा अर्थात् प्यारी हो, तुम्हारे अनुग्रहसे ही गन्धर्वकुल पवित्र हुआ है, तुम्हीं सर्वदा गोलोकधाममें विहार करती हो, मैं मस्तक झुकाकर तुमको प्रणाम करता हूं ॥

ज्ञानदा गुणदा देवि गुणाध्यक्षा गुणाकरी ।
गन्धपुष्पधरा मातः शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥

हे मातः ! एकमात्र तुम्हीं ज्ञानकी देनेवाली और एकमात्र तुम्हीं गुणकी दायिनी हो, तुम्हीं गुणोंकी अध्यक्ष और तुम्हीं गुणोंकी आधार हो । तुम्हीं गन्धपुष्प द्वारा निरन्तर शोभित रहती हो, मैं मस्तक झुकाकर तुमको नमस्कार करता हूं ॥

घनश्यामप्रिया देवि घोरसंसारतारिणी।
घोरपापहरा चैव शिरसा प्रणमाम्यहम्॥

हे कमले! तुम्हीं घनश्याम हरिकी प्रियतमा अर्थात् प्यारी हो, एकमात्र तुम्हीं घोरतर संसारसागरसे रक्षा कर सकती हो, तुम्हारे अतिरिक्त और कोई भी भयंकर पापोंसे उद्धार करनेमें समर्थ नहीं है अत एव मैं तुमको मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूं।

चतुर्व्वेदमयी चिन्त्या चित्तचैतन्यदायिनी।
चतुराननपूज्या च शिरसा प्रणमाम्यहम्॥

हे देवि! तुम्हीं चतुर्वेदमयी और एकमात्र तुम्हीं योगिगणोंकी चिन्तनीय हो, तुम्हारे प्रसादसे ही चित्तमें चैतन्यताका संचार होता है, जगत्पति चतुरानन (ब्रह्मा) भी तुम्हारी पूजा करते हैं, अतएव हे जननि! मैं तुमको मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूं॥

चैतन्यरूपिणी देवि चन्द्रकोटिसमप्रभा।
चन्द्रार्कनखरज्योतिर्लक्ष्मि देवि नमाम्यहम्॥

हे देवि! तुम्हीं चैतन्यरूपिणी हो, तुम्हारे देहकी कांति करोड़ चन्द्रमाके समान रमणीय है, तुम्हारे चरणोंकी दीप्ति चन्द्रसूर्यकी कांतिसे भी अधिक देदीप्यमान है, मैं तुमको नमस्कार करता हूं॥

चपला चतुराध्यक्षी चरमे गतिदायिनी।
चराचरेश्वरी लक्ष्मि शिरसा प्रणमाम्यहम्॥

हे देवि लक्ष्मि! तुम सदा एक स्थानमें वास नहीं करतीं, इसी लिये तुम्हारा 'चपला' नाम हुआ है, अंतकालमें एकमात्र तुम्हीं गति देती हो, तुम्हीं चराचर जीवोंकी अधीश्वरी हो, मैं तुमको मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूं॥

छत्रचामरयुक्ता च छलचातुर्य्यनाशिनी।
छिद्रौघहारिणी मातः शिरसा प्रणमाम्यहम्॥

हे जननि ! तुम्हीं शोभायमान छत्र और चामरसे परम शोभा पाती हो, छलचातुरी सब ही तुम्हारे प्रभावसे नाशको प्राप्त होती है तुम्ही छिद्र अर्थात् पापसमूह नष्ट करती हो; अतएव मैं मस्तक झुकाकर तुमको प्रणाम करता हूं ॥

जगन्माता जगत्कर्त्री जगदाधाररूपिणी ।
जयप्रदा जानकी च शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥

हे जननि ! तुम्हीं जगत्की जननी हो, तुम्हीं जगत्का एक मात्र आधार तथा जयदात्री हो और तुम्हीं जानकी रूपसे पृथ्वीमें अवतीर्ण हुई हो, मैं मस्तक झुकाकर तुमको नमस्कार करता हूं ॥

जानकीशप्रिया त्वं हि जनकोत्सवदायिनी ।
जीवात्मनां च त्वं मातः शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥

हे जनिन ! तुम्हीं जानकीपति रघुवरकी सहधर्मिणी हो, तुम्हीं जनक नगरपतिको आनन्दकी देनेवाली हो, और तुम्हीं सर्वजीवोंकी आत्मस्वरूप हो, मैं मस्तक झुकाकर तुमको प्रणाम करता हूं ॥

झिञ्जीरवस्वना देवि झंझावातनिवारिणी ।
झर्झरप्रियवाद्या च शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥

हे देवि ! तुम्हारे कण्ठका स्वर झिञ्जीरवकी समान मधुर है, तुम्हारें अनुग्रहसे झंझा वर्षायुक्त वायुके हाथसे सहजमें ही रक्षा लाभ होता है, तुम गोवर्द्धनादि पर्व्वतोंमें झर्झरवाद्यमें अत्यन्त अनुरक्त हो, मैं तुमको मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूं ॥

अर्थप्रदायिनी त्वं हि त्वञ्च ठकाररूपिणी ।
ढक्कादिवाद्यप्रणया डम्फवाद्यविनोदिनी ॥
डमरूप्रणया मातः शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥

हे जननि ! एकमात्र तुम्हीं अर्थ प्रदान करती हो, तुम्हीं ठकाररूपिणी (चन्द्रमण्डलस्वरूपिणी) हो, डमरू और डम्फ वाद्यमें तुमको

अत्यन्त प्रसन्नता होती है, और ढक्कादि वाद्य (एक बाजा) तुम्हारा प्रीतिकर है, मैं मस्तक झुकाकर तुम्हारे चरण कमलोंमें प्रणाम करता हूं ॥

तप्तकांचनवर्णाभा त्रैलोक्यलोकतारिणी ।
त्रिलोकजननी लक्ष्मि शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥

हे देवि लक्ष्मि ! तुम्हारा वर्ण तपे हुए काञ्चनकी समान उज्ज्वल है, तुम त्रैलोक्यवासी जीवोंकी रक्षा करती हो, तुम्हीं त्रिलोककी उत्पन्न करनेवाली हो, मैं मस्तक झुकाकर तुमको प्रणाम करता हूं ॥

त्रैलोक्यसुंदरी त्वं हि तापत्रयनिवारिणी ।
त्रिगुणधारिणी मातः शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥

हे जननि ! तुम त्रिभुवनमें परम रूपवती हो, तुम्हीं तीनों तापों को विनाश करती हो, तुम्हीं सत्त्व, रज और तमोगुण धारिणी हो, मैं तुमको मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूं ॥

त्रैलोक्यमंगला त्वं हि तीर्थमूलपदद्वया ।
त्रिकालज्ञा त्राणकर्त्री शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥

हे देवि ! तुम्ही तीनों लोकोंका मंगल विधान करती हो, तुम्हारे चरणकमलोंमें सम्पूर्ण तीर्थ विराजमान रहते हैं, तुम भूत; भविष्य और वर्तमान तीनों कालोंको जानती हो, तुम्हीं जीवोंकी रक्षा करने वाली हो, मैं तुमको मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूं ॥

दुर्गतिनाशिनी त्वं हि दारिद्र्यापद्विनाशिनी ।
द्वारकावासिनी मातः शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥

हे जननी ! तुम आपदा, दुर्गति और दरिद्र मनुष्यकी दरिद्रता दूर करती हो, तुम्हीं द्वारकापुरीमें अवस्थिति करके विराजमान रहती हो, मैं मस्तक झुकाकर तुमको प्रणाम करता हूं ॥

देवतानां दुराराध्या दुःखशोकविनाशिनी ।
दिव्याभरणभूषांगी शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥

हे देवि ! देवता भी बहुत आराधना अथवा बहुत कष्टसे तुम
प्राप्त होते हैं, तुम प्रसन्न होनेपर सम्पूर्ण शोक दुःख नष्टकर देती ह
तुम दिव्य भूषणोंसे परम शोभायमान हो, मैं मस्तक झुकाकर तुम
प्रणाम करता हूं ।।

दामोदरप्रिया त्वं हि दिव्ययोगप्रदर्शिनी ।
दयामयी दयाध्यक्षी शिरसा प्रणमाम्यहम् ।।

हे जननि ! तुम दामोदरकी प्रिया हो, तुम्हारे प्रसादसे ही दि
योग प्राप्त किया जाता है, तुम्हीं दयामयी और दयाकी अधिष्ठा
हो, तुमको मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूं ।।

ध्यानातीता धराध्यक्षा धनधान्यप्रदायिनी ।
धर्म्मदा धैर्यदा मातः शिरसा प्रणमाम्यहम् ।।

हेमातः ! तुम ध्यानके भी अतीत हो, तुम्हीं पृथ्वीकी अध्य
और तुम्हीं भक्तोंके धन धान्य इत्यादि प्रदान करती हो, तुम्हीं ध
और धैर्य देती हो, मैं मस्तक झुकाकर तुमको प्रणाम करता हूं ।।

नवगोरोचना गौरी नन्दनन्दनगेहिनी ।
नवयौवनचार्वङ्गी शिरसा प्रणमाम्यहम् ।।

हे देवि ! तुम नवगोरोचनकी समान गौरवर्ण हो, तुम्हीं न
नन्दन हरिकी प्रियतमा गेहिनी हो, तुम्हीं नवयौवनके कारण प
कान्तिमती हो, मैं तुमको मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूं ।।

नानारत्नादिभूषाढ्या नानारत्नप्रदायिनी ।
नितम्बिनी नलिनाक्षी लक्ष्मि देवि नमोऽस्तु ते ।।

हे देवि ! तुम अनेक प्रकारके रत्नादि भूषणोंसे विभूषित हो
परम शोभा पाती हो, तुम्हीं प्रसन्न होने पर नानारत्न प्रदान कर
हो, तुम्हीं विशाल नितम्बवती और तुम्हारे नेत्र कमलके पत्तेकी सम
चौड़े हैं, तुमको शिर झुकाकर नमस्कार करता हूं ।।

निधुवनप्रेमानन्दा निराश्रयगतिप्रदा ।
निर्व्विकारा नित्यरूपा लक्ष्मिदेवि नमोऽस्तु ते ।।

हे लक्ष्मीदेवि ! तुम विकाररहित और नित्यरूपिणी हो, निधुवन में विहार करनेसे तुमको प्रेमानन्दकी प्राप्ति होती है, तुम्हीं निराश्रय जनको गति देती हो, तुमको नमस्कार है ।।

पूर्णानन्दमयी त्वं हि पूर्णब्रह्मसनातनी ।
परा शक्तिः परा भक्तिर्लक्ष्मि देवि नमोऽस्तु ते ।।

हे देवि कमले ! तुम पूर्णानन्दमयी और तुम्हीं पूर्णब्रह्मस्वरूपिणी हो, तुम्हीं परमशक्ति और तुम्हीं परमभक्तिस्वरूपा हो, तुमको नमस्कार है ।।

पूर्णचन्द्रमुखी त्वं हि परानन्दप्रदायिनी ।
परमार्थप्रदा लक्ष्मि शिरसा प्रणमाम्यहम् ।।

हे देवि ! तुम्हारा वदन पूर्णचन्द्रमाकी समान शोभायमान है, तुम्हीं परमानन्द और परमार्थ दान करती हो, मैं मस्तक झुकाकर तुमको प्रणाम करता हूं ।।

पुण्डरीकाक्षिणी त्वं हि पुण्डरीकाक्षगेहिनी ।
पद्मरागधरा त्वं हि शिरसा प्रणमाम्यहम् ।।

हे जननि ! तुहारे नेत्र कमलकी समान विस्तृत हैं, तुम्हीं पुण्डरीकाक्ष हरिकी गेहिनी हो, तुम्हीं पद्मरागमणि धारणकरके परम शोभा पाती हो, मैं मस्तक झुकाकर तुमको प्रणाम करता हूं ।।

पद्मा पद्मासना त्वं हि पद्ममालाविधारिणी ।
प्रणवरूपिणी मातः शिरसा प्रणमाम्यहम् ।।

हे मातः ! तुम पद्मासनपर विराजमान रहती हो, इसी लिये तुम्हारा 'पद्मा' नाम हुआ है, तुम्हारे गलेमें मनोहर पद्ममाला पड़ी रहती है, तुम्हीं ओंकाररूपिणी हो, मैं तुमको मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूं ।।

फुल्लेन्दुवदना त्वं हि फणिवेणिविमोहिनी ।
फणिशायिप्रिया मातः शिरसा प्रणमाम्यहम् ।।

हे जननि ! तुम्हारा मुख निर्मल चन्द्रमाकी किरणके समा निर्मल है, तुम्हारे शिरकी वेणीने फणिकी समान लम्बायमान होक परम शोभा धारण की है । तुम्हीं क्षीरोद सागरमें शेषशय्यापर शय करनेवाले देवदेव हरिकी गृहिणी हो, मैं मस्तक झुकाकर तुमको प्रणा करता हूं ।।

विश्वकर्त्री विश्वभर्त्री विश्वत्रात्री विश्वेश्वरी ।
विश्वाराध्या विश्वबाह्या लक्ष्मि देवि नमोऽस्तु ते ।।

हे लक्ष्मीदेवी ! तुम्हीं संसारकी, करनेवाली तुम्हीं विश्व पालन करनेवाली औरतुम्हीं सम्पूर्ण विश्वकी ईश्वरी हो, तुम्हीं विश्व वासी जीवोंकी पूजनीया और तुम्हीं विश्वमें सर्वत्र दीप्तिमान् रह हो, किन्तु तो भी तुम इसमें लिप्त नहीं हो, तुम्हीं विश्वके बाहर स्थि हो, तुमको नमस्कार है ।।

विष्णुप्रिया विष्णुशक्तिर्बीजमंत्रस्वरूपिणी ।
वरदा वाक्यसिद्धा च शिरसा प्रणमाम्यहम् ।।

हे देवि ! तुम्हीं विष्णुकी प्रिया और तुम्हीं विष्णुकी एक मा शक्ति हो, तुम्हीं बीजमंत्र स्वरूपिणी, तुम्हीं वर देनेवाली और तुम् वाक्सिद्धियुक्त हो, मैं मस्तक झुकाकर तुमको प्रणाम करता हूं ।।

वेणुवाद्यप्रिया त्वं हि वंशीवाद्यविनोदिनी ।
विद्युद्गौरी महादेवि लक्ष्मी देवि नमोऽस्तु ते ।।

हे महादेवि ! हेलक्ष्मीदेवि ! तुम विद्युत्की समान गौरव हो, वेणुवाद्य और दूसरे शब्दसे तुमको परम प्रीतिका संचार होता तुमको नमस्कार है ।।

भुक्तिमुक्तिप्रदा त्वं हि भक्तनुग्रहकारिणी ।
भवार्णवत्राणकर्त्री लक्ष्मि देवि नमोस्तु ते ।।

हे देवि ! तुम भुक्ति और मुक्ति प्रदान करती हो, तुम भक्तोंके प्रति अनुग्रह दिखाती हो, और तुम्हीं आश्रित जनोंका भवसागरसे उद्धार करती हो । तुमको नमस्कार है ।।

भक्तप्रिया भागीरथी भक्तमंगलदायिनी ।
भयदा भयदात्री च लक्ष्मि देवि नमोऽस्तु ते ।।

हे जननि ! तुम भक्तोंके प्रति आन्तरिक स्नेह प्रकाशित करती हो, तुम्हीं भागीरथी गंगास्वरूपिणी और भक्तोंको कल्याणदायिनी हो, तुम्हीं दुष्टोंको भय देती और शरणागतोंको अभय देती हो ! तुमको नमस्कार है ।।

मनोऽभीष्टप्रदा त्वं हि महामोहविनाशिनी ।
मोक्षदा मानदात्री च लक्ष्मि देवि नमोऽस्तु ते ।।

हे लक्ष्मी देवि ! तुम मनोरथ पूर्ण करती और महामोह को विनाश करती हो, तुम्हीं मोक्ष और सन्मान देती हो, तुमको नमस्कार है ।।

महाधन्या महामान्या माधवस्यात्ममोहिनी ।
मुखराप्राणहन्त्री च लक्ष्मि देवि नमोऽस्तु ते ।।

हे लक्ष्मीदेवि ! तुम्हीं एकमात्र धन्या और माननीय हो, क्या धन्यवादमें क्या सन्मानमें तुम्हारी अपेक्षा श्रेष्ठ दूसरा कोई नहीं है, तुमने ही माधवका मन मोहित किया है, जो स्त्रियें बहुत बोलनेवाली हैं, तुम उनका विनाश करती हो, तुमको नमस्कार है ।।

यौवनपूर्णसौन्दर्य्या योगमाया तथेश्वरी ।
युग्मश्रीफलवृक्षा च लक्ष्मि देवि नमोऽस्तु ते ।।

हे देवि ! तुमने पूर्ण यौवनके कारण परम कान्ति धारण की है, तुम्हीं मूर्तिमान् योगमाया और तुम्हीं योगकी ईश्वरी हो, तुम्हारे हृदयमें दो नारियलके समान ऊंचे दो कुच शोभा पाते हैं, तुमको नमस्कार है ।।

युग्माङ्गदविभूषाढ्या युवतीनां शिरोमणिः ।
यशोदासुतपत्नी च लक्ष्मि देवि नमोऽस्तु ते ।।

हे देवि ! तुहारे दोनों बाहुओंमें दो अंगद बाजूबन्द विद्यमान रहनेसे परम शोभा हुई है, तुम्हीं युवतियोंके शिरकी मणि स्वरूप हो तुम्हीं यशोदानन्दकी महिषी हो, तुमको नमस्कार है ।।

रूपयौवनसम्पन्ना रत्नालंकारधारिणी ।
राकेन्दुकोटिसौन्दर्य्या लक्ष्मि देवि नमोऽस्तु ते ।।

हे लक्ष्मीदेवि ! तुम परम रूपवती और यौवनसम्पन्न हो, तुम्हीं रत्न लंकारसे विभूषित होकर परम शोभा धारण करती हो, तुम्हारी कान्ति करोड पूर्ण चन्द्रमासे भी उज्ज्वल है, तुमको नमस्कार है ।।

रमा रामा रामपत्नी राजराजेश्वरी तथा ।
राज्यदा राज्यहन्त्री च लक्ष्मिदेवि नमोऽस्तु ते ।।

हे लक्ष्मी देवि ! तुम्हाराही 'रमा' और 'रामा' नाम है, तुम्हीं रामकी पत्नी जानकी, तुम्हीं राज राजेश्वरी और तुम्हीं प्रसन्न होनेपर राज्यप्रदान करती हो और तुम्हीं कुपित होकर राज्य विनाश करती हो, तुमको नमस्कार है ।।

लीलालावण्यसम्पन्ना लोकानुग्रहकारिणी ।
ललना प्रीतिदात्री च लक्ष्मि देवि नमोऽस्तु ते ।।

हे जननि ! तुम्हीं लीलामें प्रीति करती और लावण्य सम्पन्न हो, तुम्हीं लोकोंपर अनुग्रह करती हो, स्त्रीजन तुम्हारे द्वारा परम प्रीति लाभ करती हैं, तुमको नमस्कार है ।।

विद्याधरी तथा विद्या वसुदा त्वन्तु वन्दिता ।
विन्ध्याचलवासिनी च लक्ष्मि देवि नमोस्तु ते ।।

हे देवि ! तुम्हीं विद्या, तुम्हीं विद्याधरी, तुम्हीं धनदायक और तुम्हीं एकमात्र वंदनीय हो, तुम्हीं विन्ध्यवासिनीरूपसे विन्ध्याचलमें वास करती हो, तुमको नमस्कार है ।।

शुभ काञ्चनगौराङ्गी शङ्खकंकणधारिणी ।
शुभदा शीलसम्पन्ना लक्ष्मि देवि नमोऽस्तु ते ।।

हे देवि ! तुम निर्मल काञ्चनकी समान गौर वर्ण हो, तुम्हारे हाथमें शंख और कंकण विराजमान रहता है, तुम कल्याणदायनी और सच्चरितसम्पन्न हो, तुमको नमस्कार है ।।

षट्चक्रभेदिनी त्वं हि षडैश्वर्य्यप्रदायिनी ।
षोडसी वयसा त्वन्तु लक्ष्मि देवि नमोऽस्तु ते ।।

हे लक्ष्मीदेवी ! तुम्हीं षड्चक्रभेदिनी हो और तुम्हीं छै प्रकार का ऐश्वर्य प्रदान करती हो, तुम्हीं सोलह वर्षकी अवस्थावाली नवयुवती हो, तुमको नमस्कार है ।।

सदानन्दमयी त्वं हि सर्वसम्पत्तिदायिनी ।
संसारतारिणी देवि शिरसा प्रणमाम्यहम् ।।

हे देवि ! तुम सर्वदा आनन्दमयी हो, तुम्हीं सर्वसम्पत्ति देनेमें समर्थ हो और तुम्हीं इस घोर संसारसे रक्षा कर सकती हो; मैं मस्तक झुकाकर तुमको प्रणाम करता हूं ।।

सुकेशी सुखदा देवि सुंदरी सुमनोरमा ।
सुरेश्वरी सिद्धिदात्री शिरसा प्रणमाम्यहम् ।।

हे देवि ! तुम्हारे केशकलाप मनोहर हैं, तुम परमसुन्दरी और मनमोहिनी हो, तुम्हीं देवताओंकी ईश्वरी और सिद्धिप्रदायिनी हो, तुम्हारे अनुग्रहसे ही सुख प्राप्त होता है, मैं मस्तक झुकाकर तुमको प्रणाम करता हूं ।।

सर्वसंकटहन्त्री त्वं सत्यसत्त्वगुणान्विता ।
सीतापतिप्रिया देवि शिरसा प्रणमाम्यहम् ।।

हे देवि ! तुम संपूर्ण संकट दूर करती हो, तुम सत्यपरायण और सत्त्वगुणशालिनी हो, तुमने ही सीतापति रामचन्द्रकी महिषीरूपसे

अयोध्यापुरीको पवित्र किया है, मैं मस्तक झुकाकर तुमको प्रणाम करता हूं ॥

हेमांगिनी हास्यमुखी हरिचित्तविमोहिनी ।
हरिपादप्रिया देवि शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥

हे देवि ! तुम तप्तकांचनकी समान गौरवर्णा हो, तुमने हरिका मन मोहित किया है, हरिके चरणोंमें ही तुम्हारा मन अत्यंत आसक्त रहता है, मैं मस्तक झुकाकर तुमको प्रणाम करता हूं ॥

क्षेमंकरी क्षमादात्री क्षौमवासोविधारिणी ।
क्षीणमध्या च क्षेत्राङ्गी लक्ष्मि देवि नमोऽस्तु ते ॥

हे लक्ष्मीदेवि ! तुम कल्याण करनेवाली, मोक्षदात्री, क्षौमवस्त्र धारिणी हो, तुम्हारी कमरने क्षीणहोनेसे परम शोभा धारण की है, तुम्हारे अंगमें संपूर्ण तीर्थ और क्षेत्र विद्यमान रहते हैं, तुमको नमस्कार है ॥

श्रीशंकर उवाच

अकारादि क्षकारान्तं लक्ष्मीदेव्याः स्तवं शुभम् ।
पठितव्यं प्रयत्नेन त्रिसन्ध्यञ्च दिने दिने ॥

श्रीमहादेवजी बोले हे पार्वति ! तुम्हारे पूंछनेके अनुसार लक्ष्मी-माहात्म्य और अकारादि क्षकारान्त वर्णमय लक्ष्मीस्तोत्र वर्णन किया इस कल्याणकारक स्तोत्रका प्रतिदिन तीनों सन्ध्याओंमें यत्नसहित पाठ करना चाहिये ॥

पूजनीया प्रयत्नेन कमला करुणामयी ।
वाञ्छाकल्पलता साक्षाद्भुक्तिमुक्तिप्रदायिनी ॥

जो अभिलषित देनेमें कल्पलतिकास्वरूप हैं, जो भुक्ति और मुक्ति प्रदान करती हैं, उन्हीं करुणामयी कमलाकी यत्नसहित पूजा करै ॥

इदं स्तोत्रं पठेद्यस्तु शृणुयात् श्रावयेदपि ।
इष्टसिद्धिर्भवेत्तस्य सत्यं सत्यं हि पार्वति ।।

जो पुरुष यह लक्ष्मी स्तोत्र पढ़ते, अथवा सुनते हैं, वा दूसरे मनुष्य को सुनाते हैं, हे पार्वति ! उनके सम्पूर्ण मनोरथ सिद्ध होते हैं, इसमें सन्देह नहीं ।।

इदं स्तोत्रं महापुण्यं यः पठेद्भक्तिसंयुतः ।
तञ्च दृष्ट्वा भवेन्मूको वादी सत्यं न संशयः ।।

हे गौरि ! जो पुरुष भक्तिसहित इस पवित्र स्तोत्रका पाठ करते हैं, उनके दर्शनमात्रसे ही वादी मूकताको प्राप्त होता हैं, इसमें सन्देह नहीं ।।

शृणुयाच्छ्रावयेद्यस्तु पठेद्वा पाठयेदपि ।
राजानो वशमायान्ति तं दृष्ट्वा गिरिनन्दिनि ।।

हे गिरिनंदिनि ! जो इस स्तोत्रको सुनते हैं, वा दूसरेको सुनाते हैं, अध्ययन करते हैं, वा दूसरेको पढ़ाते हैं, उनके दर्शनमात्रसेही राजा लोग वशीभूत होते हैं।

तं दृष्ट्वा दुष्टसङ्घाश्च पलायन्ते दिशो दश ।
भूतप्रेतग्रहा यक्षा राक्षसाः पन्नगादयः ।।
विद्रवन्ति भयार्ता वै स्तोत्रस्यापि च कीर्त्तनात् ।

जो पुरुष इस लक्ष्मीस्तोत्रका कीर्त्तन करते हैं, उनके दर्शन मात्रसेही दुष्टगण दशों दिशामें भाग जाते हैं, और क्या भूत, क्या प्रेत, क्या ग्रह, क्या यक्ष, क्या राक्षस, क्या सर्प, इत्यादि सभी डरकर चले जाते हैं, इसमें सन्देह नहीं ।।

सुराश्च ह्यसुराश्चैव गंधर्वकिन्नरादयः ।
प्रणमन्ति सदा भक्त्या तं दृष्टवा पाठकं मुदा ।।

जोषपुरु इस स्तोत्रका पाठ करते हैं, क्या देवता, क्या दानव,

क्या गन्धर्व, क्या किन्नर, सम्पूर्ण उनको दर्शनमात्रसेही आनन्द और भक्ति सहित प्रणाम करते हैं ।।

धनार्थी लभते चार्थं पुत्रार्थी च सुतं लभेत् ।
राज्यार्थी लभते राज्यं स्तवराजस्य कीर्त्तनात् ।।

इस अनुत्तम स्तवका कीर्त्तन करनेसे धनार्थी धन, पुत्रार्थी पुत्र और राज्यार्थी राज्यको प्राप्त होता है ।।

ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुर्व्वंगनागमः ।
महापापोपपापञ्च तरन्ति स्तवकीर्त्तनात् ।।

क्या ब्रम्हहत्या, क्या सुरापान, क्या चोरी, क्या गुरुस्त्रीगमन, क्या महापातक, क्या उपपातक, इस स्तवके कीर्त्तन करने पर इसके प्रभावसे सम्पूर्ण पापोंसे छुटकारा होता है ।।

गद्यपद्यमयी वाणी मुखात्तस्य प्रजायते ।
अष्टासिद्धिमवाप्नोति लक्ष्मीस्तोत्रस्य कीर्तनात् ।।

इस लक्ष्मी स्तोत्रके कीर्त्तन करनेसे अपने आपही मुखसे गद्य पद्यमयी वाणी प्रादुर्भूत होती है, और कीर्त्तन करनेवाला आठ प्रकारकी सिद्धि लाभ करता है ।।

वन्ध्या चापि लभेत् पुत्रं गर्भिणी प्रसवेत्सुतम् ।
पठनात्स्मरणात् सत्यं वच्मि ते गिरिनन्दिनि ।।

हे पर्वतनन्दिनि ! तुमसे सत्यही कहता हूं, इस स्तोत्रके पढ़ने वा स्मरण करनेसे, वंध्या (बाझ) स्त्री भी पुत्र प्राप्त करती है, और गर्भवती स्त्रीको श्रेष्ठ पुत्र प्राप्त होता है ।।

भूर्ज्जपत्रे समालिख्य रोचनाकुंकुमेन तु ।
भक्त्या संपूजयेद्यस्तु गन्धपुष्पाक्षतैस्तथा ।।
धारयेदक्षिणे बाहौ पुरुषः सिद्धिकांक्षया ।
योषिद्वामभुजे धृत्वा सर्व्वसौख्यमयी भवेत् ।।

जो पुरुष लक्ष्मीकी कामना करते हैं, वे भोजपत्रपर रोचना और

कुंकुमद्वारा इस स्तवको लिखकर गन्धपुष्पादिसे भक्ति पूर्व्वक अर्चना करके दाहिने बाहुमें धारण करें ।। स्त्रियें भी वाम भुजामें धारण करने से सर्वसुखमें सुखी होती हैं ।।

विषं निर्विषतां याति अग्निर्याति च शीतताम् ।
शत्रवो मित्रतां यान्ति स्तवस्यास्य प्रसादतः ।।

इस स्तवराजके प्रसादसे विषमें निर्विषता, अग्निमें शीतलता और शत्रुओंमें मित्रता होती है ।।

बहुना किमिहोक्तेन स्तवस्यास्य प्रसादतः ।
वैकुण्ठे च वसेन्नित्यं सत्यं वच्मि सुरेश्वरि ।।

हे सुरेश्वरि ! इसका माहात्म्य और अधिक क्या वर्णन करूं ? इसके प्रसादसे अन्त समय नित्य वैकुण्ठ धाममें वास होता है, इसमें सन्देह नहीं ।।

लक्ष्मी कवच

लक्ष्मीर्मे चाग्रतः पातु कमला पातु पृष्ठतः ।
नारायणी शीर्षदेशे सर्व्वांगे श्रीस्वरूपिणी ।।

लक्ष्मी मेरे अग्र भागकी रक्षा करैं, कमला मेरी पीठकी रक्षा करैं, नारायणी मेरे मस्तककी, और श्रीस्वरूपिणी देवी मेरे सर्व्वांगकी रक्षा करैं ।।

रासपत्नी प्रत्यंगे तु सदावतु रसेश्वरी ।
विशालाक्षी योगमाया कौमारी चक्रिणी तथा ।।
जयदात्री धनदात्री पाशाक्षमालिनी शुभा ।
हरिप्रिया हरिरामा जयंकरी महोदरी ।।
कृष्णपरायणा देवी श्रीकृष्णमनोमोहिनी ।
जयंकरी महारौद्री सिद्धिदात्री शुभंकरी ।।
सुखदा मोक्षदा देवी चित्रकूटनिवासिनी ।
भयं हरेत्सदा पायाद् भवबन्धाद्विमोचयेत् ।।

जो रामपत्नी और रमेश्वरी हैं, वह विशालनेत्र योगमाया लक्ष्मी मेरे सम्पूर्ण अंगोंकी रक्षा करैं, वही कौमारी, वही चक्र धारिणी वही जय देनेवाली, वही धनदाता, वही पाशअक्षमालिनी, वही कल्याणी, वही हरिकी प्रिया, वही हरिरामा, वही जय करनेवाली, वही महोदरी, वही कृष्णकी परायणा, वही श्रीकृष्णमनोमोहिनी, वही महारौद्री, वही सिद्धि देनेवाली, वही शुभ करनेवाली, वही सुख देनेवाली, वही मोक्ष देनेवाली, और वही चित्रकूटनिवासिनी, इत्यादि नामोंसे कही हैं। वही अनपायिनी लक्ष्मी देवी मेरा भय दूर करै, सर्वदा रक्षा करै और मेरा भवपाश छेदन करै ॥

कवचन्तु महापुण्यं यः पठेत् भक्तिसंयुक्तः ।
त्रिसन्ध्यमेकसन्ध्यम्वा मुच्यते सर्व्वसंकटात् ॥

जो भक्तियुक्त होकर प्रतिदिन तीनों सन्ध्याओंमें वा एकसन्ध्यामें, इस परम पवित्र लक्ष्मीकवचका पाठ करता है वह सपूर्ण संकटसे छूट जाता है ॥

पठणं कवचस्यास्य पुत्रधनंविवर्द्धनम् ।
भीति विनाशनञ्चैव त्रिषु लोकेषु कीर्त्तितम् ॥

इस कवचके पाठ करनेसे पुत्र और धनादिकी वृद्धि होती है, और भय दूर होता है, इसका माहात्म्य त्रिभुवनमें कीर्त्तित है ॥

भूर्ज्जपत्रे समालिख्य रोचनाकुंकुमेन तु ।
धारणाद्गलदेशे च सर्वसिद्धिर्भविष्यति ॥

भोज पत्रपर रोचना और कुंकुम द्वारा इसको लिखकर कण्ठमें धारण करनेसे सर्व्वकामना सिद्ध होती हैं ॥

अपुत्रो लभते पुत्रं धनार्थी लभते धनम् ।
मोक्षार्थी मोक्षमाप्नोति कवचस्य प्रसादतः ॥

इस कवचके प्रसादसे अपुत्रको पुत्र लाभ होता है, धनार्थीको धन, और मोक्षार्थीको मोक्ष, प्राप्त होता है, इसमें सन्देह नहीं ॥

गर्भिणी लभते पुत्रं बन्ध्या च गर्भिणी भवेत् ।
धारयेद्यदि कण्ठे च अथवा वामबाहुके ।।

यदि स्त्रियें कण्ठ अथवा वाम बाहुमें इस कवचको यथानियम धारण करैं, तो गर्भवती उत्तम पुत्रको प्राप्त होती हैं और वन्ध्या (बांझ) स्त्री भी गर्भवती होती हैं ।।

यः पठेन्नियतो भक्त्या स एव विष्णुवद्भवेत् ।
मृत्युव्याधिभयं तस्य नास्ति किञ्चिन्महीतले ।।

जो कोई नित्य भक्तिसहित इस कवचका पाठ करते हैं, वह विष्णु की समानताको प्राप्त होते हैं, पृथ्वीमें मृत्यु, अथवा व्याधिभय उनको आक्रमण नहीं कर सकता ।।

पठेद्वा पाठयेद्वापि शृणुयाच्छ्रावयेदपि ।
सर्व्वपापविमुक्तस्तु लभते परमां गतिम् ।।

जो पुरुष इस कवचको पढ़ते हैं, वा पढ़ाते हैं, अथवा स्वयं सुनते हैं, या दूसरेको सुनाते हैं, वह सम्पूर्ण पापोंसे छूट कर परमगतिको प्राप्त होते हैं ।।

विपदि संकटे घोरे तथा च गहने वने ।
राजद्वारे च नौकायां तथा च रणमध्यतः ।
पठन द्धारणाद्वस्य जयमाप्नोति निश्चितम् ।।

क्या विपद, क्या घोर संकट, क्या गहन वन, क्या राजद्वार, क्या नौका मार्ग, क्या रणमध्य, कोई स्थान क्यों न हो, इस कवचके पाठ अथवा धारण करनेसे सर्वत्र जय प्राप्त हो सकती है ।।

अपुत्रा च तथा वन्ध्या त्रिपक्षं शृणुयादपि ।
सुपुत्रं लभते सा तु दीर्घायुष्कं यशस्विनम् ।।

वांझ स्त्री अथवा जिसके पुत्र उत्पन्न नहीं होता हो, वह यदि तीन पक्ष पर्य्यन्त यह कवच सुने, तो दीर्घायु महायशस्वी सुपुत्र प्राप्त कर सकती है, इसमें सन्देह नहीं ।।

शृणुयाद्यः शुद्धबुद्धया द्वौ मासौ विप्रवक्त्रतः ।
सर्व्वान्कामानवाप्नोति सर्व्वबन्धाद्विमुच्यते ।।

जो पुरुष विशुद्ध मनसे दो महीने तक ब्राह्मणके मुखसे यह कवच सुनता है, उसकी संपूर्ण कामना सिद्ध होती हैं, और वह सर्व प्रकारके भवबन्धनसे छूट जाता है ।।

मृतवत्सा जीववत्सा त्रिमासं शृणुयाद्यदि ।
रोगी रोगाद्विमुच्येत पठनान्मासमध्यतः ।।

जिस स्त्रीके पुत्र उत्पन्न होकर जीवित नहीं रहते हों, यदि वह तीन महीने पर्य्यन्त इस कवचको भक्तिसहित सुने, तो जीववत्सा होती है और रोगी पुरुष अध्ययन करै, तो एक महीनेमें ही रोगसे छूट जाता है ।।

लिखित्वा भूर्जपत्रे च ह्यथवा ताडपत्रके ।
स्थापयेन्नियतं गेहे नाग्निचौरभयं क्वचित् ।।

जो पुरुष भोजपत्रपर या ताड़पत्रपर इस कवचको लिखकर घरमें स्थापन करै, उसको अग्नि वा चोर इत्यादिका भय नहीं रहता ।।

शृणुयाद्धारयेद्वापि पठेद्वा पाठयेदपि ।
यः पुमान्सततं तस्मिन्प्रसन्नाः सर्व्वं देवताः ।।

जो पुरुष प्रतिदिन यह कवच सुनता है, पढ़ता है अथवा दूसरेको पढ़ाता है, और जो कोई इसको धारण करता है, उसपर देवतागण सदा सन्तुष्ट रहते हैं ।।

बहुना किमिहोक्तेन सर्व्वजीवेश्वरेश्वरी ।
आद्या शक्तिः सदा लक्ष्मीर्भक्तानुग्रहकारिणी ।
धारके पाठके चैव निश्चला निवसेद् ध्रुवम् ।।

अधिक और क्या कहूं ? जो पुरुष इस कवचको पाठ करते, अथवा धारण करते हैं, सर्व जीवेश्वरी भक्तोंपर अनुग्रह करनेवाली आद्या

शक्ति लक्ष्मी देवी अचल होकर उनमें वास करती हैं, इसमें सन्देह नहीं ।

इति श्रीमहाकालविरचितं पण्डितकन्हैयालालकृत हिन्दीटीका-सहितं श्रीमद्दक्षिणकालिकायाः स्वरूपाख्यस्तोत्रम ।

अष्टनायिकासाधन

जया—साधन

मंत्र—ओं ह्रीं ह्रीं नमो नमः जया हुं फट् ।।

एक अमावस्यासे दूसरी अमावस्यातक प्रति दिन इस मंत्रका पांच हजार जप करै, समीपके शून्य शिवमन्दिरमें बैठकर जप करना चाहिये, इस प्रकार जप शेष होनेपर अर्द्धरात्रिके समय जयानाम्नी नायिका साधकके निकट प्रगट होकर उसकी इच्छानुसार वर प्रदान करती है ।।

विजया—साधन ।

मंत्र—ओं हिलिहिलि कुटीकटी तुहतुह मे वशमां नय विजये अः अः स्वाहा ।। त्रिलक्षजपेन सिद्धिः । नदीतीरस्थश्मशानवृक्षे स्थित्वा रात्रौ प्रजपेत् ।।

नदी तीरस्थ श्मशानमें जो कोई वृक्ष हो, उस वृक्षपर चढ़कर रात्रिके समय उपरोक्त मंत्रका जप करै। तीन लक्ष जपनेसे सिद्धि होती है, नित्य जप करके जिस दिन लक्ष जप पूर्ण हो, उसी दिन विजया-नाम्नी नायिका सन्तुष्ट होकर साधकके वशीभूत होती है ।।

रतिप्रिया—साधन ।

मंत्र—हुँ रतिप्रिये साधेसाधे जलजल धीरधीर आज्ञापय स्वाहा ।। षण्मासात्सिद्धिः । रात्रौ नग्नो भूत्वा हविष्याशी नाभिजले स्थित्वा जपेत् ।।

रात्रिकालके समय नग्न हो नाभिके बराबर जलमें बैठकर उक्त मंत्रका जप करै। छै महीनेतक हविष्याशी होकर समस्त रात्रियोंमें जप करना चाहिये, इस प्रकार करनेसे रतिप्रिया नाम्नी नायिका वशीभूत होती है।

काञ्चनकुण्डली–सिद्धिः

मंत्र–ओं लोलजिह्वे अट्टाट्टहासिनि सुमुखि काञ्चनकुण्डलिनि खे चक्षे हुं ।। सम्वत्सरेण सिद्धिः। गोमयपुत्तलिकां कृत्वा पाद्यादिभिः पूजयेत्। त्रिपथस्थवटमूले प्रजपेत्।

गोबरकी पुत्तली बनाकर एक वर्षतक पाद्यादिद्वारा, काञ्चन कुण्डली नाम्नी नायिकाकी पूजा और ऊपर लिखित मंत्रका जप करनेसे सिद्धि होती हैं, त्रिपथस्थित वटकी जड़में रात्रिकालके समय अदृश्य भावसे जप करै ।।

स्वर्णमाला–सिद्धिः

मंत्र– ओं जय जय सर्वदेवासुरपूजिते स्वर्णमाले हुँ हुँ ठः ठः स्वाहा ग्रीष्मे मरौ पञ्चाग्निमध्ये स्थित्वाजपेत्। त्रिमासात्सिद्धिः ।।

ग्रीष्मकालके समय चैत्र वैशाख ज्येष्ठ इन तीन महीनोंमें मरुभूमिके मध्य पञ्चाग्निमें अर्थात् चारों ओर चार अग्निकुण्ड और मस्तकके ऊपर सूर्य्य रखकर मंत्र जपनेसे स्वर्णमाला सिद्ध होती है ।।

जयावती–सिद्धिः

मंत्र–ओं ह्रीं क्लीं स्त्रीं हुँ द्रुँ क्लुँ जयावती यमनिकृन्तनि क्लीं क्लीं ठः। आषाढादित्रिमासानविरलं काननस्थसरसि स्थित्वारात्रौ जपेत् ।।

निर्जन वनके मध्यमें बैठ सरोवरके जलमें रात्रिकालके समय बैठकर आषाढ श्रावण भाद्रपद इन तीन महीनोंमें उक्त मन्त्रका जप करनेसे जयावती सिद्ध होती है ।।

सुरंगिणी–सिद्धिः

मंत्र–ओं ओं ओं हुँ हुँ हुँ शीघ्रं सिद्धिं प्रयच्छ सुरसुरंगिणि, महामाये साधकप्रिये ह्लीं ह्लीं स्वाहा । षड्वर्षेण सिद्धिः । प्रत्यहं रात्रौ शय्यायामुपविश्य सहस्रं जपेत् ।।

नित्य रात्रिकालके समय शय्यासे उठकर उक्त मंत्र हजार जपनेसे छै वर्षमें सिद्धि होती है ।।

विद्राविणी–सिद्धिः

मंत्र–हँयँरँलँवँदेवि रुद्रप्रिये विद्राविणि ज्वल ज्वल साधय साधय कुलेश्वरि स्वाहा ।। रणमृतास्थीनि गले धृत्वा प्रान्तरे जपेत् । द्वादशलक्षजपेन सिद्धिः ।।

जो व्यक्ति युद्धमें मर गया हो, उसकी अस्थि गलेमें बांध कर प्रान्तमें रात्रि कालके समय बैठकर उक्त मंत्र जप करना चाहिये, जिस दिन बारह लक्ष जप समाप्त होता है, उसी दिन सिद्धि होती है ।।

वेतालसिद्धिः

निम्बवृक्षोद्भवं काष्ठं श्मशाने साधकोत्तमः ।
भौमवारे मध्यरात्रौ गत्वा कुलयुगान्वितः ।।
खनित्वा चाष्टलक्षं वै दण्डपादुकचिह्नितम् ।
कृत्वा दुर्गाष्टमीरात्रौ श्मशाने निक्षिपेत्ततः ।।
तस्योपरि शवं कृत्वा पूजयित्वा यथाविधि ।
शवासनगतो वीरो जपेदष्टसहस्रकम् ।।
ततो भातृबलिं दत्त्वा काष्ठमामंत्रयेत्ततः ।
स्फेंस्फेंदण्डमहाभाग योगिनीहृदयप्रिय ।।
मम हस्तस्थितो नाथ ममाज्ञां परिपालय ।

एवमासंत्र्य बेतालं यत्र यत्र प्रयुज्यते ।।
तं तं चूर्णीविधायाथ पुनरायाति कौलिकम् ।।

कुलतिथि और कुलनक्षत्रको मंगलवार अर्द्धरात्रिके समय साधक नीमकी लकड़ीको श्मशानमें गाड़ उस स्थानमें बैठकर दश हजार महिष-मर्द्दिनीका मन्त्र जपकरै और श्मशानमें रहकर सहस्र होम करै, तदनन्तर वह निम्ब काष्ठ निकाल उसमें दण्ड और पादुका अंकित करनी चाहिये, फिर दुर्गाष्टमीकी रात्रिमें यह निम्बकाष्ठ श्मशानमें डाल कर उसके ऊपर शव रख यथाविधि पूजा करनी चाहिये । फिर उस शवासनपर बैठ ऊपर लिखित अष्टाधिकसहस्र जप करके मातृगणोंके उद्देश्यसे बलि दे, "स्फें स्फें" इत्यादि मन्त्रसे काष्ठको आमन्त्रण करै इसके उपरान्त जिस जिस स्थानमें बेताल को नियुक्त करै, यह दण्ड, उसी उसी वृत्तिको चूर्ण कर फिर साधकके निकट आता है, जिस किसी कार्य्यमें उस दण्डको नियुक्त करै, वही सिद्ध होगा ।।

योगिनी–साधन

अथ प्रातः समुत्थाय कृत्वा स्नानादिकं शुभम् ।
प्रसादञ्च समासाद्य कुर्य्यादाचमनं ततः ।।
प्रणवान्ते सहस्रारहुंफट्दिग्बन्धनं चरेत् ।
प्राणायामं ततः कुर्य्यान्मूलमंत्रेण मंत्रवित् ।।
षडङ्गमायया कुर्य्यात्पद्ममष्टदलं लिखेत् ।
तस्मिन्पद्मे महामंत्रं बीजन्यासं समाचरेत् ।।
पीठदेवीं समावाह्य ध्यायेद्देवीं जगत्प्रियाम् ।
पूर्णचन्द्रनिभां गौरीं विचित्राम्बरधारिणीम् ।।
पीनोत्तुंगकुचां वामां सर्व्वेषामभयप्रदाम् ।

---

१ महिषमर्द्दिनीका मंत्र–"महिषमर्द्दिन्यै स्वाहा ।"

इति ध्यात्वा च मूलेन दद्यात्पाद्यादिकं शुभम् ॥
पुनर्धूपं निवेद्यैव नैवेद्यं मूलमंत्रतः ।
गन्धचन्दनताम्बूलं सकर्पूरं सुशोभनम् ॥
प्रणवान्ते भुवनेशि ह्यागच्छ सुरसुन्दरि ।
वह्नेर्भार्य्या जपेन्मत्रं त्रिसन्ध्यन्तु दिने दिने ॥
सहस्रैकप्रमाणेन ध्यात्वा देवीं सदा बुधः ।
मासान्ते व्याप्य दिवसं बलिपूजां सुशोभनाम् ॥
कृत्वा च प्रजपेन्मंत्रं निशीथे सति सुंदरि ।
सुदृढं साधकं मत्वाऽऽयाति सा साधकालये ॥
सुप्रसन्ना साधकाग्रे सदा स्मेरमुखी ततः ।
दृष्ट्वा देवीं साधकेन्द्रो दद्यात्पाद्यादिकं शुभम् ॥
सुचन्दनं सुमनसो दत्त्वाभिलषितं वदेत् ।
यद्यत्प्रार्थयते सर्व्वं सा ददाति दिने दिने ॥

प्रातः कालके समय उठकर स्नानादि नित्य क्रिया करके "ह्रौं" इस मंत्रसे आचमन कर "औं ह्रौं फट्" इस मन्त्रसे दिग्बन्धन करै, फिर मूलमंत्रसे प्राणायाम कर "ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नम." इत्यादिक्रमसे करांग न्यास करै, फिर अष्टदल पद्म अंकित कर उस पद्ममें देवीका बीज न्यास करै और पीठदेवताका आवाहन करके सुरसुन्दरीका ध्यान करै, "पूर्णचन्द्रनिभाम्" पूर्ण चन्द्रमाकी समान कान्तिवाली गौरी विचित्र वस्त्र धारण किये पीन और ऊंचे कुचोंसे युक्त सबको अभय देनेवाली इत्यादि ऊपर लिखितका नियमसे ध्यान करै, ध्यानके अन्तमें मूल मंत्रसे देवीकी पूजा करै, मूल मंत्र उच्चारण पूर्व्वक पाद्यादि देकर धूप दीप नैवेद्य गन्ध चन्दन और ताम्बूल निवेदन करै, "ओं ह्रीं आगच्छ भुवनेशि सुरसुन्दरि स्वाहा" इस मंत्रसे पूजा करनी चाहिये । साधक प्रतिदिन तीनों सन्ध्याओंमें ध्यान करके एक एक हजार मंत्र जप करै, इस प्रकार एक मास जप करके महीनेके अन्तदिनमें बलि इत्यादि

विविध उपहारसे देवीकी पूजा करै, पूजाके अन्तमें पूर्व्वोक्त मंत्र जप करता रहे, इस प्रकार जप करनेसे अर्द्धरात्रिके समय देवी साधकके निकट आती है, देवी साधकको दृढ़ प्रतिज्ञ जानकर उसके गृहमें आती है। साधक देवीको सन्मुख प्रसन्न और हास्यमुखी देखकर फिर पाद्यादि द्वारा पूजा करै और उत्तम चन्दन तथा सुशोभन पुष्प प्रदान करके अभिलषित वरकी प्रार्थना करै, साधक देवीके निकट जो जो प्रार्थना करेगा, देवी नित्य उपस्थित होकर वही प्रदान करेगी ।।

डाकिनी–सिद्धिः

मंत्र–डँ डॉ डिं द्रीं धूँ धूँ चालिनि मालिनि डाकिनि सर्व्वसिद्धिं प्रयच्छ हुं फट् स्वाहा । शाल्मलीतरौ स्थित्वा ऊर्द्ध्वबाहुना रात्रौ जपेत् । एवं षड्वर्षेण सिद्धिः ।।

रात्रिकालके समय सेमलके वृक्षपर चढ़ ऊर्ध्वबाहु हो उक्त मंत्रका जप करै, सब रात्रिमें जप करना चाहिये, एकादिक्रमसे छै वर्ष इस प्रकार करनेपर डाकिनी सिद्ध होती है। डाकिनी सिद्ध होनेपर अद्भुत अद्भुत सामर्थ्य उपन्न होती है ।।

भूत सिद्धि और प्रेत सिद्धिः ।।

मंत्र–ओं ह्रौं क्रों क्रों क्रुं फट् २ त्रुट त्रुट ह्लीं ह्लीं भूत प्रेत भूतिनि प्रेतिनि आगच्छ आगच्छ ह्लीं ह्लीं ठःठः ।।

इस मंत्रसे भूत भूतिनी प्रेत और प्रेतिनी सिद्ध होती है ।।

वटवृक्षतले रात्रौ जपेदष्टसहस्रकम् ।
धूपञ्च गुग्गुलं दत्त्वा पुना रात्रौ जपेन्मनुम् ।।
अर्द्धरात्रिगते चैव साध्यश्चागच्छति ध्रुवम् ।
दद्याद्गन्धोदकेनार्घ्यं तुष्टो भवति तत्क्षणात् ।।
वरं दत्त्वा ततः सोऽपि चिरवश्यो भवेत्सदा ।।

रात्रिकालके समय निर्जनमें वटके वृक्षकी जड़में बैठकर उक्त मंत्र आठ हजार जप करै, इसके दूसरे दिन धूप और गुग्गुलद्वारा पूजा करके फिर रात्रिमें जप करै, अर्द्धरात्रि व्यतीत होने पर भूत प्रेत भूतिनी वा प्रेतिनी साधकको उपस्थित होंगी, तब उनकी गंधादि और अर्घ्यादिद्वारा पूजा करने पर भूतादि प्रसन्न होकर साधक को वर प्रदान करते हैं और चिरकाल साधक के वशीभूत रहते हैं ।।

पिशाचपिशाचीसिद्धिः

१म मंत्र—ओं प्रथ प्रथ फट् फट् हुँ हुँ तर्ज तर्ज विजय विजय जय जय प्रति हत कटु कटु विसुर विसुर स्फुर स्फुर पिशाच साधकस्य मे वशं आनय आनय पच पच चल चल स्वाहा ।।

२ य मंत्र—ओं फट् फट् हुँ हुँ अः भोः भोः पिशाचि भिन्द भिन्द छिन्द छिन्द लह दह दह पच पच मर्द्दय मर्द्दय पेषय पेषय धून धून महासुरपूजिते हुँ हुँ स्वाहा ।। दशलक्ष जपात्सिद्धिः । रात्रौ उच्छिष्टमुखेन श्मशाने जपेत् ।।

प्रथममंत्रसे पिशाच और दूसरे मंत्रसे पिशाचीका ध्यान करना चाहिये, रात्रिकालके समय उच्छिष्ट मुखसे श्मशानमें बैठ कर जप करै। दशलक्ष जपनेसे सिद्धि प्राप्त होती है। जप कालके समय अन्य किसीके देखनेपर, अथवा साधकके अन्य किसीको देखनेसे जप निष्फल होता है ।।

गुटिकासिद्धिः

साधकश्चिल्लालयं गत्वा नित्यं तस्मै निवेदयेत् दैवताबुद्धयाति-भक्त्या भक्षणार्थंकिञ्चित् किञ्चिदाममांसं निक्षिपेत् । यावत् प्रसूता भवति ततः पारदं रसं सार्द्धनिष्कत्रयं कस्मिंश्चिन्ना-लिकाद्वये निक्षिपेत् । तस्याधोऽर्द्धंच्छिद्रं सिक्थकेन रुद्ध्वा चिल्ला-लयं गत्वा अण्डद्वयस्योपरि नालिकाद्वयं निधाय लौहशलाकया

नालिकामध्यमार्गेण तदण्डं लघुहस्तेन वेधयित्वा शलाकामुद्धरेत्। तेनैव मार्गेण अण्डमध्ये यथासमं गच्छति तथा युक्तं कुर्य्यात्। ततश्छिद्रं चिल्लविष्ठया लिपेत्। ततस्तद्वृक्षाधो नित्यं बल्युपहारेण पूजां कुर्य्यात्। यावत् स्वयमेवाण्डानि स्फोटन्ति तावन्नित्यमुपरि गत्वा निरीक्षयेत्। स्फुटिते सति गुटिकाद्वयं ग्राह्यं ततो वृक्षादुत्तीर्य्य यो गिलति मनुष्यस्य स्मै एका देया, अपरां स्वयं मुखे धारयेत्। योजनद्वादशं गत्वा पुनरेव निवर्त्तते। ओं ह्रूं ह्रूं फट् चिल्लचक्रेश्वरि परात्परेश्वरिपादुकासासनं देहि मे देहि स्वाहा। अनेन मंत्रेण जपं पूजाञ्चकुर्य्यात्॥ इति सिद्धियोगः।

जिस प्रकार गुटिका सिद्धि करनी होती है, वह रीति कही जाती है, साधक चीलके वास स्थानमें जाय, उसको देवता जान पूजा करके प्रति दिन आहारार्थ थोड़ा थोडा कच्चा मांस प्रदान करै। प्रसवकालतक इस प्रकार आहार प्रदान करके प्रसवके उपरांत दो नल प्रस्तुत कर उनके ऊपर और नीचेके दोनों छिद्र, मोंमसे बंद करदे। फिर उनमें साढ़े तीन तोला परिमाण पारा डाल कर इन दोनों नलोंको दोनों अण्डोंके ऊपर स्थापन करै, और लोहशलाका नलके ऊपर मुखमें प्रवेशित कर अत्यन्त सावधानतासे दोनों अण्डोंको छेदकर शलाका निकाले, इस प्रकार सतर्कता पूर्वक और कोमल हस्तसे अण्डे वेधने चाहिये, क्योंकि इन छिद्रों द्वारा अण्डोंमें नल स्थित पारा प्रवेश कर सके और अण्डे न टूटें, इसके उपरान्त इन अण्डोंके छिद्र चीलकी विष्ठासे बंद कर वृक्षके नीचे अण्डे फूटने तक प्रतिदिन बलि और विविध उपहारोंसे पूजा करता रहे, जब तक यह अण्डे स्वयं न फूटे, तबतक नित्य इस वृक्षके ऊपर उठ कर देखे, इन अण्डोंके फूटने पर दिखाई देगा कि उसमें दो गुटिका हुई हैं, तब इन दोनों गुटिकाओंको लाय कर एक दूसरेको दे और अन्यको स्वयं मुखमें धारण करे, इस प्रकार क्रिया

करने से साधक शतयोजन जाय, फिर उस स्थानमें तत्काल लौट कर आ सक्ता है। "ओं ह्लीं हूँ फट् चिल्लचक्रेश्वरि परात्परेश्वरि पादुकामासनं देहि मे देहि स्वाहा" इस मंत्रसे पूजा और जप करै ॥

शिखा पारावतभवा खञ्जरीटपुरीषजा ।
गुटिकास्पर्शमात्रेण तालयंत्रं भिनत्त्यलम् ॥

मोर, पारावत, और खञ्जन पक्षी इनका विष्ठा लेकर गुटिका कर इस गुटिकाके स्पर्श करनेसे तत्काल संपूर्ण वाद्य यंत्र (बाजे) टूट जाते हैं, गुटिका करनेके पहले पूर्वोक्त मंत्रसे पूजा कर लक्ष जप करै॥

षट्कर्म

शांन्तिवश्यस्तम्भनानि विद्वेषोच्चाटनं तथा ।
मारणान्तानि संशन्ति षट् कर्म्माणि मनीषिणः ॥

शांति, वशीकरण, स्तम्भन, विद्वेषण, उच्चाटन और मारण इन छै कर्म्मोंको "षट्कर्म्म" कहते हैं। इनके मध्य मारण क्रिया में नियुक्त होना अनुचित है, इस लिये उक्त क्रिया के विषय छोड़कर शेष पञ्च क्रिया लिखी जाती हैं। आकर्षण क्रिया वशीकरणका अंग विशेष है ॥

वशी-करण ।

विदारीं वटमूलन्तु जलेन सह घर्षयेत् ।
विभूत्या संयुतं मंत्री तिलकं लोकवश्यकृत् ॥

विदारी (बिलारीकन्द) और वटकी जड़ जलके सङ्ग-घिसकर विभूति सहित तिलक करनेसे सम्पूर्णको वशीभूत किया जाता है ॥

---

१ वशीकरण कार्य्य करनेके पहिले पुष्य नक्षत्रमें बिसखपराकी जड़ और रुद्रदन्तीकी जड़ उखाड़ कर दोनों जड़ोंके सहित यवके बीज हाथमें बांधे, बांधनेके समय "ओं ऐं पुरं क्षोभय भगवती गंभीरा ब्लं स्वाहा" इस मंत्रसे सात बार अभिमंत्रित कर ले और इस प्रक्रियाके पहले उक्त मंत्र बीस हजार जपे ॥

आश्लेषायां गृहीत्वा तु नागकेशरबध्नकम् ।
करे बद्ध्वा भवेद्वश्यो यो राजा पृथिवीपतिः ॥

आश्लेषा नक्षत्रमें नागकेशरका बन्दा ग्रहण कर हाथमें बांधनेसे पृथ्वीका अधिपति राजा भी वशीभूत होता है ॥

त्रिंशच्चणकबीजानि षोडशेन्द्रयवांस्तथा ।
गोदन्तं नरदन्तञ्च पिष्ट्वा तैलेन लेपयेत् ॥
ललाटे तिलकं कृत्वा वशीकुर्य्यात्तिलोत्तमाम् ॥

तीस चनेके बीज, सोलह इन्द्रजौ, गोदन्त और नरदन्त तैल के संग पीसकर ललाटमें तिलक करै, इससे तिलोत्तमाकी समान स्त्री होने पर भी उसको वशीभूत किया जाता है ॥

गोरोचनं कुंकुमञ्च कदलीरससंयुतम् ।
एभिस्तु तिलकं कृत्वा पतिवश्यकरं परम् ॥

गोरोचन, कुंकुम और केलेके रसका तिलक पतिवश्यकर अर्थात् पतिको वशमें करनेवाला हैं ॥

आकर्षण

कृष्णधत्तूरपत्राणां रसं रोचनसंयुतम् ।
भूर्ज्जपत्रे लिखेन्मंत्रं श्वेतकरवीरलेखनैः ॥
यस्य नाम लिखेन्मध्ये खदिरांगारेण दाहयेत् ।
शतयोजनमायाति नान्यथा शंकरोदितम् ॥

मंत्र यथा—ओं नमः आदिपुरुषाय अमुकं वा
अमुकीं आकर्षणं कुरु कुरु स्वाहा ।
अष्टोत्तरसहस्रं जपेत् ॥

काले धतूरेके पत्तेका रस और गोरोचन इन दोनों द्रव्योंसे कनेरकी लेखनी द्वारा निम्न लिखित मंत्रके सहित जिसका नाम लिखकर जलते ए खैरके अङ्गारोंमें संतापित करै, वह सौ योजन दूर

होने पर भी आकृष्ट होकर आता है। आकर्षण कार्य्यमें प्रवृत्त होनेसे पहले "ओं नमः" इत्यादि मंत्र एक हजार आठ जप करै और जब अंगारोंमें तापित करै, तब भी इस मंत्रके एक सौ आठ पाठ करै ॥

स्तंभन[1]

श्मशानेऽथ परिग्राह्यं श्मशानाङ्गारमाहरेत् ।
मायाबीजं त्रिधालिख्य साध्यसंज्ञाञ्च मध्यतः ॥
अपि मध्ये च ललना सा च त्रिवलयात्मिका ।
वामहस्ते खनेत्खातं खर्परञ्च ह्यधोमुखम् ॥
पूरयेद्वामपादेन पुरुषःस तथोपरि ।
स्तम्भनञ्चैव देवेशि रिपूणां नात्र संशयः ॥

श्मशानके अंगारे लाय उसमें "ह्रीं" यह बीज तीन बार लिखकर मध्यमें स्तम्भनीय पुरुष, अथवा स्त्रीका नाम लिखे, इसके उपरांत बायें हाथमें गड़हा खोद उसमें यह अंगारे नीचे मुख रखकर वाम पदसे यह गड़हा पूर्ण करै, इस प्रकार करने से शत्रुको स्तम्भित किया जा सकता है।

जलस्तम्भन

पद्मकं नाम यद्द्रव्यं सूक्ष्मचूर्णन्तु कारयेत् ।
वापीकूपतडागादौ निक्षिपेत् स्तम्भते जलम् ॥

मंत्र–ओं नमो भगवते रुद्राय जलं स्तम्भय स्तम्भय ठः ठः ठः ।

पद्मकाष्ठ (पद्माख) को उत्तम रूपसे चूर्ण करके "ओं नमो

१ स्तम्भन कार्यमें प्रवृत्त होनेके पहले यथाविधि बगलामुखीकी पूजा करके उनका मंत्र एक हजार आठ (१००८) जप करै, इसके अतिरिक्त जब स्तम्भन किया करै, तब यह स्तम्भन द्रव्य उक्त मंत्रसे सात बार अभिमंत्रित कर ले। बगलामुखीका मंत्रादि पहले लिखा गया है।

भगवते" इत्यादि मंत्रसे एकसौ आठ बार जप पूर्व्वक कूप पुष्करिणी इत्यादि जलाशयोंमें डालने से जल स्तम्भन होता है ।।

निद्रास्तम्भन ।

मूलं बृहत्या मधुकं पिष्ट्वा नस्यं समाचरेत् ।
निद्रास्तम्भनमेतद्धि मूलदेवेन भाषितम् ।।

कटेरीकी जड़ और मुलेठी एकत्र पीसकर नास ग्रहण करनेसे निद्रा स्तम्भन होती है ।।

मेघ–स्तम्भन

इष्टकाद्वयमादाय श्मशानांगारसंपुटे ।
स्थापयेद्वनमध्ये च मेघस्तम्भनकारकम् ।।

दो ईटें श्मशानके अंगार संपुटमें स्थापन करके किसी निर्ज्जन-वनमें रक्खे, इस प्रकार करनेसे मेघस्तम्भन होता है ।।

नौका-स्तम्भन

तरण्यां क्षीरकाष्ठस्य कीलं पञ्चाङ्गुलं क्षिपेत् ।
नौकास्तम्भनमेतद्धि मूलदेवेन भाषितम् ।।

पञ्चांगुल परिमित क्षीरी वृक्षकी कील नौकामें डालनेसे नौका स्तम्भन होता है ।।

अग्नि–स्तम्भन

कुमारीकन्दमादाय कदलीकन्दसंयुक्तम् ।
लेपमात्रे शरीराणामग्निस्तम्भः प्रजायते ।।

घीकुवारकी जड़ और केलेके वृक्षकी जड़ एकत्र पीस कर देहमें लेप करनेसे अग्निस्तंभन होता है ।।

बुद्धि-स्तम्भन

सहदेवीमपामार्गं लोहपात्रे च पेषयेत् ।
तिलकं सर्व्वभूतानां बुद्धिस्तम्भकरं भवेत् ।।

सहदेवीबूटीकी जड़ और अपामार्ग (चिरचिरा) की जड़ लोहेके पात्रमें पीसकर जिसके कपाल में तिलक दे, उसकी बुद्धि स्तम्भन हो जाती है ।।

शस्त्र–स्तम्भन

वराहव्याघ्रभूपालचौरशत्रुभये जयम् ।
जातीमूलं मुखे क्षिप्तं शस्त्रस्तम्भनमुत्तमम् ।।

जातीवृक्ष (चँवेली) की जड़ मुखमें धारण करनेसे व्याघ्र राजा वराह चोर तथा शत्रुका भय दूर होता है और शस्त्रका स्तम्भन हो जाता है ।।

शान्तिकर्म्म

प्रणवं पूर्व्वमुच्चार्य शान्ते युग्मं तथैव च ।
सर्व्वारिष्टनाशिनी तु तदन्ते वह्निवल्लभा ।।
ओं शान्ते शान्ते सर्व्वारिष्टनाशिनी स्वाहा ।
एकलक्षजपेनापि सर्व्वशांतिर्भवेद्ध्रुवम् ।।
अयुतजपेन सिद्धिः । अस्य मंत्रस्यायुतजपेन
सिद्धिं कृत्वा प्रयोगः कार्य्यः ।
समाहितमना भूत्वा मनसा वार्थचिन्तनात् ।
विज्ञेया मानसी भक्तिः शांतिकर्मणि योजयेत् ।।

"ओं शांते शांते सर्व्वारिष्टनाशिनि स्वाहा" यह मंत्र एकलक्ष जप करनेसे रोग और संपूर्ण विपदकी शांति होती है। दश-हजार जपसे इस मंत्रकी सिद्धि होती है, पहले दशहजार जप कर सिद्धि होने पर उक्त प्रक्रिया करै, स्थिर चित्त हो मन मनमें मंत्रार्थ चिन्तनकर भक्ति सहित यह प्रक्रिया करनी चाहिये ।।

विद्वेषण[1]

गृहीत्वा सिंहकन्दन्तु निखनेद्द्वारतो भुवि ।
कलहो जायते नित्यं विद्वेषो जायते सदा ।।

सेईका कांटा लाय जो दो व्यक्तियोंके घरके द्वारमें मिट्टीके गड्ढेमें गाडकर रक्खा जाय, तो उन दोनोंमें कलह होता है और विद्वेष उत्पन्न होता है ।।

गृहीत्वा मयूरविष्ठाञ्च सर्पदन्तञ्च पेषयेत् ।
ललाटे तिलकं कृत्वा विद्वेषो जायते क्षणात् ।।

मोरका विष्ठा और सर्पका दाँत एकत्र पीसकर जिसके कपालमें तिलक करै, उनमें परस्पर विद्वेष उत्पन्न होता है ।।

उच्चाटन[2]

गृहीत्वौदुम्बरं कीलं मंत्रेण चतुरङ्गुलम् ।
तद् यस्य निखनेद्गेहे तदास्योच्चाटनं भवेत् ।।

'चार अंगुलपरिमित गूलरकी कील मंत्रसे पवित्र करके जिसके गृहमें गाड़ी जाय, उसका उच्चाटन होता है ।।

गृहीत्वा नरकङ्कालं निखनेच्चतुरंगुलम् ।
मंत्रयुक्तं गृहद्वारे सद्य उच्चाटनं भवेत् ।।

---

१ विद्वेषण प्रक्रिया करनेसे पहले "ओं नमो नारायणाय अमुकामुकेन सह वद्वेषणं कुरु कुरु स्वाहा" यह मंत्र दशलक्ष जप करै, इसके उपरान्त प्रयोग के समय भी "तत्तत् द्रव्यादि" इस मंत्रसे एकशत अष्टवार (१०८) अभिमंत्रित कर लेना चाहिये ।

२ उच्चाटन कार्य्य करनेके पहले निम्न लिखित मंत्र अष्टोत्तरशतवार जप करके फिर कार्य्यमें प्रवृत्त होवे और प्रयोगके बीच जिस २ स्थानमें मंत्रद्वारा अभिमंत्रित करनेका उल्लेख है, वहां इस मंत्रद्वारा तीन बार अभिमंत्रित करै, मंत्र यथा–"ओं नमो भगवते रुद्राय दंष्ट्राकरालाय अमुकं सपुत्रबान्धवैः सह हन हन दह दह पच पच शीघ्रं उच्चाटय हुँ फट् स्वाहा ठः ठः ।"

चार अंगुल परिमाण मनुष्यकी अस्थि मंत्रसे युक्त करके जिसके गृहद्वारमें गाड़ दे, उस व्यक्तिका शीघ्र उच्चाटन होता है ॥

मोहन[1]

हरितालमश्वगन्धां पेषयेत्कदलीरसे ।
गोरोचनसमायुक्तं तिलकं लोकमोहनम् ॥

मृत्युकालज्ञान

द्वादशदलचक्रस्थं मृत्युकालञ्च वीक्षितम् ।
चैत्रादिमाससंख्यानि विलिखेद्द्वादशे दले ॥
मेषादिराशयः स्थाप्याः सूर्य्यादिर्लिख्यते ग्रहः ।
जन्मर्क्षं जन्मराशिं वीक्ष्य ते मृत्युकालके ॥
शनिभौमौ केतुराहू राशिविद्धे तु कष्टदाः ।
ऋक्षविद्धे राशिविद्धे कालमृत्युर्न संशयः ॥
सूर्य्यवेधे मनस्तापं बुधे सौख्यं प्रवर्त्तते ।
यात्रायां तीर्थजीवे च चन्द्रे स्त्रीसुखसम्पदः ॥
भृगुवेधे राज्यलाभं मासे मासे विचारयेत् ।
वर्षे द्वादश नामानि मृत्युकाले वदन्ति च ॥

एक द्वादशदलचक्र अंकित करके मृत्युकाल देखें, इस चक्र के द्वादशदलमें द्वादश राशि और चैत्रादि द्वादशमास और सूर्य्यादि ग्रह लिखे, इसके उपरान्त जन्म नक्षत्र और जन्मराशिका वेधविचारकर मृत्युकालादि स्थिर करै, शनि मंगल राहु, अथवा केतुके सहित यदि जन्मराशिका वेध हो, तो मनुष्यको कष्ट होता है, राशिवेध और नक्षत्र वेध होनेसे निश्चय मृत्यु होती है, सूर्य्यादिके सहित उक्त शनि इत्यादिका वेध होनेसे मनस्ताप, बुधके सहित वेध होनेसे सुख, चन्द्रके

---

१ वशीकरणकी प्रक्रियाके अनुसार मोहनकार्य्यकी प्रक्रिया करे मंत्रभी उसी प्रकार है ।

सहित होनेसे सुख सम्पद और शुक्रके सहित वेध होनेसे राज्य प्राप्त होता है ।।

आत्मरक्षा

मंत्र– ओं आँ ह्लीं क्लीं श्रीं द्रुं द्रुं हुँ फट् रक्ष रक्ष कालिके कुण्डलिके त्रिपुरे अस्त्र–शस्त्र–मार्ज्जार–व्याघ्रकुक्कुरदंष्ट्रिभ्यो विषेभ्यः सर्वशत्रुभ्यो द्रीं द्रुं स्वाहा ।। षण्मासजपान्मंत्रसिद्धिः । प्रत्यहमयुतं जपेत् । ततःप्रतिदिनं त्रिसन्ध्यं वारत्रयं पठित्वा वक्षसि फूत्कारत्रयं दद्यात् ।।

उपरोक्त मन्त्र नित्य एक हजार जप करै, छै मास जप करनेसे मन्त्र सिद्धि होती है, इसके उपरान्त तीनों सन्ध्यामें तीन बार पढ़कर वक्षस्थलमें फूंक दे, इस प्रकार करनेसे कुक्कुर व्याघ्र बिल्ली डाढ़वाले हिंसक जन्तु शत्रु और अस्त्र शस्त्र संपूर्णसे आत्मरक्षा होती है ।।

वृश्चिकदूरीकरण

गृहीत्वा शुभनक्षत्रे अपामार्गस्य मूलकम् ।
धारयेद्दक्षिणे कर्णे वृश्चिकानां भयं नहि ।।

शुभनक्षत्रमें चिरचिरेकी जड़ग्रहण करके दक्षिण कर्णमें धारण करनेसे विच्छूका भय दूर होता है ।।

सर्पदूरीकरण

गृहीत्वा पुष्यनक्षत्रे अमृतामूलकं हरेत् ।
तन्मालां धारयेत्कण्ठे सर्पविषभयं नहि ।।

रविवार पुष्यनक्षत्रमे गिलोयकी जड़ उखाड़ कर उसकी माला गलेमें धारण करनेसे सर्पका भय दूर होता है। उसके गृह अथवा उसके समीपमें सर्प नहीं आता ।।

मक्षिकादूरीकरण

तक्रपिष्टेन तालेन क्षिपेत्पुत्तलिकाकृताम् ।
तामाघ्राय गृहाद्यान्ति मक्षिका नात्र संशयः ।।

मट्ठेके सहित हरिताल पीसकर उसके द्वारा एक मक्षिका (मक्खी) की पुतली बनावे, यह पुतलीके गृहमें डालनेसे उस पुतलीके सूंघने पर गृहसे मक्षिका दूर होती हैं ।।

मूषिका दूरीकरण

धत्तूरबीजचूर्णञ्च विषञ्च पेषितं तिलम् ।
तैरेव विषपाषाणं मीनतैलेन पेषितम् ।।
वटिकां स्थापयेद्देहे जलं रात्रौ निरुद्धयेत् ।
भक्षणात्पञ्चतां यान्ति तृष्णार्त्ता मूषिका ध्रुवम् ।।

धतूरेके बीजका चूर्ण, विष, तिल, संखिया और मछलीका तैल यह संपूर्ण द्रव्य एकत्र पीसकर वटिका बनावे, वह गुटिका गृहमें स्थापन करके गृहस्थित संपूर्ण जल पात्र ढक दे, यह वटिका भक्षण करके मूषिका नष्ट होती हैं ।।

लीख–खटमल–दूरीकरण

मूषिकाकर्षकं यावत्साम्बरीगुडतैलतः ।
कुलीरवसयाश्चूर्णं कृतं तस्यैव कर्पटे ।।
दीपो मत्कुणसंघातं रात्रौ वा कर्षयेद्ध्रुवम् ।

पूर्वोक्त मूषिका नाशक वस्तु और साम्बरीलवण (लवण विशेष) गुड़ तैल और कर्कटकी चरबी एकत्र कर वस्त्र खण्डमें मथ कर बत्ती बनावे, इस बत्ती से रात्रिमें दीप जलाने पर लीख और खटमल दूर होते हैं ।।

मशकदूरीकरण

गुडश्रीवासभल्लातविडङ्गत्रिफलायुतम् ।
लाक्षारसोऽर्कपत्रञ्च धूपे मशकमत्कुणान् ।
नाशयेन्नात्र संदेहः सर्पमूषिकवृश्चिकान् ।।

गुड़, पियावाँसा, भिलावा, वायविड़ंग, त्रिफला, लाख, आकके

पत्ते यह संपूर्ण एकत्र कर धूप देनेसे मशक (मच्छर), लीखें, खटमल, सर्प, मूषिक और विच्छू दूर होते हैं। इसमें संदेह नहीं ।।

भूतावेशनिवारण और बालग्रह दूरीकरण ।

शिरीषपत्रं पुष्पञ्च रविवारे समुद्धरेत् ।
उलूविष्ठां गृहीत्वा तु उष्ट्ररोम्णा तु संयुतम् ।
शुनो विष्ठासमायुक्तं मार्ज्जारस्यैव संयुतं ।
गोमयञ्चैव संयुक्तं गन्धकं संयुक्त ततः ।।
श्वेतगुञ्जासमायुक्तं कटुतैलेन पाचयेत् ।
धूपं दत्त्वा जपेन्मंत्रं भूतबाधा विनश्यति ।।
बालग्रहा राक्षसाश्च बालानां दुष्टवायवः ।
प्रेतिनी योगिनी चैव धूपं दृष्ट्वा पलायते ।।

मंत्रस्तु–ओं नमः श्मशानवासिने भूतादिपलायनं कुरु कुरु स्वाहा लक्षजपात् सिद्धिः ।।

रविवारमें सिरसके पत्ते और पुष्प संग्रहकर उनके सहित उल्लूकी विष्ठा, ऊंटका रोम, कुत्तेकी विष्ठा, बिल्लीकी विष्ठा, गोबर, गन्धक और सफेद चौंटली मिश्रित कर इनके संग तैलको पकावे, तैल पकानेके समय उपरोक्त "ओं नमः" इत्यादि मंत्र बराबर पढ़ना चाहिये, इसके उपरांत इस तैलको धूप दे, तब वह धूप उक्त मंत्रसे एकसौ आठ वार अभिमंत्रित कर ले, धूप देनेके उपरान्त भी उक्त मंत्र अष्टोत्तरशत वार (१०८) जप करना चाहिये, इस प्रकार करनेसे भूतावेश, बालग्रह और राक्षस, भूतिनी, डाकिनी, प्रेतिनी, वेताल, योगिनी और बालकको हवा लगना इत्यादि संपूर्ण विघ्न दूर होते हैं। मंत्र सबसे पहले एक लक्ष जप कर सिद्ध करैं ।।

सर्पौषधिकथनम्

श्वेतापराजितामूलं देवदानीयमूलकम् ।
वारिणा पेषितं नस्यं कालदष्टोऽपि जीवति ।।

जलके संग सफेदविष्णुक्रान्ता और बड़ी तोरईकी जड़ पीसकर हुलास सूंघनेपर सर्पसे काटा हुआ रोगी आरोग्यता प्राप्त करता है ।।

दधिमधुनवनीतं पिप्पलीशृंगवेरं
मरिचमपि च कुष्टं चाष्टमं सैन्धवञ्च ।
यदि दशति सरोषस्तक्षको वासुकिर्वा
यमसदनगतः स्यादानयेत्तत्क्षणेन ।।

दही, शहद, मक्खन, पीपल, अदरख, गोलमरिच, कूठ और सेंधा, नमक, इन आठ द्रव्योंके सेवन करनेसे कुद्ध तक्षक वा वासुकीका डसा हुआ पुरुष भी तत्काल यमालयसे लौट आता है ।।

कटुकीं मूशलीमूलं पीत्वा तोये विषापहम् ।
वृश्चिका वीरणामूलं लेपात्सर्पविषापहम् ।।

जलके संग कुटकी और तालमूलीका चूर्ण मिलाकर सेवन करने से सर्पका विष नष्ट होता है, विच्छूका भी विष खशकी जड़ पीसकर लेप करनेसे नष्ट होता है ।।

सुख प्रसवमंत्र

ओं मन्मथ मन्मथ वाहि वाहि लम्बोदर मुञ्च मुञ्च स्वाहा ।।
ओं मुक्ताः पाशा विपाशाश्च मुक्ताः सूर्य्येण रश्मयः ।
मुक्तः सर्वभयाद्गर्भ एह्येहि मा चिर मा चिर स्वाहा ।।
एतदन्यतरेणाष्टवारं जलमभिमंत्र्य पेयम् ।।

"ओं मन्मथ" इत्यादि एवं "ओं मुक्ता" इत्यादि इन दोनोंमें से एकके द्वारा अष्टवार जल अभिमंत्रित करके पान करनेसे गर्भिणी नारी तत्काल सुखसे प्रसव कर सकती है ।।

अदृश्य होना

अर्कशाल्मलिकार्पासिपट्टपङ्कजतन्तुभिः ।
पञ्चभिर्वर्त्तिकाभिश्च नृकपालेषु पञ्चसु ।।
नरतैलेन दीपाः स्युः कज्जलं नृकपालके ।
ग्राहयेत् पञ्चभिर्यत्नात् पूर्व्ववच्च शिवालये ।।
पञ्चस्थानीयजातन्तु एकी कुर्य्याच्चि तं पुनः ।
मंत्रयित्वाञ्जयेन्नेत्रे देवैरपि न दृश्यते ।।

मंत्रस्तु–ओं हुं फट् कालि कालि मांसशोणितं खादय खादय देवी मा पश्यतु मानुषेति । हुं फट् स्वाहेति मंत्रेणाष्टोत्तरसहस्राभिमंत्रितं कृत्वा तत्कज्जलं नेत्रे दत्त्वा त्रैलोक्यामदृश्यो भवति ।।

आक, सेमरा, कपास पट्ट और पट्टसूत्रद्वारा पांच मनुष्यकी खोपड़ियोंमें मनुष्य तैलसे पांच दीप प्रज्वलित कर उन पांच दीपोंकी शिखामें पांच प्रकारका काजल पारे, किसी शिवालयमें यह कार्य्य करना चाहिये, फिर उक्त पांचविधिसे कज्जल एकत्र और "ओं हुँ फट् कालि" इत्यादि मंत्रसे अष्टोत्तर सहस्र (१००८) वार अभिमंत्रित करके वह काजल आखोंमें आंजे, इस प्रकार करनेसे वह व्यक्ति देवताओंसे भी अदृश्य हो सकता है ।।

वंध्यागर्भ–धारण

समूला सहदेवी च ग्राह्या पुष्यार्कवासरे ।।
छायाशुष्कन्तु तच्चूर्णं एकवर्णगवां पयः ।।
कर्षं पीत्वा भवेद्गर्भो वन्ध्या भवति पुत्रिणी ।।

पुष्य नक्षत्रयुक्त रविवारमें जड़ सहित सहदेई बूटी ग्रहण करके छायामें शुष्क कर चूर्ण करै, यह चूर्ण एकवर्णा गायके दुग्धसहित दो तोले परिमाण पान करै, ऋतुकालमें एक सप्ताह यह औषधि सेवन करके भयशोकादिक त्याग पूर्वक वास करै, इससे वन्ध्या स्त्री भी पुत्रवती होती है ।।

मृतवत्सा दोशशांति ।

गर्भसञ्जातमात्रेण पक्षे मासे च वत्सरे ।
पुत्रो म्रियेत वर्षादौ यस्याः सा मृतवत्सका ।।

गर्भधारणसे प्रसव–पर्य्यन्त एक पक्ष, एक मास, अथवा एक वर्षमें जिस स्त्रीकी संतान मर जाती है, उसका नाम "मृतवत्सा" है ।

गृहीत्वा शुभनक्षत्रे त्वपामार्गस्य मूलकम् ।
तथैव लक्ष्मणामूलं एकवर्णगवां पयः ।।
पीत्वा सा लभते गर्भं दीर्घजीवी सुतो भवेत् ।।

शुभ नक्षत्रमें चिरचिराकी जड़ और लक्ष्मणाकी जड़ ग्रहण कर एक वर्णा गायके दुग्धमें पीस पान करनेसे दीर्घ जीवी पुत्र प्राप्त होता है, और मृतवत्सा दोषकी शांति होती है ।।

काकवन्ध्या दोषशांति ।

अश्वगन्धाया मूलन्तु ग्राहयेत् पुष्यभास्करे ।
पेषयेन्महिषीक्षीरैः पलार्द्धं भक्षयेत् सदा ।।
सप्ताहाल्लभते गर्भं काकवन्ध्या चिरायुषम् ।।
मंत्रस्तु–ओं नमः शक्तिरूपाय अस्याः गृहे पुत्रं कुरु कुरु स्वाहा ।।
अष्टोत्तरशतजपेन सिद्धिः ।।

पुष्यनक्षत्रयुक्त रविवारमें असगन्धकी जड़ ग्रहण कर भैंसके दुग्धमें पीस अर्द्ध पल सेवन करे, इससे काकबन्ध्या स्त्री भी एक सप्ताह में गर्भधारण करती है औरयथा समयमें दीर्घजीवीपुत्र प्राप्तकरती है।।

पुरश्चरण ।

कुजे वा शनिवारे वा नरमुण्डं समाहृतम् ।
पञ्चगव्येन मिलितं चन्दनाद्यैर्विशेषतः ।।

---

१ पूर्वं पुत्रवती या सा क्वचिद्वन्ध्या भवेद्यदि । काकवध्या तु सा ज्ञेया चिकित्सा तत्र कथ्यते ।। जो पूर्वमें पुत्रवती थी और फिर संतान उत्पन्न ना हुई उसका नाम "काकवन्ध्या" है ।

निक्षिप्य भूमौ हस्तार्द्धमानतः कानने वने ।
तत्र तद्दिवसे रात्रौ सहस्रं यदि मानतः ।।
एकाकी प्रजपेन्मन्त्री स भवेत् कल्पपादपः ।।

मङ्गल अथवा शनिवारमें एक नर-मुण्ड लाय उसको पञ्चगव्य से सींच और चन्दन चर्च्चित कर वनस्थलमें अर्द्ध हस्त परिमित भूमिके नीचे रक्खै, इस दिन रात्रिकालके समय इस स्थानमें अकेला बैठकर सहस्र मंत्र जप करनेसे पुरश्चरण होता है, इस प्रकार पुरश्चरण करनेसे साधक कल्प वृक्षस्वरूप होता है ।।

अथवान्यप्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते

शवमानीय तद्वारे तेनैव परिखन्यते ।
तद्दिनात्तद्दिनं यावत्तावदष्टोत्तरं शतम् ।
स भवेत् सर्व्वसिद्धिशो नात्र कार्या विचारणा ।।

दूसरे प्रकारकी पुरश्चरण प्रणाली कहते हैं, यथा:–एक शव लाय पूर्व्वोक्त प्रणालीसे द्वार–देशमें रखकर उसके ऊपर बैठ मन्त्र जपै । जिस दिन प्रथम जप आरंभ करै, उस दिनसे फिर उसी दिनतक अष्टोत्तरशत जप करै, इस प्रकार जप करनेसे पुरश्चरण होता है। इस प्रकार पुरश्चरण करनेसे साधक सर्व्वसिद्धिका अधीश्वर होता है।।

अथवान्यप्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते

अष्टम्याञ्च चतुर्द्दश्यां पक्षयोरुभयोरपि ।
सूर्य्योदयं समारभ्य यावत् सूर्य्योदयान्तरम् ।।
तावज्जप्त्वा निरातंक सर्व्वसिद्धीश्वरो भवेत् ।।

अन्य प्रकारसे पुरश्चरण प्रणाली कहते हैं–यथा–शुक्ल अथवा कृष्णपक्षकी अष्टमी तिथिमें सूर्योदय के समयसे आरंभ कर फिर सूर्य्योदय तक जप करै, इस प्रकार पुरश्चरण करनेसे एक पुरश्चरण होता है, इस पुरश्चरणके बलसे साधक अणिमादि अष्ट सिद्धिका अधीश्वर हो सकता है ।।

अथवान्यप्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते

शरत्काले चतुर्थ्यादिनवम्यन्तं विशेषतः ।
भक्तितः पूजयित्वा तु रात्रौ तावत्सहस्रकम् ।।
जपेदेकाकी विजने केवलं तिमिरालये ।
अष्टम्यादिनवम्यन्तमुपवासपरो भवेत् ।।

दूसरे प्रकारसे पुरश्चरणका क्रम, यथा—शरत्कालके समय चतुर्थी तिथिसे नवमी पर्यन्त प्रतिदिन रात्रिमें भक्तिपूर्व्वक देवीकी पूजा कर एक सहस्र जप करै, निर्जन अंधेरे घरमें अकेला जप करे, अष्टमीसे नवमीपर्यन्त उपवासी होकर जप करना चाहिये ।।

कृष्णाष्टमीं समारभ्य यावत्कृष्णाष्टमी भवेत् ।
सहस्रसंख्यजप्येन पुरश्चरणमिष्यते ।।

अन्य प्रकार— कृष्णाष्टमीसे आरंभ करके फिर कृष्णाष्टमी पर्य्यन्त नित्य एक हजार मंत्रका जप करै, इस प्रकार एक मास जप करनेसे पुरश्चरण होता है ।।

कृष्णां चतुर्द्दशीं प्राप्य नवम्यन्तं महोत्सवे ।
अष्टमीनवमीरात्रौ पूजां कुर्य्याद्विशेषतः ।।
दशम्यां पारणं कुर्यान्मत्स्यमांसादिभिर्युतम् ।
षट्सहस्रं जपेन्नित्यं भक्तिभावपरायणः ।।

देवी पक्षमें पहले कृष्णचतुर्दशीसे महानवमी पर्य्यन्त प्रतिदिन मंत्रजप करै और महाष्टमी तथा महानवमीकी रात्रि में उपवासी हो भलीभांतिसे देवीकी पूजा कर दशमीके दिनमें मत्स्य मांसादि द्वारा पारण करै । इस पुरश्चरणमें प्रतिदिन भक्तिपूर्वक छै हजार जप करना चाहिये ।।

चतुर्द्दशीं समारभ्य यावदन्या चतुर्द्दशी ।
तावज्जप्ते महेशानि पुरश्चरणमिष्यते ।।
केवलं जपमात्रेण मंत्रसिद्धिर्भवेत्तु हि ।।

चौदशसे पुनर्वार चौदशतक प्रतिदिन एक हजार जप करनेसे पुरश्चरण होता है, इस प्रकार जप करनेसे मंत्रसिद्धि होती है।

सूर्य्योदयं समारभ्य यावत्सूर्य्योऽस्तगो भवेत् ।
तावज्जप्त्वा महेशानि पुरश्चरणमिष्यते ।।

हे महेश्वरि ! सूर्य्योदयसे सूर्यास्त पर्य्यन्त बराबर जप करनेसे भी पुरश्चरण होता है ।।

वीरसाधन

अष्टम्याञ्च चतुर्द्दश्यां पक्षयोरुभयोरपि ।
कृष्णपक्षे विशेषेण साधयेद्वीरसाधनम् ।।

कृष्ण किम्वा शुक्लपक्षकी अष्टमी अथवा चतुर्दशी तिथिमें वीरसाधन करै, वीरसाधन कृष्णपक्षमें श्रेष्ठ है ।।

तत्सार्द्धप्रहरे यामे गते च सुरसुन्दरि ।
शवं वापि चितां वापि नीत्वा गत्वा यथासुखम् ।।
साधयेत्स्वहितं मंत्री मंत्रध्यानपरायणः ।
भयं नैव तु कर्त्तव्यं हास्यं तत्र विवर्ज्जयेत् ।।
चतुर्द्दिशं न वीक्षेत मंत्रमेव समभ्यसेत् ।।

साधक डेढ़प्रहर रात्रि व्यतीत होने पर चितास्थानसे एक शव लाय मंत्र ध्यान परायण हो अपने हित साधनके निमित्त कार्य्य करै, इस साधनके समय साधक किसी प्रकार न डरे, हास्य परिहास्य त्याग करे और किसी ओर न देखकर एकाग्र चित्तसे केवल मंत्रका जप करता रहे ।।

पूजाद्रव्यादि

सामिषान्नं गुडं छागं सुरा पायसमिष्टकम् ।।
नानाफलञ्च नैवेद्यं स्वस्वकल्पोक्तसाधितम् ।।

वीर साधन कार्य्यमें जिन संपूर्ण द्रव्योंकी आवश्यकता है वही

कहे जाते हैं, सामिषान्न, गुड़, छाग, सुरा, पायस (खीर), अनेक प्रकारके फल, नैवेद्य और स्वस्वदेवताके पूजा–विहित द्रव्य ।।

चितास्थानं समानीय सुहृद्भिः शस्त्रपाणिभिः ।
समानगुणसम्पन्नैः सांधयेद्वीतभीः स्वयम् ।।

साधक इन संपूर्ण द्रव्योंको श्मशान स्थानमें लायकर निर्भय चत्तसे समान गुणशाली अस्त्रधारी बन्धुवर्गोंके सहित वीर साधन करे ।।

अपिच

बल्यर्थं सामिषान्नञ्च गुडं छागं तथा मधु ।
पिष्टकं परमान्नञ्च पयो मूलं फलं तथा ।।
सप्तपात्रं बलिं कृत्वा चतुः पात्रं चतुर्द्दिशि ।
पात्रत्रयं सदा मध्ये स्थापयेन्मनुनामुना ।।
गुरुं वा भ्रातरं वापि ब्राह्मणान्वापि सुव्रतान् ।
अन्यानपि च रक्षार्थं किंचिद्दूरे निवेशयेत् ।।

मतान्तरमे लिखा है कि, बलिके लिये आमिष अन्न, गुड़ छाग, मधु, पिट्ठी, परमान्न, दुग्ध, फल और मूल यह संपूर्ण द्रव्यसंग्रह करके वीरसाधन करे, बलिद्रव्य सांत पात्रोंमें रखकर उसके चार पात्र चारों ओर और बीचमें तीन पात्र स्थापन कर मंत्र पाठपूर्व्वक निवेदन करे, गुरु, भ्राता, तथा सुव्रत ब्राह्मणको आत्मरक्षाके लिये थोड़ी दूर-पर नियुक्त करे ।।

चितालक्षण

असंस्कृता चिता ग्राह्या न तु संस्कारसंस्कृता ।
चाण्डालादिषु संप्राप्ता केवलं शीघ्रसिद्धिदा ।।

अनन्तर चिता लक्षण कहते हैं। वीरसाधन कार्य्यमें असंस्कृत चिता ही ग्रहण करने योग्य होती है, संस्कृत अर्थात् जलसेकादि द्वारा परिष्कृत चितामें वीरसाधन न करे, चाण्डालादिके श्मशानमें वीरसाधन करनेसे शीघ्रही फल प्राप्त होता है ।।

अधिकारी निरूपण

महाबलो महाबुद्धिर्म्महासाहसिकः शुचिः ।
महास्वच्छो दयावांश्च सर्व्वभूतहिते रतः ।।

वीरसाधनका अधिकारी निरूपण करते हैं। जो महावलशाली, महाबुद्धि, महासाहसयुक्त, सरलचित्त, दयाशील, सर्व्वप्राणियोंके हित साधनमें अनुरक्त है, वही इस कार्यका उपयुक्त पात्र है ।।

ततः सामान्यार्घ्यं विधाय स्वस्तिवाचनपूर्व्वकं
संकल्पं कुर्य्यात् ।। यथा ॐ अद्येत्यादि अमु-
कगोत्रः श्री अमुकदेव शर्मा अमुकमंत्रसिद्धिकामः
श्मशानसाधनमहं करिष्ये । इति संकल्प्य ।
वस्त्रालङ्कार भूषणाद्यैर्भूषितः पूर्व्वदिङ्मुखः
अस्त्रान्तमूलमंत्रेण प्रोक्षणं यागभूमिषु ।
मूलमंत्रेण–फट्कारान्तेनेत्यर्थः ।।
गुरुपादाम्बुजन्ध्यात्वा गणेशं बटुकं तथा ।
योगिनीं मातृकाश्चैव वामपादपुरःसरम् ।।
तथा च–गणेशादिकं संपूज्य अस्त्रमंत्रेणात्मानं संरक्ष्य अस्त्रमंत्रेण
मंत्रज्ञो रक्षामात्मनि कारयेत् ।
ततः–ये चात्र संस्थिता देवा राक्षसाश्च भयानकाः ।।
पिशाचाः सिद्धयो यक्षा गन्धर्व्वाप्सरसां गणाः ।
योगिन्यो मातरो भूताःसर्व्वाश्च खेचराःस्त्रियः ।।
सिद्धिदास्ता भवन्त्वत्र तथा च मम रक्षिकाः ।
प्रणम्य मनुनानेन पुष्पाञ्जलित्रयं क्षिपेत् ।।

इस प्रकार अधिकारी व्यक्ति सामान्य अर्घ्य स्थापन कर स्वशाखोक्त स्वस्तिवाचन पूर्वक संकल्प करे, संकल्पवाक्य मूलमें लिखे

गये हैं, संकल्पके उपरान्त साधक वस्त्रालंकारादि अनेक भूषणोंसे विभूषित हो, पूर्व्वाभिमुख बैठकर फट्कारान्त मूल मंत्रसे यागस्थान प्रोक्षण करै, फिर गुरुके वाम पादकी रजका ध्यान कर गणेश वटुक योगिनी और मातृकागणोंकी पूजा करै, अनन्तर साधक "फट्" इस मंत्रसे आत्मरक्षा करै। "ये चात्र संस्थिता देवाः" जो यहां देवता भयानक राक्षस, पिशाच, सिद्ध, यक्ष, गंधर्व अप्सराओंके गण, योगिनी माता और सब खेचरोंकी स्त्रियें स्थित हैं, वह सब सिद्धि देनेवाली होकर मेरी रक्षा करैं, इत्यादि मूलके लिखित मंत्रोंसे प्रणामपूर्वक तीन अञ्जलि पुष्प प्रदान करै ॥

श्मशानाधिपतिं पश्चाद् भैरवं कालभैरवम् ।
महाकालं जपेत् पश्चात् पूर्व्वादिदिक्चतुष्टये ॥
शब्दबीजं ततः पश्चात् श्मशानाधिपतत्परम् ।
इममन्ते सान्निधान्नं बलिं गृह्ण ततः परम् ॥
गृह्ण गृह्णापय द्वन्द्वं विघ्ननिवारणं ततः ।
कुरुसिद्धिं ममान्तञ्च प्रयच्छ स्वाहयान्वितम् ॥
प्रणवाद्येन मनुना प्रथमो बलिरीरितः ॥
मायान्ते भैरवात् पश्चाद्भयानकस्ततः परम् ॥
पूर्व्ववद्बलिमुद्धृत्य दक्षिणे बलिमाहरेत् ।
पञ्चमे कालदेवाय प्रणवाद्येन कल्पयेत् ॥
शब्दान्ते कालशब्दान्ते भैरवेति ततः परम् ।
श्मशानाधिप इत्येवं पूर्व्ववच्चोत्तरे हरेत् ॥
हुमन्ते च महाकालात् पश्चात् पूर्व्ववदुच्चरेत् ।
पाद्यादिभिश्च मंत्रज्ञो बलिं पश्चान्निवेदयेत् ॥

तद्यथा-श्मशानाधिपतिं पञ्चोपचारैः सम्पूज्यानेन मंत्रेण बलिं दद्यात्॥

तद्यथा--ओं हूँ श्मशानाधिप इमं सान्निधान्नबलिं गृह्ण गृह्ण गृह्णापय विघ्ननिवारणं कुरु सिद्धिं मम प्रयच्छ स्वाहा ॥

ततो भैरवं पूर्व्ववत्संपूज्य दक्षिणस्यां "ह्रीं
भैरवभयानक इमं सामिषान्नबलिम्"–इत्यादि ।
ततः पश्चिमे कालभैरवं संपूज्य "हूं महाकाल
श्मशानाधिप इमं सामिषान्नबलिम्"–इत्यादि ।।
चितामध्ये ततो दद्याद्बलित्रयमनुत्तमम् ।
कालिरात्रि महाकालि कालिके घोरनिस्वने ।।
कालिकायै बलिं दत्त्वा भूतनाथाय दापयेत् ।
शब्दान्ते भूतनाथान्ते श्मशानाधिप इत्यपि ।।
प्रणवाद्येन मनुना दापयेद्बलिमुत्तमम् ।
शब्दान्ते य सर्व्वगणनाथान्ते चाधियपाय च ।।
श्मशानमस्तके दत्त्वा पञ्चगव्येन सुंदरि ।
अद्भिश्च प्रोक्षणं कृत्वा पीतवस्त्रं न्यसेत्ततः ।
भूर्ज्जे वा वटपत्रे वा तत्र पीठमनुं न्यसेत् ।
पीठमास्तीर्य्य तस्मिन् वै बद्धवीरासनस्ततः ।।
वीरार्द्दनेन मनुना रक्षां दिक्षु प्रकल्पयेत् ।।
अस्यार्थः – श्मशानास्थ्यादिकं पच्चगव्येन संप्रोक्ष्य भूर्ज्जपत्रादौ
तत्र व्याघ्रचर्म्मादि पीठमास्तीर्य्य तत्र वीरासनक्रमेणोपविश्य
वीरार्द्दनेन मंत्रेण चतुर्द्दिक्षु रक्षां कुर्यात् ।।

वीरार्द्दनमंत्रस्तु–"हूँ हूँ ह्रीं ह्रीं कालिके घोरदंष्ट्रे प्रचंडे चण्डनायिके
दानवान् दारय हन हन शवशरीरे महाविघ्नं छेदय छेदय स्वाहा
हूँ फट्" इति ।।

अनेन मंत्रितं लोष्टं दशदिक्षु विनिक्षिपेत् ।
तन्मध्ये भैरवो देवो न विघ्नः परिभूयते ।।
नीलतंत्रे–कूर्च्चद्वयं ततो देवि मायायुग्मं ततः परम् ।
कालिके घोरदंष्ट्रे च प्रचण्डे चण्डनायिके ।।

दानवान् दारयेत्युक्त्वा हनेति द्वितयं पुनः ।
शवशरीरे महाविघ्नं छेदयद्वितयं पुनः ।।
द्विठान्तो वर्म्मचास्त्रान्तो वीरार्द्दनमनुर्मतः ।।

इस विषयका वीरतंत्रमें जो प्रमाण लिखा है वह सब वचन इस स्थलके मूलमें दिखाई देंगे, पूर्वकी ओर श्मशानाधिपति, दक्षिणकी ओर भैरव, पश्चिमकी ओर कालभैरव और उत्तरकी ओर महाकाल भैरवकी पूजा करके बलि प्रदान करै, बलिका मंत्र और मंत्रोद्धारका प्रमाण मूलमें स्पष्टरूपसे लिखा है। मूलके लिखित मंत्रसे पूर्वादिक्रमानुसार "श्मशानाधिपति" इत्यादि भैरव गणोंकी पूजा और बलिप्रदान करै, यह आमिष सहित बलि ग्रहण करो, विघ्न निवारण करो, और मुझे सिद्धि दो, पहला बलि ओंकारयुक्त मंत्रसे दे। फिर "भैरव भयानक" मंत्रलिखित नामोंको उच्चारण पूर्वक पूर्व्ववत् बलिका उद्धारकर दक्षिणमें दे,पश्चिम में काल देवको ओंकारपूर्वक बलि दे, शब्दकालादि शब्द लगाकर नीचे लिखा मंत्र पढ़े, चितामें शेष तीनों बलिप्रदान करै। यथा–"ओं कालरात्रि महकालि" इत्यादि मंत्रसे कालिका देवीको अवशिष्ट तीनों बलिका एक बलिद्रव्य प्रदान करके 'ओं हूँ भूतनाथ श्मशानाधिप इमं सामिषान्न बलिं," इत्यादि मंत्रसे अपर बलि निवेदन करै। फिर 'आ हूँ सर्व्वगणनाथ श्मशानाधिप इमं सामिषान्न बलि' इत्यादि मंत्रसे तीसरी बलि निवेदन करनी चाहिये। इस प्रकार बलि प्रदान कर पञ्चगव्य और जलद्वारा श्मशानस्थ अस्थ्यादि प्रोक्षण कर उसके ऊपर पीतवस्त्र डाल वटपत्र, अथवा भूर्ज्जपत्रमें पीठमंत्र लिख पीतवस्त्रके ऊपर स्थापन करै, उसके ऊपर व्याघ्र चर्म्मादि आसन बिछाकर वीरासनसे बैठे, वीरार्द्दन मंत्रसे चारों ओर रक्षा करै "हूँ हूँ ह्रीं ह्रीं कालिके" इत्यादि मूलके लिखित वीरार्द्दन मंत्रसे पूर्व्वादि दशों ओर लोहा निक्षेप करै, इस प्रकार दशों ओर रक्षा करके उनमें बैठकर साधन करनेसे कोई विघ्न

नहीं हो सकता, वीरार्द्दन मंत्रोद्धारका जो संपूर्ण प्रमाण नीलतंत्रमें लिखा है वह समस्त वचन मूलमें उद्धत हुए हैं ।।

यदि प्रमादाद्विवेशि साधको भयविह्वलः ।
ततस्तैस्तैः सुहृद्वर्गैं रक्षितो नाभिभूयते ।।

साधनकालके समय यदि साधक किसी प्रकार भयसे विह्वल हो तो तत्काल प्रथम कहे हुए सुहृद्वर्ग ततकाल उसका भय निवारण करैं, सुहृद्गण सर्व्वदा इस प्रकार सतर्क रहैं कि जिसमें किसी प्रकार साधक भयसे विह्वल न हो ।।

सितार्ककर्पूरसितवाटचालकतूलैर्व्वर्त्तिकां निर्म्माय तत्र प्रदीपं संस्थाप्य "देव्यस्त्रेभ्यो नमः" इत्यस्त्रं संपूज्य अधस्तात् ज्वलत्प्रदीपं निखनेत् ।।

हते तस्मिन्महादीपे विघ्नैश्च परिभूयते ।
तदधश्चास्त्रमंत्रेण निखनेत्कुलदीपकम् ।।

फिर कर्पूर मिश्रित सफेद आक और सफेद वाटचालकी रुई द्वारा बत्ती बनाय दीपक जलाय उस स्थानमें रख दे "ओं देव्यस्त्रेभ्यो नमः" इस मंत्रसे अस्त्र पूजा कर साधक इस प्रज्वलित दीपकको नीचे रक्खे, इस विषयका प्रमाण जो सम्पूर्ण तंत्रोंमें लिखा है वह समस्त वचन । मूलमें उद्धृत हुए हैं, इस दीपकके बुझ जानेपर साधकको महाभय विघ्न होता है ।।

ततस्तत्कल्पोक्तभूतशुद्ध्यादि न्यासजालं विधाय
इष्टदेवतां संपूज्य संकल्पमंत्रं जपेत् ।।

संकल्पस्तु—अद्येत्यादि अमुकगोत्रःश्रीअमुकदेवशर्म्मा अमुकमंत्रस्यामुकसंख्यजपमहं करिष्ये ।।

इति संकल्प्य—देवताध्यानपुरःसरं मंत्रं जपेत् ।

तथा च—तत्तत्कल्पविधानेन भूतशुद्ध्यादिकं चरेत् ।

षोढा वा तारकं वापि विन्यस्य पूजयेत्ततः ।।
मंत्रध्यानपरो भूत्वा जपेन्मंत्रमनन्यधीः ।।

इसके उपरान्त स्वीय कल्पोक्त विधानसे भूतशुद्धचादि और न्यास समूह करके इष्टदेवताकी पूजा समापत करता हुआ संकल्प पुर्व्वक जप आरंभ करै, संकल्प वाक्य मूलमें लिखे गये हैं, देखनेसे समझमें आ जायँगे, संकल्पके अनन्तर अपने हृदयमें देवताका ध्यान कर मंत्रका जप करै । इसका प्रमाण अन्यान्य तंत्रोंमें भी लिखा है ।

जपनियमस्तु–एकाक्षरी यदि भवेंद्दिक्सहस्रं ततो जपेत् ।
द्वयक्षरेऽष्टसहस्रं स्यात्त्रयक्षरे चायुतार्द्धकम् ।।
अतः परंतु मंत्रज्ञो गजान्तकसहस्रकम् ।
निशायां वा समारभ्य ह्यु दयान्तं समाचरेत् ।।
गजान्तकमित्यष्टोत्तरसहस्रमित्यर्थः ।

जपका नियम यथा–एकाक्षर मंत्र दश हजार जपे, द्वयक्षर मंत्र स्थलमें आठ हजार, त्र्यक्षर मंत्रसे पांच हजार वार जप करै, चतुरक्षरादिमंत्र स्थलमें अष्टोत्तर सहस्र मंत्र जप करना चाहिये ।।

यद्यसह्यभयं कर्णे नेत्रे वस्त्रेण बन्धयेत् ।
ततोऽर्द्धरात्रपर्य्यन्तं यदि किञ्चिन्न लक्ष्यते ।।
जयादुर्गाख्यमनुना तेनैव सर्षपान् क्षिपेत् ।
जयदुर्गामन्त्रस्तु–ओं दुर्गे दुर्गे रक्षिणि स्वाहा ।।
ओं तिलोऽसि सोमदैवत्यो गोसवस्तृप्तिकारकः ।
पितृणां स्वर्गदाता त्वं मर्त्त्यानां मम रक्षकः ।।
भूतप्रेतपिशाचानां विघ्नेषु शांतिकारकः ।
इति पठित्वा ईशानादि चतुर्द्दिक्षु तिलांश्च निक्षिपेत् ।
तत सप्तपदं गत्वा तत्रैव संविशेत् ।
पुनर्द्देवतां संपूज्य जपेत् ।

रात्रिके समयसे आरंभ कर सूर्य्योदय पर्य्यन्त जप करना चाहिये यदि साधक असह्य भयसे अत्यन्त विह्वल हो तो वस्त्र से साधकके कर्ण और नेत्र बांध दे, जिससे वह कुछ देख सुन न सके, यदि आधी-रात बीतने पर भी कुछ न दीखे तो "ओं दुर्गे रक्षिणि स्वाहा" इस जयदुर्गा मन्त्रसे ईशानादि चारों कोणमें सरसों और "तिलोऽसि" इत्यादि मंत्रसे तिल निक्षेप करने चाहिये, इसके उपरांत पहिले बैठनेके स्थानसे सात पग चल उस स्थानमें बैठ पुनर्वार देवताकी पूजा करके जप करना चाहिये ।।

ततो यदि वरं वरयेति वदेत्तदा सत्यं कारयेत् ।।

तथा च-वरं वरय चेत्युक्ते साधकः स्थिरमानसः ।

सत्यन्तु कारयित्वा च वरयेद्वरमुत्तमम् ।।

यदि जप करते करते कोई आकर "वर ग्रहण कर" यह बात कहे, तब देवताको प्रतिज्ञाबद्ध कर अपना अभिलषित वर ग्रहण करै ।।

जपादौ तु बलिं दत्त्वा पश्चादपि बलिं हरेत् ।

जपान्ते जपमध्ये वा देहि देहीति भाषिते ।।

तदापि च बलिं दद्यान्महिषं वापि छागलम् ।।

बलिञ्च यवपिष्टमयेन दद्यात् ।।

जपके आदिमें, जपके मध्यमें और जपके अन्तमें बलिप्रदान करना चाहिये, जपके आदि मध्य अथवा अन्त समयमें देवी जब बलिकी प्रार्थना करैं तब ही महिष अथवा छाग बलि प्रदान करै, यवकी पिट्ठी द्वारा महिष अथवा छाग बनाकर बलि देवे ।।

यदा बलिं प्रार्थयते नरकुञ्जरमेव वा ।

दिनान्तरेऽपि दास्यामि स्वीकृत्य स्वगृहं व्रजेत् ।।

जब देवी नर अथवा हस्तीके बलिकी प्रार्थना करै तब 'दिनान्तरमें बलि प्रदान करूंगा' इस प्रकार प्रतिज्ञा कर अपने गृहको गमन करै ।।

अपरेऽह्नि ततो दद्यात्पिष्टेन नरकुञ्जरान् ।
पिष्टेनेति यवधान्योद्भवेनेत्यर्थः ॥

दूसरे दिन जौकी पिट्ठी अथवा धान्यकी पिट्ठीसे नर और हस्ती बनाकर खड्ग द्वारा पूर्व्वोक्त मंत्रसे छेदन करै ॥

तथा च–यवक्षोदमयं वापि शालिक्षोदमयन्तथा ।
चन्द्रहासेन विधिवत्तत्तन्मंत्रेण घातयेत् ॥
जपान्ते तु बलिं दद्याद्देवतायै यथाविधि ।
महिषं छागलं वापि गृहीत्वा वरमेव च ॥
गृहं गच्छेत्स्वसुहृदा सार्द्धं संहृष्टमानसः ।
ततो दक्षिणां दद्यात् ॥
समाप्य साधनं देवि दक्षिणां विभवावधि ।
गुरवे गुरुपुत्राय तत्पत्न्यै वा निवेदयेत् ॥

तत्रान्तरमें जो संपूर्ण प्रमाण लिखा है वह समस्त प्रमाण इस स्थलमें उद्धृत है. योगिनी हृदयमें लिखा है कि, जपके अंतमें उक्त रूपसे महिष अथवा छागका बलि प्रदान कर वर ग्रहण पूर्व्वक सुहृद वर्गोंके सहित प्रसन्न चित्तसे घर जाय और अपनी शक्तिके अनुसार गुरु, गुरुपुत्र अथवा गुरुपत्नीको दक्षिणा देवे ॥

शवसाधन

स्थाननियम

शून्यागारे नदीतीरे पर्व्वते निर्ज्जनेऽपि वा ।
बिल्वमूले श्मशाने वा तत्समीपे वनस्थले ॥

इसके उपरान्त शवसाधन प्रक्रिया कही जाती है। शवसाधनके स्थान संबंधमें तंत्रमें लिखा है कि, शून्य गृह, नदीका तट, पर्व्वत निर्ज्जन प्रदेश, बिल्वमूल, श्मशान, अथवा श्मशानसमीपस्थ वनप्रदेशमें शवसाधन कार्य्य करे ॥

अष्टम्याञ्च चतुर्द्दश्यां पक्षयोरुभयोरपि ।
भौमवारे तमिस्रायां साधयेत्सिद्धिमुत्तमाम् ।।

कृष्ण अथवा शुल्कपक्षकी अष्टमी और चतुर्द्दशी तिथिमें मंगलवारको रात्रिके समय उक्त साधन करनेसे साधक उत्तम सिद्धि प्राप्त कर सकता है ।।

माषभक्तं च बल्यर्थं धूपदीपादिकन्तथा ।
तिलाः कुशाः सर्षपाश्च स्थापनीयाः प्रयत्नतः ।।

साधक माषभक्त (उर्द भात) बलिके निमित्त तिल कुश सरसों और धूप दीपादि पूजा की उपकरण सामग्री संग्रह कर स्थापन करे ।।

ततः पूर्व्वोक्तान्यतमस्थानं गत्वा समान्यार्घ्यं विधाय पूर्व्वमुखो मूलान्ते फट्कारं दत्वा यागभूमिं संप्रोक्ष्य, गुरुं गणेशं बटुकं योगिनीञ्च चतुर्द्दिक्षु पूर्व्वादितः संपूज्य पूर्व्वोक्तवीरार्द्दनमंत्रं भूमौ विलिख्य ये चात्रेत्यादि पूर्व्वोक्तक्रमेण पुष्पाञ्चलित्रयं दत्वा लित्रयं दत्त्वा अघोरमंत्रेण शिखाबन्धनं विधायसुदर्शनमंत्रान्ते आत्मानं रक्ष रक्षेति हृदि हस्तं दत्त्वा आत्मरक्षां कुर्य्यात् ।।
अघोरसुदर्शनमंत्रो तु–ओं ह्रीं स्फुर स्फुर प्रस्फुर प्रस्फुर घोराघोरतरतनुरूप चट चट प्रचट प्रचट कह कह वम वम बंध बंध घातय घातय हुँ फट्सहस्रारे हुँ फट् ।।

फिर पूर्व्वोक्त कोई स्थान मनोनीत कर उस स्थानमें जाय सामान्य अर्घ्य स्थापनके अनन्तर साधक पूर्व्वाभिमुख हो मूल मंत्रके पश्चात् "फट्" इस मंत्रसे याग स्थान प्रोक्षण करे । अनंतर पूर्व्वकी ओर गुरु, दक्षिणमें गणेश, पश्चिममें वटुक और उत्तरमें योगिनीकी पूजा कर भूमिमें पूर्वोक्त वीरार्दन मंत्र लिख पूर्व्वकथित "ये चात्र" इत्यादि मंत्रसे पहिलेके समान पुष्पांजलि प्रदान पूर्व्वक प्रणाम कर पूर्व्व कथित नियमसे श्मशानाधिपति देवताओंको बलि प्रदान करे और अघोर

मंत्रसे शिखा बन्धन कर अपने हृदयपर हस्त स्थापन पूर्व्वक सुदर्शन मंत्रके अनन्तर "आत्मानं रक्ष रक्ष" यह मंत्र पढ़कर आत्म रक्षा करै, घोर सुदर्शन मंत्र मूलमें लिखे हैं ।।

ततः पूर्वोक्तक्रमेण भूतशुद्धि न्यासजालञ्च विधाय जयदुर्गामंत्रेण दिक्षु सर्षपान् विकीर्य्य तिलोऽसीति मंत्रेण तिलांश्च विकीर्य्य विहितशवसमीपं गच्छेत् ।।

अनन्तर पूर्व्वोक्त प्रकारसे भूतशुद्धि और विविध न्यास करके जय दुर्गा मंत्रसे चारों ओर सरसों डाल "तिलोऽसि" इत्यादि मंत्रसे तिल बखेर कर विहित शवके निकट उपस्थित हो ।।

विहित शव

यष्टिविद्धं शूलविद्धं खङ्गविद्धं जले मृतम् ।
वज्रविद्धं सर्पदष्टं चाण्डालञ्चाभिभूतकम् ।।
तरुणं सुंदरं शूरं रणे नष्टं समुज्ज्वलम् ।
पलायनविशून्यन्तु सम्मुखे रणवर्तिनाम् ।।

इस समय शव साधन कार्य्यमें कौन जातीय और किस प्रकार का शव श्रेष्ठ है वही कहते हैं। तन्त्रान्तरमें लिखा है, कि जिस पुरुषने लाठी, शूल अथवा खङ्गाघातसे प्राण त्याग किया हो, जलमें गिरकर मर गया है, वज्रपात अथवा सर्पके काटनेसे किसीकी मृत्यु हुई हो, इस प्रकार चाण्डाल जातीय पुरुषके मृतक देहको इस कार्य्यमें शवकर इस शवकी तरुण अवस्था और सुंदर अंग होना आवश्यक है, और जिस व्यक्तिने सम्मुख युद्धमें न भागकर प्राण त्याग किया हो उसका देह भी शवसाधन कार्य्यमें श्रेष्ठ है ।।

तथा—यष्टिप्रभृतिविद्धं वा चाभिभूतं जले मृतम् ।
शवमानीय कर्त्तव्यं नाहरेत्स्वेच्छया मृतम् ।।
स्त्रीवश्यं पतितास्पृश्यं नयवर्ज हि तूवरम् ।
अव्यक्तलिंगं कुष्ठं वा वृद्धभिन्नं शवं हरेत् ।।

न दुर्भिक्षमृतञ्चापि न पर्य्युषिकृतमेव वा ।
स्त्रीजनञ्चेदृशं रूपं सर्व्वथा परिवर्जयेत् ।।

और भी लिखा है कि, लाठी इत्यादिके आघातसे जिसकी मृत्यु हुई हो, अथवा जलमें गिरकर जो व्यक्ति मर गया है उसका देह ग्रहण करै, स्वेच्छामृत व्यक्तिका देह शवसाधनमें स्वीकार न करै. जो व्यक्ति स्त्रीके वशीभूत पतित छूनेके अयोग्य दुर्नीति युक्त, डाढ़ी हीन, क्लीब, कुष्ठरोगी, अथवा वृद्ध हो उन संपूर्ण शवोंको त्याग करै । दुर्भिक्षमें मरे हुए मनुष्यका देह शवद्वारा साधन करने पर उससे कार्य्यमें ग्रहण करने योग्य नहीं है, तत्काल मृत शव विहित है पर्युषित (वासी) शव द्वारा साधन करने पर उससे कार्य्य सिद्धि नहीं होती, अत एव उक्त प्रकार शव और स्त्रीका मृतक देह इस कार्य्यमें ग्रहण न करै ।।

तथा–ब्राह्मणं गोमयं त्यक्त्वा साधयेद्वीरसाधनम् ।
महा (सद्य) शवाः प्रशस्ताः स्युः प्रधाने वीरसाधने ।।
क्षुद्रप्रयोगकर्त्तॄणां प्रशस्ताः सर्व्वसिद्धये ।।

तंत्रान्तरमें लिखा है कि, ब्राह्मण और गोमय (गोवर) त्यागकर शवसाधन कार्य करै, इस शव साधन कार्य्यमें सद्योमृत पुरुषका देह श्रेष्ठ है, जो ऐहिक कार्य्यके उद्देश्यसे यह साधन करै उसको सर्वकार्य्य साधनार्थ शवासन श्रेष्ठ है ।।

एवमुक्तं शवं गृहीत्वा मूलमंत्रेण पूजास्थानमानयेत् ।
तत्समीपंगत्वा 'ओं फट्' इति शवमभ्युक्ष्य "ओं हूं मृतकाय नमः फट्" इति पुष्पाञ्जलित्रयं दत्वा स्पृष्ट्वा प्रणमेत् ।।

तथा–प्रणवाद्यस्त्रमंत्रेण शवस्य प्रोक्षणञ्चरेत् ।।
प्रणवं कुर्च्चंबीजञ्च मृतकाय नमश्च फट् ।।

पुष्पाञ्चलित्रयं दत्त्वा प्रणमेत्स्पर्शपूर्व्वकम् ।

इस प्रकार सुलक्षण संपन्न शव ले मूलमंत्रसे पूजास्थानमें गमन करै, फिर शवके समीपमें बैठकर "ओं फट्" इस मंत्रसे शवके ऊपर प्रोक्षण करै, अनन्तर "ओं हूं मृतकाय नमः फट्" इस मंत्रसे तीन पुष्पांजलि प्रदान पूर्व्वक शव स्पर्श कर प्रणाम करै, इस विषयके ग्रन्थान्तरमें जो समस्त वचन लिखे हैं वह सम्पूर्ण प्रमाण इस स्थलमे ग्रन्थकारने उद्धृत किये हैं ।।

प्रमाण मंत्र

वीरेश परमानन्द शिवानन्द कुलेश्वर ।
आनन्दभैरवाकार देवीपर्य्यंक शंकर ।।
वीरो (शिवोऽहं) त्वां प्रपद्यामि उत्तिष्ठ चण्डिकार्चने ।
अनेन शवमंत्रेण प्रणम्य क्षालयेत् शवम् ।।
"ॐ हूं मृतकाय नमः" अनेन क्षालयित्वा सुगन्धिज-
लेन स्नापयित्वा वाससा जलमुत्तोल्य, धूपैर्धूपयित्वा चन्दनादिना।
शवं प्रलिप्य शवस्य कटिदेशं धृत्वा पूजास्थानं समानयेत् ।।

तथा–तारशब्दं मृतकाय नमोऽन्तं मंत्रमुच्चरेत् ।
शवस्य स्नानमंत्रोऽयमित्यादि ।।
अपिच–धूपेन धूपितं कृत्वा गन्धादिना विलिप्य च ।
रक्ताङ्गो (मुक्तो) यदि देवेशि भक्षयेत्कुलसाधकम् ।।

हे वीरेश, हे परमानन्द, हे शिवानन्द, हे कुलेश्वर ! तुम आनन्दभैरव स्वरूप और देवीके पर्य्यङ्क शंकररूपसे विद्यमान हो मैं वीर भावसे देवीकी अर्च्चनामें तुमको नमस्कार करता हूं, तुम उठो, इस शवप्रणाम मंत्रसे प्रणाम करके शवका प्रोक्षण करै । "ॐ हूं मृतकाय नमः" इस मंत्रसे प्रक्षालन और सुगन्धित जलद्वारा शवको स्नान कराय वस्त्रसे शवशरीर मार्ज्जन धूपद्वारा पोषण और शवका

शरीर चन्दनादिद्वारा अनुलिप्त करै और शवकी कमर पकड़कर पूजास्थानमें लाना चाहिये। इस विषयके प्रमाण स्वरूप कालीतंत्रके लिखित वचन मूलमें उद्धृत हुए हैं। तंत्रान्तरमें लिखा है कि, शवको धूपद्वारा धूपित कर गन्धादिसे अनुलेपन पूर्व्वक शवसाधन कार्य्य आरंभ करै, यदि शव रक्त वर्ण हो तो साधकको भक्षण करता है॥

ततः कुशशय्यां कृत्वा पूर्व्वशिरसं कृत्वा शवं स्थापयेत्।
तथा–कुशशय्यां परिष्कृत्य तत्र संस्थापयेच्छवम्॥

तत एलालवंग कर्पूरखदिराद्यार्द्रकं ताम्बूलं तन्मुखे दत्त्वा शवं अधोमुखं कुर्य्यात्॥

तथा च–एलालवंगकर्पूरजातीखादिरमार्द्रकम्।
ताम्बूलं तन्मुखे दत्त्वा शवं कुर्य्यादधोमुखम्॥

तत्पृष्ठं चन्दनेनापि विलिप्य प्रयतः सुधीः।
बाहुमूलादिकट्यन्तं चतुरस्रं विधाय च॥
मध्ये पद्मं चतुर्द्वारं दलाष्टकसमन्वितम्।
पीठमंत्रं लिखेन्मध्ये तत्तत्कल्पविधानतः॥

ॐ ह्रीं फडितिमंत्रेण तत्कल्पोक्तपीठमंत्रं लिखेत्।
तदुपरि कम्बलाद्यासनं न्यसेत्॥
गत्वा शवस्य सान्निध्यं धारयेत्कटिदेशतः।
यद्युपद्रावयेत्तस्य दद्यान्निष्ठीवनं शवे॥
पुनः प्रक्षालनं कृत्वा जपस्थाने समानयेत्॥
ततो द्वादशांगुलयज्ञकाष्ठानि दशदिक्षु पूर्व्ववत् संस्थाप्य इन्द्रादिदश देवताः संपूज्य पूसामिषान्ने न बलिं दद्यात्॥

तथा–द्वादशांगुलमानानि यज्ञकाष्ठानि दिक्षु च।
संस्थाप्य पूजयेत्तत्र क्रमादिन्द्रादिदेवताः॥

फिर कुशद्वारा शय्या बनाय उसके ऊपर पूर्व्वको शिर करके शव स्थापन करना चाहिये, अनन्तर शवके मुखमें इलायची, लौंग, कपूर, खैर, अदरक, ताम्बूल और जायफल प्रदान कर शवको अधोमुख रक्खे. शवकी पीठपर चन्दनादि से अनुलेपन कर बाहुमूलसे कटि पर्य्यन्त चारों ओर मंडल लिखे, चारों ओरमें अष्टदल पद्म और चतुर्द्वार अंकित कर पद्ममें "ओं ह्रीं फट्" इस मंत्रके सहित पूर्वोक्त पीठमंत्र लिखना चाहिये, इसके ऊपर कम्बलादि आसन बिछावे, फिर शवके समीपमें जाकर शवकी कमर पकड़े, इससे शव यदि किसी प्रकार उपद्रव करै तो शवके शरीरमें निष्ठीवन (थूथू) निक्षेप, करे, फिर प्रक्षालनपूर्व्वक जप स्थानमें लाना चाहिये, फिर जपस्थानके दशों ओर द्वादशांगुल परिमित अश्वत्थादि यज्ञीयकाष्ठ गाड़ कर पूर्वादि क्रमसे इन सम्पूर्ण काष्ठोंमें इन्द्रादि दशदिक्पालोंकी पूजा करै ।।

तत्रायं क्रमः–ॐ लां इन्द्राय सुराधिपतये ऐरावतवाहनाय वज्रहस्ताय सशक्तिपारिषदाय सपरिवाराय नमः । इति पाद्यादिभिः संपूज्य बलिं दद्यात् ।।

बीजमिन्द्राय सलिख्य सुराधिपतये ततः ।।
इमं बलिं गृह्णयुग्मं गृह्णापय युगं ततः ।।
विघ्ननिवारणं कृत्वा सिद्धिं प्रयच्छ ठद्वयम् ।
अनेन मनुना पूर्व्वं बलिं दद्याच्च सामिषम् ।।
स्वस्वनामादिकं कृत्वा पूर्व्वंद्बलिमाहरेत् ।
सर्व्वेषां लोकपालानां ततः साधकसत्तमः ।।
ओं लां इन्द्राय सुराधिपतये इमं बलिं गृह्ण गृह्ण गृह्णापय गृह्णापय विघ्ननिवारणं कृत्वा मम सिद्धिं प्रयच्छ स्वाहा ।
एष माषभक्तबलिः ओं लां इन्द्राय स्वाहा ।
ॐ वां अग्नये तेजोऽधिपतये मेषवाहनाय सपरिवाराय शक्तिहस्ताय सायुधाय नमः ।।

इति संपूज्य ओंवां अग्नये तेजोऽधिपतये इत्यादिना बलिंदद्यात्। ओंमां सामाय प्रेताधिपतये दण्डहस्ताय महिषवाहनाय सायुधायेत्यादिना संपूज्य ओं मां यमाय प्रेताधिपतये इत्यादिना-बलिं दद्यात्। ओं क्षां निर्ऋतये रक्षोऽधिपतये असिहस्ताया श्ववाहनाय सपरिवाराय इत्यादिना संपूज्य, ओं क्षां निर्ऋतये रक्षोऽधिपतये इत्यादिना बलिंदद्यात्॥ ओं वां वरुणाय जलाधिपतये पाशहस्ताय मकरवाहनाय सायुधाय इत्यादिना संपूज्य ओं वां वरुणाय जलाधिपतये इत्यादिना बलिं दद्यात्॥

ओं यां वायवे प्राणाधिपतये हरिणवाहनायांकुश हस्ताय इत्यादिना संपूज्य, ओं यां वायवे प्राणाधिपतये इत्यादिना बलिं दद्यात्॥ ओं सां सोमाय यक्षाधिपतये गदाहस्ताय नरवाहनाय सपरिवाराय इत्यादिना संपूज्य ओं सां सोमाय यक्षाधिपतये इत्यादिना बलिं दद्यात्॥ ओं हां ईशानाय भूताधिपतये शूल-हस्ताय वृषवाहनाय सपरिवाराय इत्यादिना पूर्व्ववत् संपूज्य ओं हां ईशानाय भूताधिपतये इत्यादिना बलिं दद्यात्॥ इन्द्रेशान्यो-र्मध्ये ओं ब्रह्मणे प्रजाधिपतये हंसवाहनाय पद्महस्ताय सपरिवा-राय इत्यादिन संपूज्य बलिं दद्यात्॥ नैर्ऋत वरुणयोर्म्मध्ये ओं ह्लीं अनन्ताय नागाधिपतये चक्रहस्ताय रथवाहनाय सपरिवाराय इत्यादिना संपूज्य ओं ह्लीं अनन्ताय नागाधिपतये सायुधाय इत्या-दिना बलिं दद्यात्॥

ततः–सर्वत्र सामिषान्नेन सर्वभूतबलिं दद्यात्।

ततः–अधिष्टातृदेवताभ्यो बलिञ्च स्मारयेत्ततः।
चतुःषष्टियोगिनीभ्यो डाकिनीभ्योऽपि सदिशेत्॥

उक्त इन्द्रादि दश दिक्पालोंकी पूजाका क्रम, यथा–पूर्वकी ओर "ॐलां इन्द्राय सुराधिपतये" इत्यादि मंत्रसे पाद्यादि उपचार द्वारा अर्च्चना करके "ओंलां इन्द्राय सुराधिपतये" इत्यादि मंत्रसे सामिषान्न-

द्वारा बलिप्रदान करै। इस प्रकार इन्द्र, अग्नि, यम, निर्ऋति, वरुण वायु, कुबेर, ईशान, ब्रह्मा और अनन्त इन दश दिक्पालोंकी पूजा करै। इन सम्पूर्ण देवताओंकी पूजाका मंत्र और बलि मंत्र मूलमें स्पष्ट रूप से लिखा है उसको देखकर समझ लेना। इस प्रकार दिक्पालोंकी पूजा और बलि प्रदान कर सर्वभूत बलि प्रदान करै, सामिष अन्न द्वारा संपूर्ण देवताओंको बलिप्रदान करै। इसके उपरान्त अधिष्ठातृ देवता, चौंसठ योगिनी और डाकिनियोंको बलिप्रदान करै॥

अथ पूजासामग्रीं समीपे दूरे चोत्तरसाधकं संस्थाप्य मूलन्त्रे ह्लीं फट् शवासनाय नमः। इति शवं संपूज्य ह्लींफडन्तमूलमुच्चार्य्य अश्वारोहणक्रमेण शवोपर्य्युपविश्य स्वपदतले कुशान् दत्त्वा शवकेशान् प्रसार्य्य झुटिकां बद्ध्वा गुरुं गणपतिं देवीञ्च नमस्कृत्य प्राणायामषडंगन्यासौ कृत्वा पूर्व्ववत् वीरार्द्दनमंत्रेण दशदिक्षु लोष्ठान् निक्षिप्य संकल्पं कुर्य्यात्। अद्येत्यादि अमुकदेवतायाः सन्दर्शनकामः अमुकमंत्रस्यामुकसंख्यजपमहं करिष्ये इतिसंकल्प्य ॐ ह्लीं आधारशक्तिकमलासनाय नमः इत्यासनं संपूज्य स्ववामतः शवसमीपे अर्घ्यपात्रादिकं संस्थाप्य शवझुटिकायां पीठपूजां कृत्वा षोडशोपचारैर्दशोपचारैः पञ्चोपचारैर्वा देवीं संपूज्य शवमुखे देवीं गन्धादिना सन्तर्पयेत्। ततः शवादुदुत्थाय सम्मुखे गत्वा मंत्र पठेत्॥

ॐ वशो मे भव देवेश मम वीरसिद्धि देहि देहि महाभाग कृताश्रयपरायण। ततः शवचरणौ पट्टसूत्रेण बद्ध्वा मूलेन दृढं बंधयेत्॥

ओं मद्वशो भव देवेश वीरसिद्धिकृतास्पद।
भीमभीरुभयाभाव भवमोचन भावुक॥
त्राहि मां देवदेवेश शूराणामधिपाधिप॥
इत्यनेन शवस्य पादमूले त्रिकोणं लिखेत्॥

ततः शवोपर्य्युपविश्य हस्तद्वयं पार्श्वयोः प्रसार्य्य तदुपरि कुशान्दत्वा तत्र स्वपादौ निधाय पुनः प्राणायामत्रयं कृत्वाशिरसिगुरुं विभाव्य हृदये देवीं ध्यात्वा ओष्ठौ संपुटौ कृत्वा विहितमालया मौनीभूत्वा विगतभीर्जपेत् । अत्र श्मशानसाधनक्रमेण जपः कार्य्यः ।।

अनन्तर साधक अपने समीपमें पूजाकी सामग्री और कुछ दूर उत्तर साधकको स्थापनकर आदिमें मूल मंत्र और फिर "ह्रीं फट् श्मशानाय नमः" इस मंत्रसे शवकी अर्चना करै । फिर पहले मूलमंत्र पश्चात् "ह्रीं फट्" यह मंत्र उच्चारणपूर्वक घोड़ेपर चढ़नेके समान शवकी पीठपर बैठकर अपने पादतलमें कुछेक कुश निक्षेप करै और शवके केश फैलाकर चोटीबंधनपूर्वक गुरु,गणपति और देवीको नमस्कार करै, फिर प्राणायाम और षडंगन्यास करके पूर्वोक्त वीरार्दन मंत्रसे दशों ओर लोहा निक्षेप करै, इसके उपरांत मूलमें लिखित वाक्यानुसार संकल्प करके "ह्रीं आधारशक्तिकमलासनाय नमः" इस मन्त्रसे आसनकी पूजा करै, फिर अपने वाम भागमें शवके समीप अर्घ्य स्थापन करै, शवकी चोटीमें पूजा पद्धतिकी लिखित प्रणाली द्वारा पीठपूजा करै, अनन्तर साधक अपने विभवके अनुसार षोडशोपचार, दशोपचार अथवा पञ्चोपचारसे इष्ट देवताकी पूजा करके शवके मुखमें सुगंधित जलद्वारा देवीका तर्पण करै, अनन्तर शवसे उठ शवके सन्मुख खड़ा हो मंत्रपाठ करे, हे देवेश ! तुम मेरे वशीभूत होकर सिद्धि प्रदान करो । हे महाभाग ! जो तुम्हारा आश्रय ग्रहण करे तुम उसके प्रति अनुरक्त रहो. इसके पश्चात् पट्टसूत्रद्वारा शवके दोनों चरणबांध कर मूलमंत्रसे शवका शरीर दृढ़ रीतिसे बांधे । हे देवेश ! तुम मेरे वशीभूत होओ, तुम्हीं वीरसाधन कार्य्यके प्रधान आश्रय हो, भयंकराकृति डरे हुएको भय दूर करनेवाले और मंगलप्रद हो, तुम्हीं साधकोंकी संहार वृत्ति निवारण करते हो, हे देवदेवेश ! तुम्हीं शूरगणोंके अद्वितीय अधीश्वर हो, हमारी रक्षा करो, इन सब वाक्योंसे शवके पादमूलमें त्रिकोण

यन्त्र लिखे, फिर शवके ऊपर बैठकर शवके दोनों हाथ दोनों पार्श्वमें फैलाकर उसके ऊपर कुश बिछाकर साधक उन बिछे हुए कुशोंके ऊपर अपने दोनों पैर रखकर फिर तीन प्राणायाम कर शिरःस्थित पद्ममें गुरुदेवकी और अपने हृदयमें देवीकी चिंता करते करते दोनों ओठ संपुटवत् विहितमाला द्वारा निर्भय चित्तसे मौन होकर श्मशानसाधनके क्रमसे जप करै ।।

यद्यर्द्धरात्रपर्य्यन्तं किञ्चिन्न लक्ष्यते तदा पूर्व्ववत् सर्षपतिल-विकिरणं सप्तपदगमनञ्च कृत्वा जपं कुर्य्यात् । भये जाते सति

एवं पठेत् चलच्छवाद्भूयं नास्ति भये जाते वदेत्ततः ।
यत् प्रार्थय बलित्वेन दातव्यं कुञ्जरादिकम् ।।
दिनान्तरे च दास्यामि स्वनाम कथयस्व मे ।
इत्युक्त्वा संस्कृतेनैव निर्भयश्च पुनर्जपेत् ।।
ततश्चेन्मधुरं वक्ति वक्तव्यं मधुरं ततः ।
ततः सत्यं कारयित्वा वरञ्च प्रार्थयेत्ततः ।।
यदि सत्यं न कुरुते वरं वा न प्रयच्छति ।
तदा पुनर्जपेद्धीमानेकाग्रमानसस्तथा ।।

अस्यार्थः—यदि जपकाले आकाशगत्या कुञ्जरादिकं प्रार्थयते तदा दिनान्तरे दास्यामि मम स्थाने स्वनाम मधुरं कथयति तर्हि त्वं अमुक इति सत्यं कुरु । कृते सत्ये वरं प्रार्थयेत् । यदि कदाचिदपि सत्यं न करोति वरं वा न प्रयच्छति तदा पुनर्जपेत् ।।

अथ वीरसाधन

तथा च—सत्यं कुर्य्याद्वरं लब्ध्वा संत्यजेच्च जपादिकम् ।
फलं जातमिति ज्ञात्वा क्षुटिकां मोचयेत्ततः ।।
शवं प्रक्षाल्य संस्थाप्य मोचयेत्पादबन्धनम् ।।
पादचक्रं मोचयित्वा पूजाद्रव्यं जले क्षिपेत् ।।
शवं जले तु गर्त्ते वा निक्षिप्य स्नानमाचरेत् ।।

इस प्रकार जप करनेपर भी यदि अर्द्धरात्रिपर्य्यन्त कुछ न दिखाई दे तो पहलेके समान सरसों और तिल बखेर कर अधिष्ठित स्थानसे सात पैर चलकर फिर जप आरंभ करै। यदि जपके समय किसी प्रकारका भय उपस्थित हो अर्थात् आकाशसे यदि कोई बलिकी प्रार्थना करै तो उससे इस प्रकार कहै कि "दिनान्तरमें तुमको कुञ्जरादि बलिप्रदान करूंगा, तुम कौन हो और तुम्हारा क्या नाम है? यह मुझसे कहो" इस प्रकार उत्तर देकर फिर जप आरम्भ करै। फिर यदि मधुर वाक्यसे अपना नाम बतावे तो पुनर्वार साधक कहै कि 'तुम मुझको वर प्रदान करोगे इस प्रकार प्रतिज्ञा करो" इस प्रकार प्रतिज्ञाबद्ध कर साधक वरकी प्रार्थना करै, यदि वह प्रतिज्ञा पाशमें न बँधे और वरप्रदान न करै तो पुनर्वार स्थिरचित्तसे जप करै; किन्तु यदि प्रतिज्ञा करके वर देनेमें सम्मत हो तो फिर जप न करै। अभिलषित वर ग्रहण कर "मेरी कार्य्यसिद्धि हुई" इस प्रकार जान शवकी चुटिया छोड़कर शव प्रक्षालन और शवको स्थानान्तरमें स्थापन कर शवके पैर खोल दे और पूजाद्रव्य जलमें डाल शवको जलमें अथवा भूमिके गढेमें डालकर स्नान करै॥

ततस्तु स्वगृहं गत्वा बलिं दद्याद्दिनान्तरे॥
बलिमंत्रस्तु—अग्रिमरात्रौ येषां यजमानोऽहं ते गृह्णन्त्विवमम्॥

अथ यैर्याचितानश्वान् नरकुञ्चरशूकरान्।
दत्वा पिष्टमयानन्ते कर्त्तव्यं समुपोषणम्॥
ततः परेऽह्नि नित्यक्रियां कृत्वा पञ्चगव्यं पिबेत्।
पंचविंशतिसंख्याकान् ब्राह्मणानपि भोजयेत्॥
सप्तपंचविहीनान्वा क्रमेणैव दशावधि।
ततःस्नात्वा च भुक्त्वा च निवसेदुत्तमं स्थलम्॥

फिर साधक अपने घर जाकर दिनान्तरमें पूर्व प्रतिज्ञा की हुई कुञ्जरादि बलि प्रदान करै; बलिका मंत्र मूलमें लिखा है। यदि कोई देवता, कुञ्जर, अश्व, नर अथवा शूकरके बलिकी प्रार्थना करै तो

देवताकी प्रार्थनानुसार पिट्ठीसे निर्म्मित स्वस्वअभिलषित बलि प्रदान कर साधक उपवासी रहै; दूसरे दिन साधक प्रातः कृत्यादि नित्य कर्त्तव्य कार्य्य समाप्त कर पञ्चगव्य पान करै और पच्चीस ब्राह्मणोंको भोजन करावे, असमर्थ होने पर इन पञ्चविंशतिमेंसे सात अथवा पांच छोडकर अपनी शक्तिके अनुसार ब्राह्मणोंको भोजन करावै; दश पर्य्यन्त ब्राह्मण संख्या होनेपर भी कोई दोष नहीं होता, इसके उपरान्त स्नान और भोजन कर उत्तम स्थानमें वास करै।

यदि न स्याद्विप्रभोज्यं तदा निर्धनतां व्रजेत्।
तेन चेन्निर्धनत्वं स्यात्तदा देवी प्रकुप्यति ॥
त्रिरात्रं वाथ षड्रात्रं नवरात्रन्तु गोपयेत्।
स्त्रीशय्यां यदि गच्छेत्तु तथा व्याधिं विनिर्दिशेत् ॥
गीतं श्रुत्वा च बधिरो निश्चक्षुर्नृत्यदर्शनात्।
यदि वक्ति दिने वाक्यं तदास्य मूकता भवेत् ॥
पञ्चदशदिनं यावद्देहे देवस्य संस्थितिः।
न स्वीकार्य्ये गंधपुष्पे बहिर्याति यदा कदा ॥
तदा वस्त्रं परित्यज्य गृह्णीयाद्वसनान्तरम्।
गोब्राह्मणविनिन्दाञ्च न कुर्याच्च कदाचन ॥
दुर्ज्जनं पतितं क्लीबं न स्पृशेच्च कदाचन।
देवगोब्राह्मणादींश्च प्रत्यहं संस्पृशेच्छुचिः ॥
प्रातर्नित्यक्रियान्ते च बिल्वपत्रोदकं पिबेत्।
ततः स्नात्वा तु गंगायां प्राप्ते षोडशवासरे ॥
स्वाहान्तं मंत्रमुच्चार्य्य तर्पणान्ते नमः पदम्।
एवं शतत्रयादूर्ध्वं देवान् सन्तर्पयेज्जलैः ॥
स्नानतर्पणशून्यस्य न स्याद्देवस्य तर्पणम्।
इत्यनेन विधानेन सिद्धिं प्राप्नोति साधकः ॥
इह भुक्त्वा वरान् भोगानन्ते याति हरेः पदम् ॥

यदि ब्राह्मणका भोजन न हो तो साधक निर्धन होता है। विशेष-

कर देवी भी कुपित होती है। इस प्रकार मंत्रसिद्धि होनेपर तीन रात्रि छः रात्रि अथवा नौ रात्रिपर्य्यन्त गुप्त रक्खे किसी प्रकार भी मंत्रसिद्धिका विषय प्रकाश न करै। मंत्रसिद्धि होनेपर यदि साधक स्त्रीशय्यामें गमन करै तो साधकको व्याधि होती है। यदि गीत श्रवण करै तो बहरा होता है और नृत्य देखनेसे अन्धा होता है और दिनमें किसीके साथ बात करै तो साधक मूक होता है। पन्द्रह दिन इस प्रकार सर्वकर्म्म परित्याग करके रहे, कारण कि साधकके शरीरमें पंद्रह दिन तक देवीका वास रहता है। उक्त कितने ही दिन तक साधक गन्ध अथवा पुष्प ग्रहण न करै और जिस समय बाहरको जाय तब अपने पहरनेके वस्त्र त्यागकर दूसरे वस्त्र पहरे। गो और ब्राह्मणकी निन्दा न करै दुर्ज्जन, पतित और क्लीबका स्पर्श न करै; नित्य शुद्ध कलेवरसे देवता गो और ब्राह्मणका स्पर्श करै। मंत्र सिद्धिके सोलहवें दिन गंगामें; स्नान करने के अनन्तर मूलके लिखित मंत्रसे तर्पण करै; तीनसौसे अधिक देवी तर्पणके उपरान्त देव तर्पण करै, स्नान और देवी तर्पणके न होनेसे देव तर्पण नहीं होता. इस प्रकार करनेसे सिद्धि लाभके अनन्तर इस लोकमे सुखभोग कर अन्तमें हरिपद प्राप्त कर सकता है॥

अथ द्वतीयोग:

तत्रादौ विजया स्वीकार:

तथा च–सम्विदासवयोर्मध्ये सम्विदेव गरीयसी।
सम्वित्प्रयोगस्तेनेह पूजादौ साधकोत्तमैः॥
कर्त्तव्यश्च महापूजा करणीया सुनिश्चितैः।
अयं प्रयोगः पूजादौ कुलीनैः कर्त्तव्यः॥

प्रथम विजया स्वीकार करनी चाहिये, सम्विदा और आसव इन दोनोंमें सम्विदा ही श्रेष्ठ है अतएव पूजाके पहले सम्विदाका प्रयोग साधकको अवश्य कर्त्तव्य है। सम्विदाग्रहणपूर्वक स्वस्थचित्त हो महा पूजा करै। कौल पुरुषको पूजाके पहले ही यह सम्विदा प्रयोग करना चाहिये॥

अन्यत्रापि आनन्देन विना भ्रंशो न च तृप्यन्ति देवताः।

अन्यत्र लिखा है कि आनन्दके विना भ्रष्ट होता है, आनन्दके विना देवता प्रसन्न नहीं होते अतएव सम्विदापानसे आनन्दित होकर पूजा करनी चाहिये ।।

सा च चतुर्विधा—ब्राह्मणीक्षत्रियावैश्याशूद्रेति
शुक्लरक्तपीतकृष्णपुष्पभेदैः ।
तासां शुद्धिस्तु विजयाकल्पे—
सम्विदे ब्रह्मसम्भूते ब्रह्मपुत्रि सदानघे ।
भैरवाणाञ्च तृप्त्यर्थं पवित्रा भव सर्व्वदा ।।
ॐ ब्राह्मण्यै नमः स्वाहेति शोधयेत् ।
सिद्ध मूलकरे देवि हीनबोधप्रबोधिनि ।
राजपुत्रीवशंकरि शक्रकण्ठत्रिशूलिनि ।।
ऐं क्षत्रियायै नमः स्वाहा शोधयेदपरां ततः ।
अज्ञानेन्धनदीप्ताग्निज्ञानाग्निज्वलरूपिणी ।।
आनन्दस्याहुतिं मत्वा सम्यग्ज्ञानं प्रयच्छ मे ।
ह्रीं वैश्यायै नमःस्वाहा वैश्याञ्च शोधयेत् पराम् ।।
नमस्यामि नमस्यामि योगमार्गप्रदर्शिनि ।
त्रैलोक्यविजये मातः समाधिफलदा भव ।।
श्रीं शूद्रायै नमः स्वाहेति शूद्राञ्च परिशोधयेत् ।।
ततः सर्वासां शोधनम् ।।
अमृते अमृतोद्भवे अमृतवर्षिणी पदं ततः ।
अमृतमाकर्षय द्वन्द्वं सिद्धिं देहि ततः परम् ।।
अमुकं मे ततो ब्रूयाद्वशमानय ततः परम् ।
द्विठान्तोऽयं मनुः प्रोक्तः सर्वासामिह शोधने ।।
ज्ञाने प्रत्येकेन तत्तन्मंत्रेण प्रत्येकं शोधयेत् ।।
अज्ञाने तु त्वनेन शोधयेत् ।।

यह सम्विदा चार प्रकारकी है—शुक्लपुष्पा सम्विदा ब्राह्मणी, रक्तपुष्पा क्षत्रिया, पीतपुष्पा वैश्या और कृष्णपुष्पा संविदा शूद्रा है ।

इन चारों प्रकारकी सम्विदाओंका शोधन मंत्र विजयाकल्पमे यथाक्रमसे लिखा है, यथा–"सम्विदे ब्रह्मसम्भूते" इत्यादि ऊपर लिखित मंत्रसे ब्राह्मणी सम्विदाका शोधन करै। "सिद्धमूलकरे देवि" इत्यादि मंत्रसे क्षत्रिय सम्विदाका शोधन करै। "अज्ञानेंधनदीप्ताग्नि" इत्यादि मंत्रसे वैश्या सम्विदाका शोधन करै और "नमस्यामि नमस्यामि" इत्यादि मूल लिखित मंत्रसे शूद्रा सम्विदाका शोधन करै। सम्विदा कौन जाति है यदि यह न जान सके तो "अमृते अमृतोद्भवे अमृतवर्षिणी अमृतमाकर्षयाकर्षय सिद्धि देहि अमुकं मे वशमानय स्वाहा" इस मंत्रसे शोधन करै। यह सर्व्वजातीय सम्विदाओंके शोधनका मंत्र है।

उत्तरतंत्रे–मूलमंत्रं सप्तवारं तस्योपरि नियोजयेत्।

आवाहनादि मुद्राञ्च धेनुं योनिं ततः परम्॥
दिग्बन्धनं छोटिकाभिस्तालत्रयपुरस्सरम्।
दिव्यदृष्टचा पार्ष्णिघातैः सर्वान्विघ्नान्निरस्य च॥
सप्तधा तर्पयेद्ब्रह्मरन्ध्रे मूलं जपेन्मनुम्।
गुरुपद्मे सहस्रारे तथा संकेतमुद्रया॥
त्रिवारं तर्पयेद्भक्त्या साधकः सिद्धिमानसः॥
मूलमिष्टदेवतामंत्रमुच्चार्य अमुकदेवतां
तर्पयेत्। एवं गुरुञ्च तर्पयेत्। ततः संकेतमुद्रया स्वीकुर्य्यात्।
यथा–ऐं वद वद पदं ब्रूयाद्वाग्वादिनि पद ततः।
मम जिह्वाग्रे स्थिरेति भव सर्वपदं ततः।
सत्त्वं वशङ्करि स्वाहा मंत्रेण जुहुयान्मुखे॥

इस सम्विदाके ऊपर सात बार मूलमंत्रका जप करना चाहिये। फिरआवाहनादिमुद्रा, धेनुमुद्रा, योनिमुद्रा, तीन ताल, दिग्बंधन, चुटकी, पार्ष्णि, आघात और दिव्य दृष्टिसे सब भय दूर करै। इसके उपरान्त सात बार मूल मंत्र जपपूर्वक ब्रह्मरन्ध्रमें मूल देवताका तर्पण कर तत्त्वमुद्रा द्वारा सहस्रार पद्ममें भक्तिपूर्वक तीन बार गुरुतर्पण करै। मूलमंत्रअर्थात् इष्टदेवताका मंत्रोच्चारणपूर्वक 'अमुकदेवतां तर्पयामि'

कहकर तर्पण करना चाहिये। अनन्तर "ऐं वद वद वाग्वादिनि मम जिह्वाग्रे स्थिरा भव सर्वसत्त्ववशंकरि स्वाहा" यह कहकर संकेतमुद्रा और तत्त्वमुद्रामें विजया स्वीकार करै ।।

विना हेतुकमासाद्य क्षोभयुक्तो महेश्वरः ।
न पूजां हवनं कुर्य्यान्न ध्यानं नापि चिन्तनम् ।।
तस्माद्भुक्त्वा च पीत्वा च पूजयेत् परमेश्वरीम् ।।
पीत्वेति विजयामेव प्रकरणात् ।।

सम्बिदाके विना पूजा करनेसे महेश्वर क्षुब्ध होते हैं। अथवा सम्बिदा विना ग्रहण किये पूजा होम ध्यान, चिन्ता अथवा जप न करैं। भोजन और सम्बिदा ग्रहण करके परमेश्वरीकी पूजा करैं पीत्वा प्रकरणसे यहां विजयाका ग्रहण है।

अथ यजनप्रकारः

तत्र रात्रौ प्रहरे गते ताम्बूलपूरितमुखःस कुलनायिकां पूजयेत् ।।
याममात्रगते रात्रौ कुलगेहं ततः पुमान् ।
ताम्बूलपूरितमुखो धूपामोदसुगन्धितः ।।
रक्तचन्दनदिग्धाङ्गो रक्तमाल्यानुसेवितः ।
रक्तवस्त्रपरीधानो लाक्षारसगृहं गतः ।।
रक्तमाल्येन संवीतो रक्तपुष्पविभूषितः ।
पञ्चीकरणसंकेतैः पूजयेत्कुलनायिकाम् ।।

एक प्रहर रात्रि बीतनेपर ताम्बूल मुखमें धारण कर कुलनायिकाकी पूजा करै। तंत्रान्तरमें भी लिखा है कि रात्रि के एक प्रहर बीतनेपर साधक ताम्बूल मुखमें धारणपूर्वक सब गात्र सुगंधित कर, रक्तचंदन चर्चित, रक्तवसनधारी, रक्तमाल्यसे विभूषित और रक्तपुष्पसे अलंकृत हो धूप गंध द्वारा सुगंधित किये हुए लाक्षावर्णके समान रक्तवर्ण कुलगृहमें प्रवेश कर पचीकरण संकेतसे कुलनायिकाकी पूजा करै ।।

अथ कुलनायिका

नटी कपालिका वेश्या पुक्कशी नापिताङ्गना ।
रजकी रञ्जनी चैव सैरिन्ध्री च सुवासिनी ।।
घटिका खटिका चैव तथा गोपालकन्यका ।
विशेषवैदग्ध्ययुताः सर्वा एव कुलाङ्गनाः ।।
गुरुभक्ता देवभक्ता घृणालज्जाविवर्जिताः ।
संगोपनरताः प्रायस्तरुण्यः सर्वसिद्धिदाः ।।
अक्षताचारसम्पन्नां शीलसौभाग्यशालिनीम् ।
सदनुष्ठाननिरतां सात्त्विकीं भक्तिसंयुताम् ।।
कालुष्यरहितां कुर्य्यात्सिमयां भक्तवत्सलाम् ।
चतुर्य्यौदार्य्यदाक्षिण्यकरुणादिगुणान्विताम् ।।
रूपयौवनसम्पन्नां शीलसौभाग्यशालिनीम् ।
अथवा तत्क्षणायातां मदनानलतापिताम् ।।
विलिप्तां रक्तगन्धेन रक्ताम्बरविभूषिताम् ।
सुगन्धिरक्तकुसुमां सर्वाभरणभूषिताम् ।।
सुधूपधूपितां तन्वीं दूतीकर्म्मसु योजयेत् ।।

कुलनायिका यथा,–नटी, कपालिका, वेश्या, पुक्कशी. नापितांगना, (नाउनि), धोबन, रंजनी, सैरिन्ध्री, सुवासिनी घटिका खटिका और गोपालकन्या, इनको कुलनायिका कहते हैं। विशेषकर कुलाङ्गना यदि भलीभांति चतुर, गुरुभक्त, देवभक्त, घृणा लज्जा रहित, गोपनरति और युवती हो तो सब सिद्धि हो सकती है। अक्षताचार संपन्न (क्षत रहित आचारवाली) सुशील, सौभाग्यशालिनी, अच्छे अनुष्ठानमें निरत, सत्त्वगुणको अवलम्बन करनेवाली, भक्तिमती पापरहित, भक्त वत्सल, चतुर, औदार्य्य दाक्षिण्यादि गुण युक्त-रूप यौवन शालिनी, ऐसी रमणीको दूती कार्यमें आवाहन किया जाता है। अथवा कामाग्निसे संतप्त, तत्काल आई हुई, रक्ताम्बरसे विभूषित, रक्त गंधसे लिप्त, सुगंधित रक्त फूलोंसे सज्जित, सब गहनोंसे भूषित सुंदरी रमणीको भी दूती कार्यमें नियुक्त किया जाता है ।।

मतान्तरे–नटी कपालिका वेश्या रजकी नापिताङ्गना ।
ब्राह्मणी शूद्रकन्या च तथा गोपालकन्यका ।।
मालाकारस्य कन्या च नव कन्याःप्रकीर्तिताः ।
ब्राह्मणी तु ब्राह्मणविषयम् ।

मतान्तरमें लिखा है कि नटी, कपालिका, वेश्या रजकी, नाईकी कन्या, ब्राह्मणी, शूद्रकन्या, गोपालकन्या, मालीकी कन्या यह नौ प्रकार, की कन्या लता साधनमें श्रेष्ठ हैं । इनमें ब्राह्मणी ब्राह्मणके अतिरिक्त दूसरेकी शक्ति नहीं हो सकती ।।

एवं भूतां यजेत्तान्तु प्रसूनतूलकोपरि ।।
व्यङ्गाङ्गीं विकृतांगीं वा सविकल्पकमानसाम् ।
वर्षीयसीं पापरतां हूंकारीमर्थलोलुपाम् ।
अभक्तमानसां दीनां वर्ज्जयेत्साधकोत्तमः ।।

ऐसी कन्याको पुष्पशय्यापर स्थापनपूर्वक साधक पूजा करै । परंतु विकल अंगवाली, टेढे अंग वाली, संदिग्धचित्ता, वृद्धा, पापमें निरत, बातका उलटकर उत्तर देनेवाली, अर्थ लोलुप अर्थात् लालचन, अभक्तचित्ता और कातर रमणीको इस साधनमें त्याग दे ।।

अर्थाद्वा कामतो वापि सौख्यादपि च यो नरः ।
लिंगयोनिरतो मंत्री रौरवं नरकं व्रजेत् ।।

जो पुरुष किसी प्रयोजन सिद्धिके लिये, सुखके लिये, अथवा कामके वश होकर स्त्रीसंसर्गमें निरत होता है वह रौरव नरकमें जाता है ।।

उपदिष्टा यदा देवि तदा पुत्री तु कन्यका ।
पूजार्हा च यदा देवि तदा माता न संशयः ।।

जब शक्तिको लाकर उपदेश दे तब उसको कन्या स्वरूप जाने । और जब पूजा करे तब माताकी समान जाने ।।

एवंविधां कुलकन्यामानीय उद्वर्त्तनादिकं विधाय तूलकोपरि नियोजयेत् ।

ऐसी कुलकन्याको लाके उसके उबटन आदि लगाय शय्याके ऊपर बैठाले ।

तथा—तमानीय कुलं सम्यगुद्वर्त्तनमनन्तरम् ।
स्नानशुद्धदुकूलाद्यनुलेपेनसुशोभिताम् ।।
अलंकृतां गतश्रान्ति स्वागतं चासनं तथा ।
निवेश्य तूलिकामध्ये नानापुष्पसुगन्धिना ।।
चन्दनागुरुकर्पूरकस्तूरीकुंकुमादिभिः ।
समाकीर्णे निवेश्याथ पूजयेत्कुलनायिकाम् ।।
ततो भूतशुद्ध्यादिकं विधाय तत्तत्कुलांगन्यासंकुर्य्यात्, तद्यथा:-
अंगन्यासकरन्यासौ प्राणायामं ततः परम् ।
विधाय मातृकान्यासं कुलांगेऽपि प्रविन्यसेत् ।।

अथ सुराशोधन

घटं धृत्वेति पठेत् :—
एकमेव परं ब्रह्म स्थूलसूक्ष्ममयं ध्रुवम् ।
कचोद्भवां ब्रह्महत्यां तेन ते नाशयाम्यहम् ।।
सूर्य्यमण्डलसंभूते वरुणालयसंभवे ।
आमबीजमये देविशुक्रशापाद्विमुच्यताम् ।।
वेदानां प्रणवो बीजं ब्रह्मानन्दमयं यदि ।
तेन सत्येन ते देवि ब्रह्महत्यां व्यपोहतु ।।
तत ओं वां वीं वूं वैं वौं वः ब्रह्मशापविमोचितायै
सुधादेव्यै नमः ।। इति तदुपरि दशधा जपेत् ।।
ततः "ओं शां शीं शूं शैं शौं शः शुक्रशाप-
विमोचितायै सुधादेव्यै नमः ।" इति तदुपरि दशधा जपेत् ।
एवं "ह्रीं श्रीं क्रां क्रीं क्रूं क्रैं क्रौं क्रः कृष्णशापं
विमोचयामृतं श्रावय स्वाहा" इति दशधा जपेत् ।
ततो मूलमंत्रं तदुपर्यष्टधा जप्त्वादेवतामयं विभा-
वयेत् । तत्र द्रव्यदानन्तु शूद्रस्यैव । न दद्याद्ब्राह्मणो मद्यं महादेव्यै
कथञ्चन । वामकामो ब्राह्मणो हि मद्यं मांसं न भावयेत् ।।

उबटन कर स्नानके पीछे रक्तवस्त्र पहिराय और गंधादिद्वारा अनुलेपनपूर्वक भूषण पहिराय जब देखे कि श्रम दूर हो गया तब आसन देकर स्वगत प्रश्न पूछे। फिर विविध सुगंधित पुष्पोंसे अलंकृत चन्दन, अगर कर्पूर, कस्तूरी, कुंकुम इत्यादि युक्त शय्याके ऊपर इस कुलकन्याको बैठाकर, भूतशुद्धि इत्यादि समानपूर्वक उसके शरीरमें मातृका न्यास अंगन्यास, करन्यास इत्यादि करै। अंगन्यास, करन्यास प्राणायाम इत्यादि समाप्त कर कुलकामिनीके अंगमें यह सब न्यास करै। अनन्तर पंचप्रकार सुरा लाकर "एकमेव परं ब्रह्म" इत्यादि मंत्रसे सुराशोधन करै। परब्रह्म एक ही है, वही स्थूल सूक्ष्म है, इस सत्यसे कचकी ब्रह्महत्या नाश करता हूं। सूर्यमण्डलसे समुद्भूत होने वाली वरुणके आलयसे प्रगट होनेवाली, अमाबीजमय देवी शुक्रके शापसे मुक्त हो। वेदोंका ओंकारमय बीज यदि ब्रह्मानन्दमय है तो उस सत्यसे ब्रह्महत्या दूर हो जाय। अनन्तर इस द्रव्यके ऊपर आठ वार मूल मंत्र जपकर उसको देवता जाने। यह मद्यपान शूद्रके लिये विहित हुआ है। श्रीक्रममें लिखा है कि, ब्राह्मण कभी महादेवीको मद्य प्रदान न करै। कोई ब्राह्मण वामाचारकी इच्छासे मद्य मांस भक्षण न करै॥

यत्रासवमवश्यन्तु ब्राह्मणस्तु विशेषतः
गुडर्द्रकं तदा दद्यात्ताम्रे वारि सृजेन्मधु॥
देव्यास्तु दक्षिणेभागे चक्रपार्श्वे निवेदयेत्।
एतद्द्रव्यन्तु शूद्रस्य नान्येषान्तु कदाचन॥
वैश्यस्य माक्षिकं शुद्धं क्षत्त्रियस्य तु साज्यकम्।
ब्राह्मणस्य गवां क्षीरं ताम्रे वारि सृजेन्मधु॥
नारिकेलोदकं कांस्ये सर्वेषांद्रव्यशोधनम्।
क्षत्रियवैश्ययोस्तु गौडीमाध्वी च दातव्या, तत्र तयोरधिकारात् तदभावेऽनुकल्पविधानम्।
तथा च–गोक्षीरं ब्राह्मणो दद्याद्द्रव्यमाज्यञ्च बाहुजः।

वैश्यश्च माक्षिकं द्रव्यं शूद्रः पैष्ट्यादिकं पुनः ॥
तेन शूद्रस्य नानुकल्पः ।

जिस स्थानमें ब्राह्मणको अवश्य ही मद्य देनेकी विधि है वहां गुड, अदरक और तांबेके पात्रमें जल मधु प्रदान करै। यह द्रव्य देवीके दक्षिण भाग और चक्रके पार्श्वमें रखकर निवेदन करे। यह द्रव्यदान शूद्रके लिये विहित हैं। अन्य किसीके पक्षमें नहीं। वैश्यको मधु, क्षत्रियको घृत, ब्राह्मणको गोदुग्ध, अथवा तांबेके पात्रमे जल मधु मद्यके स्थानमें देना कहा है। अथवा कांसीके पात्रमें नारियलका जल सब जाति पक्षमें मद्यका अनुकल्प स्वरूप हो सकता है। फलतः क्षत्रिय और वैश्य गौडी वा माध्वी सुरा प्रदान कर सकते हे। यह दो प्रकार की सुरा प्राप्त न होनेसे वैश्य और क्षत्रियको अनुकल्प प्रदान करना चाहिये। ब्राह्मण गायका दूध प्रदान करै, क्षत्रिय आज्य द्रव्य प्रदान करै, वैश्य शहत प्रदान करै, शूद्र पैष्टिक इत्यादि समस्तही मद्य प्रदान कर सकते हैं अतएव शूद्रके अनुकल्पका विधान नहीं है।

जलं क्षीरं घृतं भद्रे मधु मैरेयमैक्षवम् ।
पौष्पं तरुभवं धान्यसम्भवं तक्रनिर्म्मितम् ॥
सहकारभवं देवि त्रिविधं बहुभेदकम् ।
मादकं धर्मसम्भेदाद्वर्ज्यमासीत्सुलोचने ॥
ज्ञानेन संस्कृतं तत्तु महापातकनाशनम् ।
तद्दाने पातकाभावो दिव्य भावयुतं हि तत् ॥
माकन्दजलजं रम्यं द्रव्यं सेव्यं द्विजातिभिः ।
अमादकत्वाद्देवेशि ऐक्षवं सेव्यते बुधैः ॥
एतेन क्षत्रियादिभिरमादकं द्रव्यं सेव्यं
मादकस्य पापहेतुत्वमुक्तम् ।

तंत्रमें लिखा है जलोत्पन्न, क्षीरोत्पन्न, घृतोत्पन्न, मैरेय ईखसे उत्पन्न, पुष्पोत्पन्न, वृक्षोत्पन्न, धान्योत्पन्न, तक्रसंभूत, आमकी बनी मद्य इस प्रकार अनेक भांतिकी हैं, मादक द्रव्य धर्मकी हानि करनेवाला

है इसलिये ही यह निषिद्ध है। किन्तु मादक द्रव्यका ज्ञानद्वारा संस्कार होनेपर उस मद्यके प्रदान करनेमें पाप नहीं होता। पर कोई २ कहते हैं कि मद्य प्रदान दिव्यभाव विषयक—अर्थात् दिव्यभावसे मद्य प्रदान करनेमें दोष नहीं है; ऐसा कहा गया है कि ब्राह्मणोंको माकंद जलसे प्रगट हुई मद्य सेवन करनी चाहिये। क्योंकि इसमें वैसी मादकता नहीं हैं। देखा जाता है कि मादकताहीन जानकर पण्डितगण इक्षुसंभूत मद्यपान करते हैं, इस वचनसे निश्चय होता है कि क्षत्रियोंके पक्षमें मादकताही मद्य सेवनीय है। जो मद्य अतिशय मत्तता करनेवाली है वही पापका हेतु कही गई है ॥

मद्यं मासं विना वत्स यत्किञ्चित्कुलसाधनम् ।
शक्त्यै दत्त्वा ततः शेषं गुरवे तन्निवेदयेत् ॥
तदनुज्ञां मूर्ध्नि कृत्वा शेषमात्मनि योजयेत् ।
तेन क्षत्रियादीनां मद्यस्य दानेऽधिकारः न पाने ॥

तंत्रान्तरमें लिखा है कि, मद्य और मांसके अतिरिक्त अन्य जो कुछ कुलद्रव्य हैं वह सब शक्ति को प्रदानपूर्वक अवशिष्ट गुरुको निवेदन करै। अनन्तर गुरुकी आज्ञा मस्तकपर धारण कर शेष अंश आप पान भोजन करै। इससे जाना जाता है कि क्षत्रियादिकोंके लिये मुख्य द्रव्य दानमें अधिकार है, किन्तु पान करनेमें अधिकार नहीं है ॥

यत्तु—पीत्वा पीत्वा पुनः पीत्वा पतित्वा च महीतले ।
उत्थाय च पुनः पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते ॥
तत्तु चतुर्थाश्रमिपरम् ।
तद्द्रव्यकरणे जातिचिन्तां न कुर्यात् ।

तंत्रान्तरमें कहा है कि, पान करके, पान करके बारंबार पान करके यदि भूतलमें गिरै और उठते ही यदि फिर पान करे तो पुनर्जन्म नहीं होता। यह वचन चतुर्थाश्रमीके पक्षमें विहित हुआ है, जो यह वाक्य ब्रह्मज्ञानसे संबंध रखता है कि बारंबार ब्रह्मानंदका रसका पान करै तो इस द्रव्यके ग्रहण कालमें जातिका विचार न करै ॥

तथा-मदिरायां मैथुने च जातिचिन्तां न कारयेत् ।।

तत्रांतरमें लिखा है कि, मद्यपानके विषयमें और स्त्रीसम्भोगके विषयमें जातिका विचार न करै ।।

पाने भ्रान्तिर्भवेद्यस्य घृणा स्याद्रक्तरेतसोः ।
शुचौ वाऽशुद्धताभ्रान्तिः पापाशंका च मैथुने ।।
स भ्रष्टः पूजयेद्देवीं चण्डीमंन्त्रं कथं जपेत् ।।

तंत्रांतरमें कहा है कि सुरापान करनेसे जिसका मन शंकित हो शुक्र शोणितमें जिसको घृणा उत्पन्न होती हो, जो पुरुष विशुद्धवस्तुको अशुद्ध समझे, स्त्रीके संसर्गमें जिसको पापकी आशंका हो वह पुरुष भ्रष्ट है वह किस प्रकार चण्डीकी पूजा और उनके मंत्रका जप करेगा ।।

तथा-मदिरायां मैथुने च जातिवृत्तिं न चाचरेत् ।
एतेषां शोधनस्यावश्यकत्वम् ।
तथा च-संशोधनमनाचर्य्य स्त्रीषु मद्येषु साधकः ।
आचारे सिद्धिहानिःस्यात् क्रुद्धा भवति सुंदरी ।।
मद्येषु मुख्यानुकल्पे ।
तथा-कुलपूजायामस्यावश्यकत्वम् ।
तथा च-मधु मांसं विना देवि कुलपूजां समारभेत् ।
जन्मान्तरसहस्रस्य सुकृतं तस्य नश्यति ।।

तंत्रांतरमें कहा है कि, मद्यग्रहण और मैथुनकालमें जाति-विचार न करै। किंतु उस मद्य मांस मत्स्य और शक्तिका शोधन करना आवश्यक है। तंत्रमें कहा-है शक्ति और मद्य इत्यादि के विना शोधन किये ग्रहण करनेसे सिद्धिकी हानि होती है और भगवती क्रुद्ध होती है। यहां मद्यशब्दमें मुख्य और उसके स्थानकी वस्तु दोनोंको समझना चाहिये। तंत्रांतरमें लिखा है-कुलपूजाके समय मद्य मांसादि की अत्यन्त आवश्यकता है, जो पुरुष मद्य और मांसके विना कुलपूजामें प्रवृत्त होता है उसके सहस्र जन्मके पुण्य नष्ट हो जाते हैं ।।

तथा च–यत्रासवमवश्यन्तु ब्राह्मणस्तु विशेषतः ।
तत्र गुडार्द्रकं दद्यात्तक्रं वा गुडमिश्रितम् ।।

तंत्रांतरमें कहा है कि, जहां ब्राह्मणको मद्यपान करनेकी अत्यन्त आवश्यकता है वहां गुड़ और अदरक वा तक्र (मठा) मिश्रित गुड प्रदान करै ।।

मांसादिका शोधन

मांसन्तु त्रिविधं ज्ञेयं जलखेचरभूचरम् ।
संप्रोक्तं त्रिविधं मांसं देवताप्रीतिकारकम् ।।

मांस तीन प्रकारका है–जलचर, भूचर और खेचर । यह तीन प्रकारका मांस ही देवताकी प्रीति करनेवाला है ।।

मत्स्यन्तु त्रिविधं देवि उत्तमाधममध्यमम् ।
उत्तमं त्रिविधं देवि शालपाठीनरोहितम् ।।
प्रवीणं कण्टकैर्हीनंतैलाक्तं बंधनैर्युतम् ।
देव्याः प्रीतिकरञ्चैव मध्यमन्तच्चतुर्विधम् ।
क्षुद्राणि तानि सर्वाणि अधमानि विदुर्बुधाः ।।

मत्स्य भी उत्तम, मध्यम और अधम तीन प्रकारका है । उत्तम मत्स्य भी शाल, पाठीन और रोहित यह तीन प्रकार है, वा कंटकहीन मत्स्यको उत्तम मत्स्य कहा जाता है । जो मत्स्य तेल से व्याप्त और गाठोंसे युक्त है उसको मध्यम मत्स्य कहा जाता है । यह मध्यम मत्स्य भी देवीका प्रीतिजनक है, यह चार प्रकार है । छोटे मत्स्य और काटे-युक्त मत्स्यको अधम मत्स्य कहते हैं ।।

भूचरमांस

गोमेषाश्वमहिषकगोधाजोष्ट्रमृगोद्भवम् ।
महामांसाष्टकं प्रोक्तं देवताप्रीतिकारकम् ।।

भूचर मांस यथा–नीलगोमांस, मेषमांस, अश्वमांस, महिषमांस, गोधामांस (गोयका मांस), छागमांस, उष्ट्रमांस, मृगमांस इन आठ प्रकारके मांसको महामांस कहते हैं, यह सब मांस देवताको प्रसन्न करने वाले हैं ।।

मांसाभावमें अनुकल्प

लवणार्द्रकपिण्याकतिलगोधूममाषकम् ।
लशुनञ्च महादेवि मांसप्रतिनिधिः स्मृतः ।।

मांसके अभावमें अनुकल्पप्रदान किया जा सकता है लवण अदरक, पिण्याक, तिल, गेहूं, उर्द, लशुन यह कई द्रव्यमांसके अनुकल्प हो सकते हैं ।।

मुद्रा तु द्विविधा

कृषरं मण्डलाकारं चन्द्रबिम्बनिभं शुभम् ।
चारु पक्वं मनोहारि शर्कराद्यैश्च पूरितम् ।।
पूजाकाले देवताया मुद्रैषा परिकीर्तिता ।
भ्रष्टधान्यादिकं यावच्चर्वणीयं प्रकल्पयेत् ।।
तेषां संज्ञा कृता मुद्रा महामोदप्रदायिनी ।।

मुद्रा दो प्रकारकी कुलार्णवमें लिखी है कि चंद्रबिम्बके समान मण्डलाकार सुपक्व मनोहर शर्करादिसे पूरित उत्तम कृषर को मुद्रा कहते हैं, पूजा कालमें यह देवता को निवेदन करनी चाहिये भ्रष्टधान्य इत्यादि अर्थात् भुने धान्य इत्यादि जो सब चावनेके द्रव्य हैं उनको मुद्रा और चर्बण द्रव्य कहा जाता है यह अति आनन्ददायक है ।।

शोधन मंत्र

ओं प्रतद्विष्णोरित्यादि मांसम् ओं त्र्यम्बकमित्यादि
मीनम् ॐ तद्विष्णोरित्यादि मुद्राञ्च शोधयेत् ।

ॐ प्रतद्विष्णोस्तुवते' इस मंत्रसे मांस शोधन किया जाता है "ॐ त्र्यम्बकं यजामहे" इस मंत्रसे मत्स्य शोधन होता है "ॐ तद्विष्णोः परमं पदम्" इत्यादि मंत्रसे मुद्रा शोधन होता है ।।

शक्तिशोधन

अदीक्षितकुलासङ्गात्सिद्धिहानिः प्रजायते ।
तत्कथाश्रवणञ्चैव स्यात्तल्पगमनं यदि ।।
स कुलीनः कथं देवि पूजयेत्परमेश्वरीम् ।

श्रीक्रमे। संशोधनमनाचर्य्येति० ।।

अब शक्तिशोधन कहा जाता है। अदीक्षिता शक्तिके संसर्गसे सिद्धिकी हानि होती है। यदि कोई साधक अदीक्षिता शक्तिकी कथा सुने, वा उसकी शय्यामें जाय तो वह किस प्रकार कुलीन हो सकेगा? किस प्रकार परमेश्वरीकी पूजा करनेमें समर्थ होगा? श्रीक्रममें कहा है–संशोधन विना किये मद्यपान और स्त्रीगमन करनेसे सिद्धिकी हानि होती है और भगवती भी क्रुद्ध होती है ।।

अभिषेकाद्भवेच्छुद्धिर्म्मन्त्रस्योच्चारबिन्दुभिः।
बलाद्वा यत्नतो वापि अभिषेकं समाचरेत् ।।

अभिषेक मंत्र

आदौ बालां समुच्चार्य्य त्रिपुरायै समुद्धरेत्।
नमः शब्दं समुच्चार्य्यं इमां शक्ति ततो वदेत् ।।
पवित्रीकुरु शब्दान्ते मम शुद्धिं कुरु प्रिये।
वह्निजायां समुच्चार्य्य शुद्धिमंत्रः सुरेश्वरि ।।
तस्याः कर्णेऽभेदबुद्ध्या मायाबीजं समुद्धरेत् ।।

कौलिक तंत्रमें कहा है कि मंत्रोच्चारणपूर्वक जलबिंदु द्वारा कामिनीका अभिषेक करनेसे वह विशुद्ध और शक्ति हो सकती है। अतएव बलपूर्वक वा यत्नपूर्वक कामिनीका अभिषेक कर ले ।।

अभिषेकमंत्रो यथा–ऐं क्लीं सौः त्रिपुरायै नमः इमां शक्तिं पवित्रीकुरु मम सिद्धिं कुरु स्वाहा।'

हे सुरेश्वरि! यही शक्तिके शोधनका मंत्र है। अनन्तर अभेद बुद्धिसे उस शक्तिके कानमें मायाबीज प्रदान करे ।।

इति शक्तिशोधन

ततः शोधितद्रव्यमध्ये निक्षिपेत्।
पूर्वशोधितद्रव्यन्तु गुप्तेनैव च संक्षिपेत् ।।
आज्यद्रव्यमर्घ्यपात्रे निःक्षिप्य प्रयतः सुधीः।
कुण्डगोलोद्भवं द्रव्यं स्वयम्भूकुसुमन्तथा ।।

अर्घ्यं दत्त्वा महेशानि सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ।
सुरया चार्घ्यदानेन योगिनीनां भवेत्प्रियः ।।
महायोगी भवेद्देवि पीठप्रक्षालितैर्ज्जलैः ।
पञ्चमात्तु परं नास्ति शाक्तानां सुखमोक्षयोः ।।
केवलैः पञ्चमैर्वापि सिद्धो भवति साधकः ।
तेन पञ्चमकारेण पूजा कर्त्तव्या ।

अनन्तर शोधित द्रव्य अर्घ्य पात्रमें डाले । श्रीक्रममें अर्घ्यविधान स्थलमें कहा है कि, गुप्तभावसे पूर्व शोधित द्रव्य अर्घ्य पात्रमे डालना चाहिये । स्वतंत्र तन्त्रमें कहा है कि ज्ञानवान् पुरुष सावधान चित्तसे अर्घ्य पात्रमें पूर्व शोधित द्रव्य डालकर उसमें कुण्ड द्रव्य, गोलद्रव्य और स्वयम्भू कुसुम डालकर देवीको अर्घ्य प्रदान पूर्वक सिद्धि लाभ कर सकता है। सुरा द्वारा अर्घ्य प्रदान करनेसे योगिनियोंका प्रिय हो सकता है । हे देवि ! पीठको धोकर जल द्वारा अर्घ्य प्रदान करनेसे महायोगी हो सकता है । तंत्रान्तरमें लिखा है । शक्तिमंत्रके उपासक पुरुषोंको पंचमकारके अतिरिक्त शुभ साधन वा मोक्षसाधन कुछ नहीं है । एकमात्र पंचमकार के द्वारा साधक सिद्धि लाभ कर सकता है। अत एव पंच मकारसे पूजा करनी चाहिये ।।

ततोऽर्घ्यस्थापनानन्तरं पीठं पर्यंकमध्ये पूजयेत् ।
"मण्डूकाय नमः" इत्यादि क्रमेण ।

तदुक्तम्––

पूजयेदथ पर्य्यंकमध्ये मण्डूकमग्रतः कालाग्निरुद्रमाधारशक्तिकूर्ममनन्तकम् ।। वराहं पृथिवीं कन्दं नालञ्च केशराणि च ।
पद्मञ्च कर्णिकाञ्चैव मण्डलञ्च समर्च्चयेत् ।।
धर्मवैराग्यमैश्वर्यं ज्ञानमज्ञानमेव च ।
अनैश्वर्यमवैराग्यमधर्ममपि पूजयेत् ।।
ज्ञानविद्यात्मकञ्चैव हयात्मानञ्च पूजयेत् ।
गन्धपुष्पाक्षतादीनिदत्त्वा तत्रैव पूजयेत् ।।
तथा तूलिकोपरि कुलं स्थापयित्वा प्रपूजयेत् ।

तथाच–

तस्योपरि कुलं स्थाप्य पूजानुष्ठानमेव च ।
पूजयेच्च ततस्तस्यां पञ्च कामान् समाहितः ।।
ह्रींञ्चैव कामराजञ्च क्लीं कन्दर्पं ऐं मन्मथंब्लुं ।
मकरध्वजं स्त्रींञ्चैव हि मनोभवम् ।
ओंङ्कारादिनमोंतञ्च कुसुमैर्गन्धसंयुतैः ।।
अर्च्चयित्वा चतुर्द्दिक्षु पूजयेत्कुलनायिकाम् ।
बटुकं भैरवञ्चैव दुर्गाञ्च क्षेत्रपालकम् ।।

पूजावाक्यन्तु–"ओं ह्रीं कामराजाय नमः ।" इत्यादि । तत्र ऐं क्लीं स्त्रीं क्लीं ब्लुं आधारशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि" । इत्यनेन तस्या ललाटे त्रिकोणं विलिखेत् ।

तथाच–

वाग्भवं कामबीजञ्च स्त्रीबीजं कामराजकम् ।
ब्लुमात्मकं ततो दत्त्वा आधारशक्तिमुद्धरेत् ।।
श्रीपादुकां ततो दत्त्वा पूजयामि वदेत्ततः ।
अनेन मनुना देवि ललाटे सुमनोहरम् ।।
त्रिकोणं तत्र संलिख्य सिन्दूराद्यैर्वरानने ।

उत्तरतंत्रे

तस्य मूर्ध्नि त्रिकोणञ्च यंत्रमालिख्य साधकः ।
महाप्रेतासनं मध्ये बालाञ्च पूजयेत्ततः ।।

तत्रएवञ्च "हसौः सदाशिव महाप्रेत पद्मासनाय नमः" इतिपूजयेत् । ततो बालां कामेश्वरीञ्च पूजयेत् ।

कुलार्णवे

गणेशञ्च कुलाध्यक्षं दुर्गां लक्ष्मीं सरस्वतीम् ।
त्रिकोणेषु च संयोज्य वसन्तं मदनं प्रिये ।।
स्तनयोः पूजयेत् पश्चान्मुखे तस्याःसुधाकरम् ।
मौलौ गणेशं केशाग्रे कुलाध्यक्षं ललाटके ।।

दुर्गां भ्रुवोस्तथा लक्ष्मीं रसनायां सरस्वतीम् ।
इति यत्स्थानवैपरीत्यं तदैच्छिकम् ।।

अनंतर अर्घ्यस्थापनके पीछे पर्यङ्कमें "मण्डूकाय नमः" इत्यादि मंत्रसे पीठपूजा करनी चाहिये। कहा है कि पर्यङ्कमें प्रथम मण्डूककी. पूजा करके पीछे कालाग्नि, रुद्र, कूर्म, अनंत, वराह, पृथ्वी, कंद, नाल केशरसमूह, पद्म, कर्णिका, मण्डल, धर्म, वैराग्य, ऐश्वर्य, ज्ञान, अज्ञान, अनैश्वर्य, अवैराग्य, अधर्म इन समस्त पीठोंकी पूजा करके अन्तमें ज्ञानविद्यात्मक आत्माकी पूजा करै । अनन्तर गंध पुष्प अक्षतादि द्वारा देवताकी पूजा करके पर्यंकके ऊपर कुलस्थापनपूर्वक पूजाका अनुष्ठान करना चाहिये । मंत्र यथा–"ह्रींकामराजाय नमः क्लीं कन्दर्पाय नमः ऐं मन्मथाय नमः ब्लुं मकरध्वजाय नमः स्त्रीं मनोभवाय नमः" गन्ध पुष्पसे इन पंचकामकी पूजा करनी चाहिये । चारों दिशाओंकी इस प्रकार पूजा कर पीछे कुलनायिकाकी पूजा करनी चाहिये । फिर बटुकभैरव, दुर्गा और क्षेत्रपाल इनकी भी पूजा करनी चाहिये। "ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ब्लुं आधारशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि" यह मंत्र पढ़कर शक्तिके ललाटदेशमें त्रिकोण यंत्र लिखे । तंत्रान्तरमे लिखा है–हे वरानने ! ऐं क्लीं इत्यादि मंत्र पढ़कर सिन्दूरादि द्वारा शक्तिके ललाटमें मनोहर त्रिकोण यंत्र लिखे। उत्तरतंत्रमें-कहा है–शक्तिके मस्तकमें त्रिकोण मंत्र लिखकर "हसौः सदाशिव महाप्रेत मद्मासनाय-नमः" यह मंत्र पढ महाप्रेतासनकी पूजा करके पीछे बाला और कामेश्वरी-की पूजा करै । कुलार्णवमें लिखा है–गणेश, कुलाध्यक्ष, दुर्गा, लक्ष्मी-सरस्वती, त्रिकोण यंत्रमें इन सब देवी देवताओंकी पूजा करके दोनों स्तनमें वसन्त और मदनकी पूजा करै । फिर मुखमंडलमें सुधाकरकी पूजा करै। उत्तरतंत्रमें कहा है–मस्तकमें गणेश, केशाग्रमें कुलाध्यक्ष, ललाटमें दुर्गा, दोनों भौंओंमें लक्ष्मी, रसनामें सरस्वतीकी पूजा करनी चाहिये । भिन्न भिन्न वचनोंमें पूजास्थानकी विपरीतता देखी जाती है, अत एव साधक इच्छानुसार किसी एक मतका अनुष्ठान करै ।।

ज्ञानार्णवे

दक्षपादादि मूर्द्धान्तं वाममूर्द्धादि सुंदरि ।
पादांतं पूजयेत्सर्वाः कला वै कामसोमयोः ।।
श्रद्धा प्रीती रतिश्चैव भूतिः कांतिर्मनोभवा ।
मनोहरा मनोरामा मदनोत्पादिनी तथा ।।
मोहिनी दीपनी चैव शोषणी च वशंकरी ।
रञ्जनी चैव देवेशि षोडशी प्रियदर्शना ।।
षोडशस्वरसंयुक्ता एताः कामकला यजेत् ।।

वाक्यं तु--

अं श्रद्धायै नमः आंप्रीत्यै नमः इत्यादि ।
ततश्चन्द्रकलाः पूज्याः शिरसश्चरणावधि ।
पूषा रमा च सुमना रतिः प्रीतिस्तथा धृतिः ।।
शुद्धिः सौम्या मरीचिश्च शैलजे चांशुमालिनी ।
अंगिरा वशिनी चैव छाया संपूर्णमण्डला ।।
तथा तुष्टचमृता चैव कलाःसोमस्य षोडश ।।
अंगिरास्थाने मदिरेति पाठः ।

ज्ञानार्णवमें कहा है''–हे सुंदरी ! दहिने चरणसे मस्तक पर्यन्त और मस्तकके वाम अंशसे वाम चरण पर्यन्त कामकला और सोमकलाकी पूजा करनी चाहिये। कामकला यथा–श्रद्धा, प्रीति, रति, भूति, कान्ति, मनोभवा, मनोहरा, मनोरमा, मदनोत्पादिनी, मोहिनी, दीपनी, शोषणी, वशंकरी, रञ्जनी, षोडशी और प्रियदर्शना इन सोलह कामकलाकी पूजा करै। वाक्य यथा–"अं श्रद्धायै नमः आं प्रीत्यै नमः' इत्यादि। अनन्तर मस्तकसे आरंभ करके चरण पर्यन्त चक्रके सोलह कलाकी पूजा करनी चाहिये। सोलह कला यथा–पूषा, रमा, सुमना, रति, प्रीति, धृति, शुद्धि, सौम्या, मरीचि, अंशुमानी अंगिरा, वशिनी, छाया, संपूर्णमण्डला, तुष्टि और अमृता हे शैलनन्दिनी ! यह सोलह चन्द्रकी कला हैं, किसी किसी पुस्तकमें अंगिरा स्थलमें मदिरा पाठ दिखाई देता है।।

उत्तरतन्त्रे

स्वरैरेव हि पूज्या हि सर्वकार्यार्थसिद्धये ।
भागे तदीये विज्ञेया नाड्यस्तिस्रः प्रवाहिका: ।।
एका तु वाहिका चान्द्री सौरी चान्या तु वाहिका ।
आग्नेय्या चापरा ज्ञेया पूजयेत्तास्तु साधकः ।।
अम्बु स्रवति चान्द्री सा पुष्पं स्रवति भानवी ।
बीजं स्रवति चाग्नेयी तास्तु नामभिरर्च्चयेत् ।।
वाग्भवाद्यैर्नमोयुक्तैः पूजयेत्सुप्रसन्नधीः ।।
मंत्रः –ऐं चान्द्रयै नमः ऐं सौर्य्यै नमः ऐं आग्नेय्यै नमः ।

उत्तरतंत्रे

पूजयेन्मदनागारे रक्त चन्दनचर्च्चिते ।
भगमालामनुं प्रोच्य त्रितारानन्तरं तथा ।।
ऐं ह्रीं श्रीं ऐं ह्रीं श्रीं ऐं जं ब्लुं क्लिन्ने ततःपरम् ।
सर्वाणीति भगानीति वशमानय ततः परम् ।।
स्त्रीं ह्रीं क्लीं ब्लुं भगमालियै नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं इति मंत्रेण गन्धाद्यैस्तामर्च्चयेत् ।
ततस्तु तत्रैव मूलं जपेत् ।
तंत्रान्तरे–इहाप्यावाहनं नास्ति जीवन्यासो महेश्वरि ।
अथैवञ्च विधानेन तां षोडशोपचारकैः ।
इष्टदेवीं प्रपूज्याथ सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ।।
ततः स्वलिंगं पूजयेत् ।
अर्च्चयेद्गन्धपुष्पाद्यैः स्वशिवं तदनन्तरम् ।
ततो मूलमंत्रं ओं नमः शिवाय ततः परम् ।
यजेत्तत्पुरुषाघोरसद्योजातकसंज्ञकैः ।।
श्री विद्यायान्तु –
तारञ्च भुवनेशानीं तथा त्रिपुरसुंदरीम् ।
नमः शिवाय विद्येयं दशार्णा परिकीर्त्तिता ।।

इति विशेषः। तत्पुरुषादिमंत्रस्य पूर्वोक्तः।
निर्वृतिञ्च प्रतिष्ठाञ्च विद्याञ्च तदनन्तरम् ॥
शक्तिञ्च शांत्यतीताञ्च तदंगे तदनन्तरम्।
समग्रविद्यामुच्चार्य्य त्रिकोणञ्चैव पूजयेत् ॥
अवधूतेश्वरीं कुब्जां कामाख्यां समयामपि।
चक्रेश्वरीं कालिकाञ्च तथा दिक्करवासिनीम् ॥
महाचण्डेश्वरीं तारां पूजयेदथ साधकः।
तदनुज्ञां ततो लब्ध्वा दत्त्वा तांबूलमेव च ॥
शिवञ्च तत्र निःक्षिप्य गजतुण्डाख्यमुद्रया।
धर्माधर्महविर्दीप्ते ह्यात्माग्नौ मनसः श्रुता ॥
सुषुम्नावर्त्मना नित्यमक्षवृत्तीर्जुहोम्यहम्।
स्वाहान्तोऽयं महामंत्रो ह्यारम्भे परिकीर्त्तितः ॥
ततो जपेत्स्त्रियं गच्छन्विद्यां त्रिभुवनेश्वरीम्।
[जपेदिति, अष्टोत्तरसहस्रं शतं वाऽक्षुब्धो जपेत्]
प्रकाशाकाशहस्ताभ्यामवलंब्योन्मनी श्रुचा।
धर्माधर्मकलास्नेहपूर्णमग्नौ जुहोम्यहम्।
स्वाहान्तोऽयं महामंत्रः शुक्रत्यागे प्रकीर्तितः ॥

विशेषस्तु ज्ञानार्णवे

शिवशक्तिसमायोगो योग एव न संशयः।
शीत्कारो मंत्रजापश्च वचनं स्तवनं भवेत् ॥
आलिङ्गनञ्च कस्तूरी कर्पूरं चुम्बनं भवेत्।
नखदंष्ट्राक्षतादीनि पुष्पाणि विविधानि च ॥
मैथुनं तर्पणं विद्धि बीजपातो विसर्ज्जनम् ॥

उत्तरतंत्रमें लिखा है—इन सोलह चंद्रकलाओंमें सोलह स्वर वर्ण मिलाकर पूजा करनेसे समस्त कार्य सिद्ध होते हैं। ललिता तंत्रमें लिखा है—शक्तिकी कुलागारग्रवाहिनी तीन नाडी हैं, उनमें एक-नाडी चान्द्री, एक नाडी सौरी एक नाडी आग्नेयी है। साधक इन तीन

नाडियोंकी पूजा करै। इन तीनों नाडियोंमें चान्द्री नाडी जल, सौरी नाडी पुष्प और आग्नेयी नाडी बीज क्षरण करती है। नामोच्चारण-पूर्वक इन तीनों नाडियोंकी पूजा करनी चाहिये। ललितातंत्रमें लिखा है–पहिले ऐं, फिर नमः, मिलाकर प्रसन्न हृदयसे पूजा करे। वाक्य यथा–'ऐं चान्द्रयै नमः' इत्यादि। उत्तरतंत्रमें कहा है–रक्तचंदनसे चर्चित मदनागारमें पूजा करनी चाहिये। मंत्र यथा–पहिले भगसालामंत्र पढकर फिर 'ऐं क्लीं सौः ऐं ह्रीं ऐं जं क्लिन्ने सर्वाणि वशमानय स्त्रीं ह्रीं क्लीं क्लं भगमालिन्यै नमः ऐं ह्रीं श्रीं' इस मंत्रसे गंधादि उपचार प्रदान करै। फिर मदनागारमें अपने इष्टदेवताकी पूजा करै। तंत्रान्तरमें लिखा है कि हे महेश्वरि ! यहां पूजा करनेमें आवाहन नहीं और जीवन्यास भी नहीं है, केवल षोडशोपचारसे इष्टदेवताकी पूजा करने पर समस्त सिद्धि लाभ कर सकता है। अनन्तर स्वलिंगकी पूजा करै तंत्रमे लिखा है कि इसके पीछे तत्पुरुष, अघोर, सद्योजात नामसे पूजा करै। श्रीविद्याविषयमें "ओं ह्रीं ऐं क्लीं सौःनमः शिवाय" इस दशाक्षर मंत्रसे निज शिवकी पूजा करे। तत्पुरुषादि मंत्र पहिले कहा गया है। फिर शक्तिके अंगमें निवृत्ति, प्रतिष्ठा, विद्या, शक्ति, शांत्यतीता, इन सब देवताओंकी पूजा करै। फिर पूर्वोक्त मंत्र उच्चारण पूर्वक त्रिकोणकी पूजा करनी चाहिये। फिर अवधूतेश्वरी, कुब्जा कामाख्या, समया चक्रेश्वरी, कालिका, दिक्करवासिनी, महाचण्डेश्वरी और ताराकी पूजा करै। अनन्तरशक्तिको ताम्बूल प्रदान पूर्वक उसकी अनुमति ले गजतुण्डमुद्रा द्वारा कुलागारमें निज शिव निक्षेप करै। इसका मंत्र यथा–धर्माधर्महविर्दीप्ते० इत्यादि। इस मंत्रका अर्थ यथा–प्रदीप्त आत्मारूप अग्निमें मनोरूप स्रुक्द्वारा सुषुम्नापथमें धर्माधर्म रूप होवे और इन्द्रियवृत्तिमुदय आहुति-प्रदान करता हूं। आरंभके समय स्वाहान्त यह मंत्र पढना चाहिये। अनन्तर इस प्रकार शक्तिसंगत हो असुब्ध हृदयसे अष्टोत्तर सहस्र अथवा अष्टोत्तर शत १०८ इष्ट मंत्रका जप करै। अनन्तर शुक्र त्यागके समय 'प्रकाशाकाशहस्ता०'

यह मंत्र स्वाहान्त पाठ करै। ज्ञानार्णवमें विशेषरूपसे कहा है कि शिवशक्ति योगका नाम ही योग है इसमें संदेह नहीं है। इस स्थलमें शीत्कार ही मंत्र जप, वाक्यही स्तव, आलिंगन ही कस्तूरी, चुम्बन ही कर्पूर, नखक्षत, दन्तक्षत इत्यादि ही बहुविध पुष्प, मैथुन ही तर्पण और वीर्यपात ही विसर्जन है।

कुलार्णवे

आलिङ्गनं चुंबनञ्च स्तनयोर्मर्दनन्तथा।
दर्शनं स्पर्शनं योनेर्विकाशो लिंगघर्षणम्॥
प्रवेशः स्थानं शक्तेर्नव पुष्पाणि पूजने।

कुलार्णवमें लिखा है—आलिंगन, चुंबन, स्तनमर्दन, दर्शन, स्पर्शन, योनिविकाश, लिंगघर्षण, प्रवेश, स्थापन इन नौ प्रकारके पुष्पोंसे पूजा करै।

यामले—संयोगाज्जायते सौख्यं परमानन्दलक्षणम्।
कुलामृतं प्रयत्नेन गृह्णीयाद्दुर्लभं नरः॥
तेनामृतेन दिव्येन सर्वे तुष्टा भवन्ति हि।
यत्कामं कुरुते मंत्री तत्क्षणादेव सिध्यति॥

यामलतंत्रमें लिखा है—शिवशक्ति संयोगसे परमानन्दमय सुख प्राप्त होता है अतएव साधक दुर्लभ दिव्य कुलामृत लेवे, इसके द्वारा संपूर्ण देवता संतुष्ट होते हैं, यह कुलामृत प्रदान करके साधक जो जो कामना करता है वह तत्काल सिद्ध होती है।

ज्ञानार्णवे—कुलद्रव्यञ्च संशोध्य शिवशक्तिमयं प्रिये।
यद्वामृतं परं ब्रह्मरूपं निःक्षिप्य सुंदरि॥
अर्घपात्रामृतैर्घृष्टवा निर्विकल्पः सदानघः।
श्रीविद्याक्रमसंभ्यर्च्य परब्रह्ममयो भवेत्॥
इति ते कथितं ज्ञानं सर्वरम्यं वरानने।
स सविकल्पस्तु सततं पापभाग्जायते नरः॥

विचिकित्सापरो मंत्री जायते गुरुतल्पगः ।
अत एव वरारोहे निर्विकल्पः सदा भवेत् ।।

ज्ञानार्णवमें कहा है–हे सुंदरी ! शिवशक्तिमय कुलद्रव्य शोधन पूर्वक उसमें ब्रह्मरूप बीजामृत डालकर अर्घ्य पात्रस्थ अमृतसे पूजा कर निर्विकल्प और निष्पाप हो । इस प्रकार श्रीविद्याके क्रमानुसार पूजा करनेसे साधक परब्रह्ममय होता है। यहां पर श्रीविद्याक्रम उपलक्षणमात्र (कथनपरक) है। संपूर्ण देवताओंके संबंधमें इसी प्रकार जानना चाहिये । हे वरानने ! यह मैंने तुमसे संपूर्ण ज्ञानका विषय कहा । इस विषयमें सन्देहयुक्त होनेसे मनुष्य पापका भागी होता है, जो पुरुष संदेह करेगा वह गुरुदारागामीके समान महापातकी होगा, अत एव हे महेश्वरि ! सन्देहरहित चित्तसे यह सब साधन करे ।।

कुलामृतं समादाय तदर्घ्ये निःक्षिपेत्ततः ।
तदर्घ्येण समाराध्य पूजाशेषं समापयेत् ।।
कुलामृतं शोधितम् ।

अन्तमें कुलामृत लेकर अर्घ्यपात्रमें डालना चाहिये । उस अर्घ्यके जलसे पूजा करके पूजा समाप्त करे, परंतु यह कुलामृत शोधन कर लेना चाहिये ।।

शोधनमंत्रस्तु श्रीचक्रे

अमृते ह्यमृतोद्भवे ह्यमृतवर्षिणि प्रिये ।
देविपदं शुक्रशापं प्रमोचयपदद्वयम् ।।
अमृतं स्रावयद्वन्द्वममृतं कुरु युग्मकम् ।
स्वाहापदं ततो देवि शुक्रशुद्धिर्भवेत्प्रिये ।।

शोधनमंत्रो यथा

"अमृते अमृतोद्भवे अमृतवर्षिणि देवि शुक्रशापं, प्रमोचय प्रमोचय अमृतं स्रावय अमृतं स्रावय अमृतं कुरु अमृतं कुरु स्वाहा"
हे देवि ! इस मंत्रसे शुक्रशुद्धि होती है ।।

शुक्रैरक्षततण्डुलैः सुगन्धैः कुसुमैर्युतैः ।
अर्घ्यद्रव्यैश्च देवेशि योनौ देवीं प्रपूजयेत् ।।

सुगंधित पुष्प और अक्षतोंसे यह शुक्र अर्घ्य जलमें मिश्रित कर इस कुलागारमें ही इष्ट देवताकी पूजा करै।

उत्तरतंत्रे

धूपैर्दीपैश्च नैवेद्यैर्विविधैः कुलसाधनः ।
विधाय वन्दितां तां च तदुच्छिष्टं स्वयं चरेत् ।।

उत्तरतंत्रमें लिखा है—कुलसाधक पुरुष धूप, दीप, नैवद्य, इत्यादि अनेक प्रकारकी वस्तुसे शक्तिकी पूजा करके स्वयं उसका उच्छिष्ट भोजन करै ।।

शिवागमे च ।

अविचारं शक्त्युच्छिष्टं पिबेच्छक्रपुरो यदि ।
घोरञ्च नरकं याति कुलमार्गात्पतेद् ध्रुवम् ।।
तस्माद्विचार्य्य यत्नेन शक्त्युच्छिष्टं चरेत्सुधीः ।
आनन्दं कारयेद्वीरस्तत्त्वं निर्भ्रान्तितः पिबेत् ।।

यदि कर्त्तव्याकर्त्तव्यका विचार न करके इन्द्रादि देवता भी शक्तिका उच्छिष्ट पान करें तो कुलमार्गसे भ्रष्ट होकर वह भी घोर नरकमें जाते हैं, अतएव ज्ञानवान् पुरुषका कर्त्तव्य वही है कि यत्नपूर्वक विचार करके शक्तिका उच्छिष्ट पान करे। स्वामीका कर्त्तव्य यही है कि जिससे शक्तिको आनन्द हो इस प्रकार तत्त्व प्रदान करै और आप जिससे भ्रान्त न हो ऐसे भावसे तत्त्व प्रदान करै।

कुलामृते—

पूजाकालं विना नैव पश्येच्छक्ति दिगम्बराम् ।
पूजाकालं विना नैव सुरा पेया च साधकैः ।।
आयुषा हीयते स्पृष्ट्वा पीत्वा च नरकं व्रजेत् ।।

इति कुलपूजा

कुलामृतमें लिखा—है— कि, पूजाकालके अतिरिक्त दिगम्बरा

(नग्न) शक्तिको न देखे और पूजाकालके अतिरिक्त अन्य समयमें सुरापान भी न करै। साधक यदि पूजाकालके अतिरिक्त शक्ति व सुराका स्पर्श व पान करेगा तो वह हीनायु और नरकगामी होगा।

अथ वीर्य्यामोघीकरण

भाद्रमासि रवौ पुष्ये ग्रहणीयं प्रयत्नतः।
करे बद्ध्वा तु रात्रौ च सप्तपर्णफलं शुभम्॥
प्रत्यहं लक्षमानेन प्रजपेन्निशि संयतः।
षड्भिर्वर्षैश्च सिद्धिः स्यान्नात्र कार्या विचारणा॥
तत्फलं वदने स्थाप्य भवेद्वै दारसंगतः।
वन्ध्या वा काकवन्ध्या हि नष्टवीर्य्यस्तु यः पुमान्॥
सुरूपं लभते पुत्रं दीर्घजीविनमेव च॥

मंत्रस्तु–कां कां लिं लीं पुंसः पुत्रं दापय दापय स्वाहा।

भाद्रमासके पुष्यनक्षत्रयुक्त रविवारमें सप्तपर्ण (सातौन) वृक्षका फल तोड, बाहुमें बांध रात्रिके समय "कांकां०" इत्यादि मंत्र एक लाख जपै। नित्य इसी प्रकार जप करना चाहिये। छः वर्ष इस प्रकार करनेसे मंत्र सिद्ध होता है। इस प्रकारसे मंत्र सिद्ध होनेपर नष्टवीर्य पुरुष अथवा काकवन्ध्या वा वन्ध्या (बांझ) स्त्री भी सुरूप और दीर्घजीवी पुत्र प्राप्त कर सकती है।

बालकका क्रंदननिवारक कवच

"रूं देवी चण्डिका पातु ह्लीं ह्लीं शाकिनी हाकिनी द्रीं द्रीं हूं फट् रोदनं संवर संवर" इति॥

कवचस्य प्रसादेन धारणाच्छ्रवणात्तथा।
स्थिरो भवति बालश्च सन्त्यज्य रोदनं ध्रुवम्॥

रूं देवी०" इत्यादि कवच धारण वा श्रवण करनेपर इस कवचके प्रसादसे बालक या बालिका रोदन संवरणपूर्वक शांत होते हैं इसमें संदेह नहीं।

दैवविद्या लाभ

क्रौं क्रीं क्रुं क्रुं क्लुं सः हसखफ्रें ठः ठः स्वाहा ।।

प्रत्यहमयुतं जपेत् । त्रिवर्षेण सिद्धिः ।।

"क्रौं क्रीं०" इत्यादि मंत्र नित्य अयुत (दश हजार) संख्यक जप करे, तीन वर्ष जप करनेसे मंत्रसिद्धि होती है। इस मंत्रका जप करनेसे अत्यन्त दुर्बुद्धि पुरुष भी सुबुद्धि लाभ करके सहजमें ही अति कठिन बातके समझनेमें समर्थ होता है ।।

षोडशी-कवच

षोडशीकवचस्यास्य ऋषिर्देवो जनार्दनः ।

छन्दोऽनुष्टुप् च विज्ञेयं मोक्षार्थे विनियोगकः ।

इस षोडशी कवचके ऋषि जानर्दन, छन्द अनुष्टप् और मोक्षार्थ में इसका विनियोग है ।।

उग्रा मे हृदयं पातु कण्ठं पातु महेश्वरी ।।

उज्जटा नयने पातु कर्णौं च विन्ध्यवासिनी ।।

ललाटे विशाखा पातु शाकिनी राकिनी तथा ।

लाकिनी बाहुयुग्मं मे पादौ दिक्कारवासिनी ।।

अङ्गान्यङ्गप्रत्यङ्गं षोडशी पातु सन्ततम् ।।

उग्रा मेरे हृदय, महेश्वरी कंठ, उज्जटा नयन, विन्ध्यवासिनी कर्ण, विशाखा एवं शाकिनी और राकिनी ललाट, लाकिनी दोनों बाहु, दिक्कारवासिनी दोनों पैर और अन्यान्य अंग प्रत्यङ्गकी षोडशी देवी सदा रक्षा करे ।।

धनदं भोगदं देवि आयुरारोग्यकारणम् ।

यशस्यं नरनार्योस्तु मनोमिलनकारकम् ।।

मोक्षदं विघ्नाशञ्च नरनारीवशङ्करम् ।।

यह कवच धनप्रद, भोगप्रद आयुप्रद, आरोग्यजनक, यशप्रद, और मोक्षका देनेवाला है; इसके प्रसादसे स्त्रीपुरुषका परस्पर मनोमिलन होता है। इसके द्वारा संपूर्ण विघ्न नष्ट होते हैं और नरनारी वशीभूत किया जाता है ।।

सर्वव्याधिविघ्नप्रशमन कवच

सदाशिव उवाच

कवचस्य ऋषिर्देवि महारुद्रो महेश्वरः ।
छन्दोऽनुष्टुप् च विज्ञेयं देवी संसारनाशिनी ।
धर्मार्थकाममोक्षाणां विनियोगश्च साधने ।।

महादेवजी बोले–हे देवि ! इस कवचके ऋषि महारुद्ररूपी महेश्वर छन्द अनुष्टुप् देवता संसारनाशिनी देवी और चतुर्वर्गसाधनमें इसके विनियोग हैं ।।

ऐं क्लीं च पातु शीर्षे मां शक्तिबीजं तथा हृदि ।
हसौः पातु नाभिदेशे सुंदरी कण्ठदेशतः ।।
महेश्वरी सर्वगात्रे कौमारी दक्षिणे तथा ।
वैष्णवी पूर्वतः पातु उत्तरे सर्वमङ्गला ।।
पश्चिमे पातु वाराही इन्द्राणी पातु नैर्ऋते ।
शून्येऽनलेऽनिले क्षेत्रे सर्वत्र भुवनेश्वरी ।।

ऐं क्लीं मेरे मस्तक, शक्तिबीज हृदय, हसौः नाभिदेश, सुंदरी कंठ, माहेश्वरी सर्व गात्र, कौमारी दक्षिणदिक्, वैष्णवी पूर्वदिक्, सर्वमंगला उत्तर दिक्, वाराही पश्चिमदिक्, इन्द्राणी नैर्ऋत दिक् और भुवनेश्वरी शून्यमें, अनलमें, अनिलमें और क्षेत्रमें सर्वत्र रक्षा करें।

इदन्तु कवचं पुण्यं धारणाच्छ्रवणादपि ।
न दुःस्वप्नो भवेत्तस्य न बिभीषिकादर्शनम् ।।
दूषितज्वरभीतिश्च न च पीडकपीडनम् ।
संक्रामकव्याधिभयं कदापि न च जायते ।।
अपस्मारादिरोगाणां वायून्मादादिनामपि ।
स्त्रीरोगाणाञ्च देवेशि नाशनं कवचोत्तमम् ।।
डाकिनीपिशाचीभूतदृष्टिनिवारकं परम् ।

बाणभयं वज्रभयं हिंस्रजन्तुभयं तथा ।।

जलजन्तुभयं चैव क्षिप्रं नाशयते ध्रुवम् ।

इस पवित्र कवचको धारण वा श्रवण करनेसे दुःस्वप्न, बिभीषिका दर्शन (भयकी वस्तु), दूषित स्वरभय, अत्याचारियोंसे पीडन, संक्रामकव्याधिभय, अपस्मारादि (मिरगी आदि) रोग, वायुरोग, उन्मादरोग, डाकिनी, पिशाची, भूत इत्यादिकी दृष्टि, बाणभय, वज्रभय और जलजन्तु भय दूर होता है।

गृहगण्डी द्वारा गृहरक्षा

ॐ ह्रीं चण्डे चामुण्डे भ्रुकुटि अट्टाट्ट भीमदर्शने रक्ष रक्ष चौरेभ्यः वज्रेभ्यः अग्निभ्यः श्वापदेभ्यः दुष्टजनेभ्यः सर्वेभ्यः सर्वोपद्रवेभ्यः गण्डीः ह्रीं ह्रीं ठः ठः ।।

अष्टोत्तरशताभिमन्त्रिता गण्डीं दद्यात् ।

यह मंत्र एकसौ साठ वार पढकर जिस घरके चारों ओर गण्डी (रेखा) दी जाय उस घरमें चोर आदिके प्रवेशका भय, अग्निभय, हिंस्रजन्तु भय और दुष्ट जनोंका भय नहीं[1] रहता ।

वशीकरण

ॐ ह्रीं ह्रीं ठः ठः ।

इस मंत्र द्वारा सात बार अभिमंत्रित कर सिन्दूरसे ललाटमें तिलक करै । इस तिलकको जो देखेगा वही पुरुष मोहित होकर वशीभूत होगा ।

क्रोधशांति

ह्रीं ठीं ठीं क्रोधप्रशमन ह्रीं ह्रीं हां क्लीं सः सः स्वाहा ।

यह मंत्र सात वार पढकर पहिरनेके वस्त्र के एक कोनेमें एक गांठ

---

१ यह मंत्र पहिले सिद्ध कर लेना चाहिये । वटवृक्षपर चढ़ एक पैरसे खड़ा हो नित्य रात्रिमें एक हजार जप करे । इस प्रकार तीन वर्षमें सिद्ध होता है ।

लगावे, फिर क्या पुरुष, क्या स्त्री, जिसको क्रोध हुआ हो उसके निकट उपस्थित होने पर उसका क्रोध शान्त होता है।

द्वारोद्घाटन (द्वार खोलना)

ज्वल ज्वल उज्ज्वलोज्ज्वल द्वारमुद्घाटय उद्घाटय सर्व्ववित् कुट्कुट्ट स्मिथ स्मिथ सों सों चालिदि सर्वनिक्रुन्तनि स्पर्श स्पर्श ह्रीं ह्रीं क्लीं क्लीं जीं स्वाहा। अष्टोत्तरशतमामन्त्र्य स्पृशेत्।

द्वार जिस किसी प्रकारसे वन्द क्यों न हो उक्त मंत्र एक सौ आठ बार पढकर द्वारको स्पर्श करनेसे तत्काल द्वार खुल जाता है। यह मंत्र करोड जप द्वारा पहिले सिद्ध कर लेना चाहिये ।।

हिंस्रजन्तुस्तम्भन

ॐ हुंगंग्लौंहरिद्राग्णपतये वरवरद,
सर्व्वजन्तुहृदयस्तंभनं कुरु कुरु स्वाहा।

पहिले तो श्मशानमें बैठ, दूसरेकी दृष्टिसे छिप नित्य रात्रि के समय यह मंत्र जपै। दश लाख मंत्र समाप्त होने पर मंत्रसिद्धि होता है। फिर यदि कभी सिंह, व्याघ्र, रीछ, गीदड, कुत्ता, सर्प वा अन्य कोई जन्तु आक्रमण करनेमें उद्यत हो तो इस मंत्रको एकसौ आठ बार पढ़ते ही वह जन्तु पीछे को पैर धरता हुआ भाग जायगा ।।

नारीसौभाग्यकरण

कृष्णां चतुर्द्दशीं प्राप्य पुनरन्यां चतुर्द्दशीम्।
प्रत्यहं प्रजपेन्मंत्रं नारी सहस्रसंख्यया ।।
आधयो व्याधयस्तस्य नश्यन्ति नात्र संशयः।

मंत्रस्तु—ॐ ह्रीं कपालिनि कुलकुण्डलिनि
मे सिद्धिं देहि भाग्यं देहि देहि स्वाहा।

कृष्ण चौदशसे आरंभ करके उसके आगेकी कृष्णचौदशतक नित्य एक हजार "ॐ ह्रीं०" इत्यादि मंत्र जपै। इस प्रकार करनेसे

उस स्त्रीके देहमें आधिव्याधि आक्रमण नहीं कर सकती और विशेषकर वह पतिपुत्रवती एवं चिरसौभाग्यवती होती है ।।

आपद निस्तारण

मार्गशीर्षे तु पूर्णायां शिखिमूलं समुद्धरेत् ।
बाहौ शिरसि वा धार्य्यं विवादे विजयो भवेत् ।।

अगहन मासकी पूर्णिमाको अपामार्ग (चिरचिरे) की जड उखाडकर बाहुमें अथवा मस्तकमें धारण करै तो मुकदमेमें तथा विवादमें जय होती है ।।

इच्छानुसार देहपरिवर्त्तन

रात्रौ कृष्णचतुर्द्दश्यां मयूरास्ये विनिक्षिपेत् ।
भृङ्गीबीजं मृदं कृष्णां कृष्णभूमौ निधापयेत् ।।
तज्जातभृंगी सग्राह्य अर्च्चयेद्रक्तपुष्पकैः ।
तत्पुष्पकर्णः पुरुषो मयूरो दृश्यते जनैः ।।

कृष्णपक्षीय चौदशकी रात्रिमें एक मोरका मस्तक लाकर उसमें भृंगराज (भांगरे) के बीज और काली मिट्टी एकत्र स्थापन कर काली मिट्टीसें गाड़ दे। जब इस बीजसे वृक्ष उत्पन्न होकर पुष्प प्रस्फुटित हो। (फूल निकले) तो रक्त पुष्पोंसे उस वृक्षकी पूजा करके एक पुष्प ग्रहण करै। यह पुष्प कानपर रखनेसे वह मयूररूपी दीखता है ।।

तद्योगे कृष्णमार्ज्जारमुखे चैरण्डबीजकम् ।
तज्जातैरण्डबीजानामेकं क्षेत्रे निधापयेत् ।
तं प्रपश्यन्ति मार्ज्जारं मनुष्या नात्र संशयः ।।

कृष्णपक्षीय चौदशकी रात्रिमें काली बिल्लीके मुखमें एरण्डबीज काली मट्टीके सहित बोकर मट्टीमें गाड दे। जब इस बीजसे वृक्ष उत्पन्न होकर उसमें फल लगै तो उसका एक फल मुखमें धारण करनेसे वह मनुष्योंको बिल्लीके रूपमें दीखता है।

शृगालश्वानमेषाजवदने वापयेत् पृथक् ।
मयूरास्ये यथा भृंगी जाता सिद्धिश्च तादृशी ।।

शृगाल, कुक्कुर, मेष और बकरी इन सब जीवोंका मस्तक लाकर पृथक् पृथक् स्थानमें भांगरेके बीज और काली मिट्टीके सहित गाड दे; जब इन् सब बीजोंसे वृक्ष उत्पन्न होकर फल लगें तब उन फलोंको मुखमें धारण करनेसे वह उक्त शृगालादि जीवोंके समान मनुष्योंको दिखाई देता है ।

मृता च श्वपची नारी तस्या योनौ तु खादिरम् ।
कीलकं निक्षिपेत् पश्चाद्दग्ध्वा भस्म समुद्धरेत् ।
तेनैव तिलकं कृत्वा श्वपचीरूपधृग् भवेत् ।।

मरी हुई व्याधकी स्त्रीके मूत्रस्थानमें एक टुकडा खैरके काष्ठका प्रविष्ट करै, अनन्तर यह काष्ठका टुकडा लाकर उसको दग्ध करै, फिर इसकी भस्मका कपालमें तिलक करनेसे वह व्याधरूपी दीखता है।

शिग्रुबीजोत्थितं तैलं पारावतपुरीषकम् ।
वराहस्य वसायुक्तं शिखिमूलं समं समम् ।
ललाटे तिलकं तेन यः करोति स वै जनः ।।
पञ्चास्यो दृश्यते लोकैर्मासार्धं च सदाशिवः ।

सैंजनेके बीजोंका तेल, जंगली कबूतरकी विष्ठा, शूकरकी चरबी और चिरचिरेकी जड, यह सब द्रव्य बरावर ले एकत्र पीसकर ललाटमें तिलक करै । जो पुरुष इस प्रकार तिलक करता है वह साक्षात् श्रीमहादेवजीके समान पांच मुखयुक्त दीखता है ।

सद्योहतस्य वीरस्य ग्राह्यं चौरस्य वा शिरः ।
तद्वक्त्रे कृष्णधत्तूरबीजं वाप्यं समृत्तिकम् ।।
रात्रौ कृष्णचतुर्दश्यामाषाढे भैरवं यजेत् ।

नानाविधोपहारेण पुष्पधूपाक्षतादिभिः ।।
शिरः खनेत् कृष्णभूमौ मुक्तोच्छिष्टेन सेचयेत् ।
दीपं रात्रौ सदा दद्यात् सूत्रवर्त्याज्यसंयुतम् ।।
सफलस्तु भवेद्यावत्तावद्रक्षेच्च पूजयेत् ।
ग्राह्यं कृष्णचतुर्दश्यां बलिं दद्याच्च कुक्कुटम् ।।
पञ्चाङ्गं पेषयेत्तस्य वटिकां कारयेत् दृढाम् ।
ललाटे तिलकं कुर्यात् स नरो दृश्यते जनैः ।।
तादृशस्तु सहस्राक्षरूपो नैवात्र संशयः ।।

सद्योहत (तत्काल मरे हुए) किसी वीर पुरुष का अथवा चोरका मस्तक लाकर उसके मुखमें काले धतूरेके बीज मिट्टीके सहित बोवे। इसके पीछे आषाढके महीनेकी कृष्णपक्षीय चतुर्दशीकी रात्रिमें पुष्प, धूप और अक्षतादि अनेक प्रकारके उपहारोंसे भैरव देवकी पूजा करके काली मिट्टीमें वह मस्तक गाड दे। फिर भोजन करके कुल्लेके जूठे जल द्वारा सेचन कर रात्रिमें घृतका दीपक दे। इस प्रकार जबतक उस बीजसे वृक्ष उत्पन्न होकर फल उत्पन्न न हो तबतक इस स्थानमें दीपदान और पूजा करै। इसके उपरान्त कृष्णपक्षीय चौदशकी रात्रिमें भैरवकी पूजा और कुक्कुट बलि प्रदान करके इस वृक्षका पञ्चांग अर्थात् फल, मूल, पत्र, पुष्प और छाल ले एकत्र पीस दृढ वटिका (गोलीसी) करैं, इस गोलीको घिसकर ललाटमें तिलक करनेसे वह साक्षात् इन्द्रके समान सहस्रलोचन दिखाई देता है ।।

द्रव्यशोधन

ओं ह्रीं त्रिपुटि त्रिपुटि कठ कठ आभिचारिकदोषं कीटपतङ्गादिस्पृष्टदोषं रिप्वादिदूषितं हन हन नाशय नाशय शोषय शोषय हुं फट् स्वाहा ।

यदि कोई द्रव्य मंत्रबलसे, मंद साधककी कुक्रियासे, विषादि मंद

द्रव्यके स्पर्शसे अथवा कीट पतंगादिके संसर्गसे या अन्य किसी प्रकारसे अशुद्ध होकर व्यवहार करनेके योग्य न रहा हो तो इस मंत्रके द्वारा एकसौ आठ वार मंत्रित कर लेनेसे शुद्ध होता है ।।

द्रव्य विनाशन

गृह्णीयात् कदलीमूलं पुष्यार्कं भाद्रमासि च ।
सप्ताभिमन्त्रितं देवि निक्षिपेत् रजनीमुखे ।।
सप्ताहे शस्यक्षेत्राणां शस्यं वै नस्यति ध्रुवम् ।।
गोमहिषीप्रभृतीनां क्षीरं नश्यति निश्चितम् ।
वृक्षे क्षिप्तं महेशानि शुष्यति नात्र संशयः ।।
मंत्रस्तु–द्रां द्रीं शोषय शोषय मारय मारय क्लीं फट् ह्लीं द्रूं सः सः

भाद्रमासके रविवारको पुष्य नक्षत्रमें केलेकी जड लाकर 'द्रां द्रीं०' इत्यादि मंत्रसे सात वार अभिमंत्रित कर संध्याके समय धान्यके खेतमें डालनेसे एक सप्ताहमें शस्य नष्ट हो जाता है इसमें संदेह नहीं । गोमहिषीके शरीर पर डालनेसे दूध नष्ट होता है । वृक्षादिके ऊपर डालनेसे वृक्षादि सूख जाते हैं ।

बाणसाधन

आः ह्लीं ठं ठं फुः ।

थोडीसी धूरि वा सरसों हाथमें ले उक्त मंत्रसे सात वार अभिमंत्रित कर जिसके ऊपर डाली जाय वह विलक्षण यंत्रणा पाकर स्तम्भित हो जायगा ।।

उसका प्रतीकार

ॐ सर्वनिकृन्तनि महाजम्भले शान्ति कुरु कुरु स्वाहा ।
अष्टोत्तरशताभिमंत्रितेन प्रशमनम् ।

इस मंत्रके एकसौ आठ वार पढनेपर पूर्वोक्त दोषकी शांति होती है और वह पुरुष स्वस्थ होता है ।।

नष्टद्रव्यका लाभ

वह्निः कोषातकी वज्री श्वेतार्कगिरिकर्णिका ।
वचा पाठा च निर्गुण्ठी कटुतुम्ब्याश्च मूलकम् ।।
निम्बकेशरबीजानि गोमूत्रैः पेषयेच्छनैः ।
अनेन पादलेपेन नष्टं नेत्रगतं भवेत ।।

वह्नि (चीता) कोषांतकी (झिमनीलता), वज्री (हरशंकरी), श्वेत आँक, अपराजिता, वच, पाठा, निर्गुण्डी और कडवी तुंबीकी जड (इन सब वृक्षोंकी जड) और निम्ब व नागकेशरके बीज यह सब द्रव्य एकत्र कर गोमूत्रके संग पीसे। फिर इस पिसे हुए द्रव्य द्वारा पैरमें लेप करनेसे नष्ट द्रव्य जिस स्थानमें होगा दीख जायगा ।।

गुरु दर्शन

भौमामायां तिथौ रात्रौ गत्वा श्मशानभूमिषु ।
अयुतं प्रजपेत् साधुर्गुरुपादपरायणः ।
जपान्ते ध्यानयोगेन प्राप्नोति गुरुदर्शनम् ।।
मंत्रस्तु–ह्रीं हुं गुरो प्रसीद ह्रीं ओं ।

मंगलवार अमावस्या तिथिमें रात्रिके समय अकेला श्मशानमें जाके गुरुके चरण कमलोंकी चिन्ता करता हुआ 'ह्रीं हुं' इत्यादि मंत्र अयुत संख्यक १०००० जपे। गुरु बहुत दिनसे लोकान्तरित होने पर भी जपके अन्त समय ध्यान योगमें साधकको दर्शन देंगे ।।

त्रिकालदर्शन

रात्रौ पञ्चवटीमूले पञ्चमुण्डासने शुभे ।
उपविश्य जपेन्मन्त्री त्रिपक्षं यतमानसः ।।
यदि विघ्ना न जायन्ते यदि नो दृश्यते जनैः ।
तदा सिद्धिर्भवेद्देवि त्रिकालतत्त्वविद्भवेत् ।।
मंत्रस्तु–ह्रीं ह्रीं द्रूं सः ।

रात्रिके समय पंचवटीकी जड़पर (जहां पांच वट हों) पंचमुंड वेदीमें बैठकर जप करै। तीन पक्ष संयत चित्तसे जप करना चाहिये। यदि इस बीचमें कोई विघ्न उपस्थित न हो और कोई जप करता न देखे तो सिद्धि लाभ होती है। वह साधक भूत, भविष्यत्, वर्त्तमान् त्रिकालज्ञ, होता है। जपका मन्त्र ऊपर लिखा है।।

तिर्य्यक्शब्दज्ञान

श्मशाने प्रजपेन्मंत्री प्रत्यहं लक्षमानतः।
समारभ्य प्रतिपदि अमावस्यावसानकम्।
ततः सिद्धिर्भवेद्देवि तिर्यक्शब्दविचारवित्।
मंत्रस्तु—क्रों क्रों रूं म्लुं हुः।

पड़वासे अमावस्यातक नित्य श्मशानमें एक लक्ष उपरोक्त मंत्रका जप करै। इस प्रकार करनेसे साधक पक्षी इत्यादि तिर्यक् जीवोंका शब्द समझ सकता है।।

शल्योद्धार

घरमें मिट्टीके भीतर तो मृतक अस्थि, गौका कंकाल, शवके केश, शवांगार इत्यादि अनेक प्रकारके द्रव्य रहते हैं उनका ही नाम शल्य है। इस शल्य समूहको न निकालनेसे घरमें अमंगल होता है। इनको निकालना हो तो यथाविधि वास्तुपूजा करके रात्रिके समय एक ताम्र कुण्डमें एक वार्णलिंग शिव रख, उस ताम्रकुण्डमें बिल्वपत्रसे 'ह्लीं ह्लीं क्रीं क्रीं गच्छ गच्छ शीघ्रं गच्छ शल्यमुत्पाटय ह्लीं ह्लीं स्वाहा यह मंत्र लिखै। ताम्रकुण्ड आतप तण्डुलके ऊपर रखे इस प्रकार करनेसे प्रात:कालमें दिखाई देगा कि, ताम्रकुण्डके सहित वार्णलिंग स्थानान्तरित होकर जिस स्थानमें शल्य है उसी स्थानमें उपस्थित हुआ है। तब खोदकर शल्य निकाल ले और फिर रात्रिमें ऐसा ही करै। इसी प्रकार जितने शल्य हों उन सबको निकाले। जब वार्णलिंग फिर स्थाना-

न्वरित न हो तब समझना चाहिये कि अब शल्य नहीं है। विधि यह है कि उक्त मंत्र गुरुके मुखसे यथावत् ग्रहण करके एक वर्ष तक एकान्तमें बैठकर नित्य सहस्रसंख्यक जप द्वारा पहिले सिद्ध कर लेना चाहिये ।।

देवी-देवताके बीजमंत्र

(भुवनेश्वरीका मंत्र) आं ह्रीं क्रौं।

(अन्नपूर्णाका मंत्र)

ह्रीं नमो भगवति माहेश्वरि अन्नपूर्णे स्वाहा।

(त्रिपुटाका मंत्र) श्रीं ह्रीं क्लीं।

(त्वरिता मंत्र)

ओं ह्रीं हुं खे च छे क्ष स्त्री हुं क्षे ह्रीं फट्।

(नित्या मंत्र)

ऐं क्लीं नित्यक्लिन्ने मदद्रवे स्वाहा।

(दुर्गामंत्र)–ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः।

(महिषमर्द्दिनीमंत्र)–महिषमर्द्दिनि स्वाहा।

(जयदुर्गामंत्र)–ॐ दुर्गे दुर्गे रक्षिणि स्वाहा।

(शूलिनी मंत्र)

ज्वल ज्वल शूलिनी दुष्ट ग्रह हुं फट् स्वाहा।

(वागीश्वरी मंत्र)–वद वद वाग्वादिनि स्वाहा।

(गणेश मंत्र)–गं।

(हरिद्रा गणेशका मंत्र)–ग्लं।

(लक्ष्मी मंत्र)–श्रीं।

(सूर्यमंत्र)–ॐ घृणिसूर्य आदित्य।

(विष्णु मंत्र)

१ केशवाय नमः (२) नारायणाय नमः (३) माधवाय नमः।

कुलकुण्डलिनी सिद्धि

गुरुदेवं प्रपूज्याथ श्मशाने प्रान्तरे तथा ।
वर्षत्रयं जपेद्धीमान् कुण्डलीगतमानसः ।।
सिद्धिर्भवति देवेशि कुण्डलीतत्त्वविद् भवेत् ।।

मंत्रस्तु–"ह्लं ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लैं ह्लौं ह्लः कुण्डलिनि जगन्मातः सिद्धिं देहि देहि स्वाहा ।।"

प्रत्यहमयुतं जपेत् । इति ।।

गुरुदेवकी पूजा करके आचमनपूर्वक श्मशानमें, वा प्रान्तरमें जाके तीन वर्ष तक प्रतिदिन 'ह्लं ह्लां०' इत्यादि मंत्र दश हजार जपै । इस प्रकार करनेसे कुण्डलिनी सिद्धि होती है । कुण्डलिनी सिद्धि होनेपर वह साधक सहजमें ही षट्चक्र भेदका ज्ञाता हो जाता है ।

इति श्रीमुरादाबादनिवासी कात्यायनगोत्रोत्पन्नश्रीसुखानन्द-
मिश्रात्मज-पंडितकन्हैयालालमिश्रकृत भाषाटीकासहित
धन्वन्तरितंत्रशिक्षा संपूर्ण ।
समाप्तोऽयं ग्रंथः ।

हमारे प्रकाशनों की अधिक जानकारी व खरीद के लिये हमारे निजी स्थान :

खेमराज श्रीकृष्णदास
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
९१/१०९, खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
७ वी खेतवाडी बॅक रोड कार्नर,
मुंबई - ४०० ००४.
दूरभाष/फैक्स-०२२-२३८५७४५६.

खेमराज श्रीकृष्णदास
६६, हडपसर इण्डस्ट्रियल इस्टेट,
पुणे - ४११ ०१३.

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस व बुक डिपो
श्रीलक्ष्मीवेंकटेश्वर प्रेस बिल्डींग,
जूना छापाखाना गली, अहिल्याबाई चौक,
कल्याण, जि. ठाणे, महाराष्ट्र - ४२१ ३०१
दूरभाष - ०२५१-२२०९०६१.

खेमराज श्रीकृष्णदास
चौक, वाराणसी (उ.प्र.) २२१ ००१.
दूरभाष - ०५४२-२४२००७८

KHEMRAJ SHRIKRISHNADASS